प्रवचन-क्रम

पहला प्रवचन

दूसरों के विचार और ज्ञान से मुक्ति

मेरे प्रिय आत्मन्!

एक छोटी सी घटना से मैं अपनी बात शुरू करना चाहूंगा।

एक अंधेरी रात में जब कि गांव के सारे लोग सोए थे, अचानक एक झोपड़े से जोर से आवाज उठने लगीः मेरे घर में आग लगी है, मैं आग में जल रही हूं। कोई स्त्री जोर से रो रही और चिल्ला रही थी। सोया हुआ गांव जाग गया, सोए हुए लोग उठे और उस झोपड़े की तरफ भागे। करीब-करीब सारा गांव उठ गया और झोपड़े के पास इकट्ठा हो गया। लेकिन आग तो दूर उस झोपड़े में एक दीये की रोशनी भी नहीं थी। घना अंधकार था। लेकिन भीतर से कोई रोए और चिल्लाए जा रहा थाः मेरे घर में आग लगी है, मैं जल रही हूं।

लोगों ने द्वार खटखटाए, लोग द्वार खोल कर भीतर गए, कोई पास से लालटेन ढूंढ लाया, कोई बाल्टियों में पानी लेकर आ गए। भीतर पाया उस बूढ़ी औरत को जो चिल्लाती थी, उससे पूछा, कहां आग लगी है? हम बुझा दें, आग तो कहीं दिखाई नहीं पड़ती? वह बूढ़ी औरत हंसने लगी और उसने कहाः आग मेरे बाहर होती तो तुम बुझा भी सकते थे, आग मेरे भीतर लगी है।

समझा होगा उस गांव के लोगों ने वह बूढ़ी औरत पागल है। वे हंसते हुए वापस लौट गए। नींद खराब किए जाने के लिए गालियां देते हुए वापस लौट गए। जाकर सो गए।

उस बूढ़ी औरत ने कहाः आग मेरे भीतर लगी है। बाहर की बाल्टियों और पानी से मेरी आग न बुझ सकेगी। लेकिन उन लोगों ने समझा कि बूढ़ी औरत पागल है।

इस घटना से इसलिए शुरू करना चाहता हूं कि करीब-करीब सभी मनुष्यों के जीवन में एक भीतरी आग है--जो पीड़ा देती है, दुख देती है। और करीब-करीब सभी मनुष्य उस आग को बुझाने की कोशिश करते हैं। लेकिन वह कोशिश व्यर्थ हो जाती है। क्योंकि जिस पानी से वे बुझाना चाहते हैं वह पानी बाहर होता है। पानी बाहर है, आग भीतर; पानी इकट्ठा होता जाता है, आग बुझती नहीं। और आखिर में सारा जीवन जल कर राख हो जाता है। हमारे प्रयत्न व्यर्थ हो जाते हैं, हमारी दौड़ व्यर्थ हो जाती है, हमारा श्रम निरर्थक हो जाता है और अंततः हम अपने को वहां पहुंचा हुआ पाते हैं जहां हममें से कोई भी जाने को राजी नहीं है।

जीवन भर की दौड़ का परिणाम मौत के अतिरिक्त और क्या होता है? जीवन भर चलने के बाद मौत के सिवाय हम और कहां पहुंचते हैं? और अगर मौत ही मंजिल है, और अगर मौत ही पहुंचना है, तो जीवन का क्या अर्थ है फिर? जीवन का क्या अभिप्राय है? दुख से बचना चाहते हैं, पीड़ा से बचना चाहते हैं, अशांति से बचना चाहते हैं, लेकिन पहुंच कहां पाते हैं। आनंद में पहुंचते हैं? अमृत में पहुंचते हैं? नहीं, पहुंचते हैं मृत्यु में, पहुंचते हैं अंधकार में, पहुंचते हैं विनाश में। और अगर जीवन का अंतिम फल मृत्यु होती हो, तो क्या यह पूरा जीवन ही मृत्यु के अंधकार में घिरा हुआ प्रतीत नहीं होगा? और जिससे हम बचना चाहते हैं अगर वही अंत में जीवन में उपलब्ध होता हो, तो क्या ऐसे जीवन को हम सफल जीवन कहेंगे? लेकिन हम सारे लोग वहीं पहुंचते हैं और हम जितना बचना चाहते हैं उतना ही वहीं पहुंचते हैं, जिससे हम बचना चाहते हैं वहीं पहुंच जाते हैं।

शायद उस बूढ़ी औरत को जो दिखाई पड़ा वह हमें दिखाई नहीं पड़ता, इसलिए यह दुर्घटना, इसलिए यह दुर्भाग्य घटित होता है। भीतर हमारे आग होती है, बुझाने की कोशिश हम बाहर करते हैं। आग नहीं बुझेगी, आग का बुझना असंभव है। भीतर ही अगर पानी भी खोजा जा सके, तो शायद आग बुझ सकती है।

सिकंदर मरा, जिस दिन मरा उस दिन जिस गांव में जिस राजधानी पर उसकी अरथी निकली, लाखों लोग देखने वाले इकट्ठे थे। एक अजीब बात सारे लोगों ने देखी जो कभी नहीं देखी गई थी, सिकंदर के दोनों हाथ

अरथी के बाहर लटके हुए थे। हाथ तो अरथी के भीतर होते हैं, क्या कोई भूल हो गई थी? सिकंदर के साथ भूल नहीं हो सकती थी। हजारों लोग अरथी को लेकर बाहर आए थे, किसी को तो दिखाई पड़ ही जाता, अंधे नहीं थे लोग। रास्ते पर गांव में भीड़ विचार में पड़ गई, सिकंदर के हाथ अरथी के बाहर क्यों हैं?

एक ही प्रश्न उस दिन उस राजधानी में गूंजने लगाः सिकंदर के हाथ अरथी के बाहर क्यों हैं? सांझ होते-होते पता चला सिकंदर ने मरते वक्त कहा थाः मेरे हाथ अरथी के बाहर रखना। लोगों ने पूछाः क्यों? उसने कहाः ताकि लोग देख सकें कि सिकंदर के हाथ भी मरते वक्त खाली हैं। उसने कहाः ताकि लोग देख सकें कि मरते वक्त सिकंदर के हाथ भी खाली हैं।

सभी के हाथ खाली होते हैं, लेकिन सभी के हाथ अरथियों के बाहर नहीं होते; हम उन्हें अरथियों में छिपा देते हैं भलीभांति ताकि लोग न देख सकें कि हाथ खाली हैं। लेकिन इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि हाथ अरथी में छिपे हों कि बाहर निकले हों, हाथ खाली ही होते हैं।

क्यों ये हाथ खाली जाते हैं जीवन भर की दौड़ के बाद? जीवन भर का श्रम व्यर्थ क्यों हो जाता है? शायद कोई भूल है, शायद कोई बुनियादी भूल है, शायद हम वहां खोजते हैं संपदा को जहां संपदा नहीं है। शायद हम खोजते हैं वहां जीवन को जहां जीवन नहीं है। शायद हम खोजते हैं शांति को वहां जहां शांति नहीं है। और तब हाथ खाली न होंगे तो क्या होगा? और इसीलिए जिस अंधकार से और पीड़ा से बचने को हम भागते हैं अंत में हम पाते हैं कि वहीं पहुंच गए हैं।

एक और छोटी कहानी, मेरी बात समझ में आ सके, फिर मुझे जो आज की संध्या कहना है वह मैं आपसे कहूं।

दमिश्क में एक बादशाह हुआ। एक रात उसने स्वप्न देखा, कोई अंधेरी छाया पीछे खड़ी है उसके कंधे पर हाथ रखे। उसने पूछा, तुम कौन हो? उस छाया ने कहाः मैं हूं तुम्हारी मौत, और आज सांझ सूरज ढलने के पहले ठीक जगह पर पहुंच जाना और ठीक जगह पर मिल जाना। देखो, कहीं ऐसा न हो कि भूल जाओ, कहीं ऐसा न हो कि ठीक जगह पर न पहुंच पाओ। ठीक जगह पर मिल जाना, इसी बात की चेतावनी देने मैं सपने में आई हूं।

उस राजा की नींद खुल गई। मौत के भय से किसकी नींद न खुल जाएगी! लेकिन हममें से बहुत ऐसे हैं जो मौत सामने खड़ी हो तो भी सोए रह सकते हैं। ऐसे तो मौत सामने खड़ी है और हम सोए हैं। लेकिन उस राजा की नींद खुल गई, वह सपना टूट गया। आधी रात थी। उसने अपने राजधानी के विचारशील वृद्ध लोगों को उसी वक्त बुला भेजा--ज्योतिषियों को, दार्शनिकों को बुला भेजा और उनसे पूछा कि इस स्वप्न का क्या अर्थ है? देखा है मैंने स्वप्न, अंधेरी कोई छाया मेरे पीछे कंधे पर हाथ रखे खड़ी है, और मैंने पूछा, कौन हो, तो उसने कहा, मृत्यु हूं तुम्हारी और आज सांझ सूरज ढलने के पहले ठीक जगह पर मिल जाना, देखो, कहीं भूल-चूक न हो जाए, इसीलिए चेतावनी देने आई हूं।

वे गांव के पंडित और विचारशील लोग अपनी पोथियों को खोल कर विचार करने में लग गए कि स्वप्न का क्या अर्थ हो सकता है? उनकी पोथियां बहुत बड़ी थीं, जैसे कि पोथियां हमेशा बड़ी होती हैं। वे ग्रंथ उनके बहुत बड़े थे। और उन ग्रंथों की भाषा बहुत उलझी हुई थी। और उन ग्रंथों में से अर्थ निकालना बहुत दुरूह था। और अर्थ भी निकल आए, तो उन सब वृद्धजनों का सहमत हो जाना और भी कठिन था। और सांझ बहुत करीब थी। और सूरज बहुत जल्दी ढल जाएगा और विराम नहीं लेगा और विश्राम नहीं करेगा और जल्दी ही सांझ आ जाएगी। और किताबों में खोजने वाले वे विचारशील लोग शायद ही किसी नतीजे पर पहुंच पाएं। उस राजा के वृद्ध वजीर ने कहाः इन्हें खोजने दो और सोचने दो। सांझ बहुत जल्दी आ जाएगी, और इनसे कोई समाधान मिलना कठिन है। क्योंकि पांच हजार साल हो गए, पंडित सोच रहे हैं और आज तक किसी समाधान पर नहीं पहुंचे। और हजारों ग्रंथ लिखे गए हैं और हजारों दर्शन, हजारों फिलसफा पेश किए गए हैं, लेकिन कोई सहमति नहीं हो सकी। पंडित आपस में सहमत नहीं हैं, इसलिए इनके चक्कर में मत पड़ो।

उस राजा ने पूछाः फिर मैं क्या करूं? उसके वजीर ने कहाः अच्छा यही होगा कि तेज से तेज घोड़ा लेकर तुम इस महल से जितने दूर निकल सको निकल जाओ। सांझ करीब है और सूरज जल्दी ढल जाएगा। और मौत, मौत निश्चित वक्त पर आ सकती है, तो तुम निकल जाओ दूर जितने दूर जा सको इस महल से।

ठीक थी यह बात। विचारकों पर निर्भर होना खतरनाक था। विचारक कभी किसी निष्कर्ष पर न पहुंचे हैं और न पहुंचेंगे। राजा ने, सुबह होती थी, अभी अंधेरा था, तेज से तेज घोड़ा बुलवाया, उस घोड़े पर बैठा और उसने भागना शुरू किया। उसने अनेक बार अपनी पत्नी से कहा था तेरे बिना एक क्षण भी जी नहीं सकता हूं, लेकिन उस सुबह पत्नी की याद उसे भूल गई। मौत के क्षण में किसे किसकी याद रह जाती है! उसने अपने मित्रों से कहा था, तुम्हारे बिना जीवन व्यर्थ है, लेकिन उन मित्रों से विदा लेना उस दिन वह भूल गया। मौत के वक्त कौन किससे विदा लेता है! उसने अपने तेज घोड़े को भगाना शुरू किया। उसके पास जमीन का तेज से तेज घोड़ा था। उस दिन न तो उसे तपती हुई दोपहरी पता चली, सूरज आकाश में जलता था, उसे खयाल भी न आया। पसीना धारों से बहता था, उसे पता भी न चला। मौत सामने खड़ी हो तो क्या पता चलता है! उस दिन वह न तो रुका छाया में विश्राम करने, न उसे प्यास लगी, न उसे भूख लगी। एक क्षण को भी रुकना खतरनाक था। एक क्षण भी खोना खतरनाक था। जितना दूर बन सके निकल जाना जरूरी था। वह भागता रहा, भागता रहा, भागता रहा, और सूरज ढलने के पहले सैकड़ों मील दूर निकल गया। वह खुश था। जैसे-जैसे सूरज ढलने लगा, वह प्रसन्न था, काफी दूर निकल आया था। और सूरज जब ढलता था तो उसने एक गांव के बाहर एक बगीचे में अपने घोड़े को बांधा, रात विश्राम की तैयारी की। वह काफी दूर निकल आया था। और अब कोई भी भय न था। सूरज की आखिरी किरणें डूबने लगीं। वह घोड़ा बांध ही रहा था कि उसे लगा कोई कंधे पर हाथ रखे हुए खड़ा है। उसने पीछे लौट कर देखा, वही अंधेरी छाया खड़ी थी। उसने पूछाः तुम कौन हो? उसने कहाः तुम पहचाने नहीं? रात सपने में भी मैं आई थी, मैं मौत हूं। और मैं तुम्हारे घोड़े को धन्यवाद देती हूं, मैं बहुत चिंतित थी, इसी जगह पर पहुंच कर तुम्हें मरना था। और मैं चिंतित थी कि तुम पहुंच सकोगे या नहीं पहुंच सकोगे? घोड़ा बहुत तेज है तुम्हारा, बहुत लाजवाब है। सूरज ढलने के पहले उसने तुम्हें ठीक जगह पहुंचा दिया। मैं तुम्हारे घोड़े को धन्यवाद देती हूं।

यह आदमी दिन भर भागा मौत से और सांझ मौत के मुंह में पहुंच गया। क्या आप किसी ऐसे आदमी को जानते हैं जो जिंदगी भर भागा हो और मौत के मुंह में न पहुंचा हो? शायद ही ऐसे किसी आदमी को आप जानते हों। क्योंकि बड़े मजे और रहस्य की बात यह है कि जो दौड़ता है वह मौत के मुंह में पहुंच ही जाता है। जो ठहरता है वह मौत से बच भी सकता है। मैं फिर से यह दोहराऊं क्योंकि यह बात तीन दिनों में आपसे मुझे कहनी है, जो दौड़ता है वह मौत के मुंह में पहुंच ही जाता है, लेकिन जो ठहर जाता है वह मौत से मुक्त हो जाता है, वह मौत से बच जाता है। यह बड़ी उलटी बात है। क्योंकि हम तो यही जानते हैं, जो दौड़ता है वह निकल जाता है। हम तो यही जानते हैं, जो दौड़ेगा वही बचेगा। लेकिन आज तक किसी दौड़ते आदमी को बचते हुए देखा है? आज तक किसी दौड़ते आदमी को मौत से बचते देखा है? नहीं, आज तक कोई दौड़ता आदमी मौत से नहीं बचा। क्योंकि दौड़ने वाला चित्त इतनी उलझन में होता है कि वह उसे जान नहीं पाता जो जीवन है। दौड़ने वाला चित्त इतना अशांत होता है कि वह झांक ही नहीं पाता स्वयं के भीतर जहां कि वह है जो कि अमृत है। दौड़ने वाला दौड़ता है, दौड़ता है, और जितना दौड़ता है उतना मौत के निकट पहुंच जाता है। घोड़ा जिनके पास तेज है, मौत एक दिन धन्यवाद देगी उनके घोड़े को, कहेगी कि तुम्हारा तेज था घोड़ा और ठीक वक्त पर ले आया। लेकिन जिंदगी में तो ऐसा मालूम पड़ता है कि जिनके पास जितना तेज घोड़ा है वे उतने ही आगे हैं। जिंदगी में तो ऐसा मालूम पड़ता है कि जो जितनी तेजी से दौड़ सकता है वह शायद उतना ही जीवन को पा लेगा। लेकिन नहीं, जीवन के रास्ते बहुत अनूठे हैं, बहुत रहस्यपूर्ण हैं।

लाओत्सु हुआ चीन में कोई ढाई हजार वर्ष पहले। उसने कहा, अगर पाना है तो ठहर जाओ, अगर खोना है तो दौड़ो। बड़ी अजीब बात कही। उसने कहाः अगर पाना है तो ठहर जाओ और अगर खोना है तो दौड़ो।

लेकिन हम सारे लोग तो दौड़ के अतिरिक्त और कुछ जानते नहीं हैं। धन के लिए दौड़ते हैं, यश के लिए दौड़ते हैं, पद के लिए दौड़ते हैं, प्रतिष्ठा के लिए दौड़ते हैं। और जब इन सबसे ऊब जाते हैं और इन सब में कोई रस नहीं पाते, तो फिर धर्म के लिए दौड़ते हैं, आत्मा के लिए दौड़ते हैं, परमात्मा के लिए दौड़ते हैं, मोक्ष के लिए दौड़ते हैं। लेकिन दौड़ना जारी रखते हैं। और स्मरण रहे, कि चाहे कोई धन के लिए दौड़े और चाहे धर्म के लिए, दौड़ दोनों हालतों में खतरनाक है। क्योंकि जो दौड़ता है वह कभी भी पाता नहीं। धन के लिए दौड़ने से भी कोई फर्क नहीं पड़ता और धर्म के लिए दौड़ने से भी कोई फर्क नहीं पड़ता। जो चित्त दौड़ता है वह अशांत है। लेकिन हम दो ही तरह के लोगों को जानते हैं। संसार की दौड़ है और परमात्मा की दौड़ है। लेकिन आपसे कहना चाहूंगा कि परमात्मा को दौड़ कर कोई कभी नहीं पा सका है। परमात्मा को तो वे लोग पाने में समर्थ होते हैं जो दौड़ छोड़ देते हैं। इसलिए परमात्मा को पाने की कोई दौड़ नहीं हो सकती। धन की दौड़ हो सकती है, धर्म की कोई दौड़ नहीं हो सकती। धर्म तो ठहर जाना है, दौड़ का उससे क्या संबंध? लेकिन जो लोग संसार में दौड़ने के आदी हैं, जब वे संसार से ऊब जाते हैं और पाते हैं कि कुछ भी नहीं मिलता, तब भी वे दौड़ से नहीं ऊबते हैं, संसार से ऊबते हैं, दौड़ जारी रहती है। फिर वे मोक्ष के लिए दौड़ने लगते हैं। वे यहां भवन बना रहे थे, फिर वे स्वर्ग में भवन बनाने लगते हैं। वे यहां धन इकट्ठा कर रहे थे, फिर वे पुण्य इकट्ठा करने लगते हैं, जो कि स्वर्ग के लिए धन है। वे यहां बड़े होना चाहते थे संग्रह और परिग्रह में, फिर वे त्याग में बड़े होना चाहते हैं और संन्यास में। लेकिन बड़े होने का खयाल नहीं छूटता। वे यहां पाना चाहते थे, फिर वे और आगे परलोक में पाना चाहते हैं। लेकिन पाने की दौड़ समाप्त नहीं होती।

धार्मिक आदमी का दौड़ से क्या संबंध? कोई भी संबंध नहीं। लेकिन हम तो संन्यासी को भी दौड़ते देखते हैं। हम तो उसे भी देखते हैं कि वह कुछ पाने के लिए भाग रहा है, भाग रहा है। हम तो उसे भी देखते हैं कि वह छोड़ रहा है, तो इसलिए छोड़ रहा है ताकि कुछ पा सके। उसका छोड़ना भी इनवेस्टमेंट है, उसका त्याग भी किसी चीज को पाने के लिए उपाय है। उसका त्याग भी एक साधन है, जिससे वह आगे कुछ पा लेना चाहता है। वह अगर धन छोड़ रहा है तो इसलिए ताकि धर्म पा सके। लेकिन पाने की दौड़ कायम है। यह जो हमारा पाने के लिए दौड़ने वाला चित्त है, यह कभी भीतर नहीं जा सकता।

इस बात को थोड़ा समझ लेना बहुत उपयोगी है। जब तक मैं कुछ पाना चाहता हूं, तब तक मेरी दृष्टि बाहर रहेगी। जब तक मैं कुछ पाना चाहता हूं, तब तक मेरी आंखें बाहर खोजेंगी। क्योंकि भीतर, भीतर तो जो कुछ भी है वह मिला हुआ है, वहां पाने का सवाल कहां है। आत्मा मिली हुई है, परमात्मा मिला हुआ है। उसे पाने का कोई सवाल नहीं है। मछलियां जैसे सागर में खोजें पानी को, और दौड़ें और दौड़ें और पूछें कि सागर कहां है? और पूछें कि पानी कहां है? वैसे ही वे लोग हैं जो पूछते हों परमात्मा कहां है? आत्मा कहां है? मोक्ष कहां है? हम जहां जी रहे हैं वहीं परमात्मा है। क्योंकि जीवन ही परमात्मा है। जहां से हमारी श्वासें उठती हैं और जहां हमारे प्राण स्पंदित हो रहे हैं वही परमात्मा है, उसके अतिरिक्त और परमात्मा कहां है! लेकिन उसे पाया कैसे जा सकता है? वह तो मिला हुआ है। परमात्मा को पाने में एक ही कठिनाई है कि वह मिला ही हुआ है। इसलिए जो भी उसे खोजने निकल जाता है वह खो देता है। और जो सारी खोज छोड़ कर ठहर जाता है वह उसे पा लेता है।

एक बार ऐसा हुआ, एक राजा का पुराना वजीर मर गया। बड़ा राज्य था और हमेशा उस राज्य में वजीर बड़ी खोज-बीन के बाद रखा जाता था। जो देश का सबसे बड़ा विचारशील और चिंतक व्यक्ति होता, जो सबसे बड़ा ज्ञानी होता, उसी को वजीर बनाते थे। वजीर मर गया तो नये वजीर की खोज शुरू हुई। सारे देश में बुद्धिमान आदमी खोजे गए। सारे देश में परीक्षाएं हुईं और अंततः तीन व्यक्ति लाए गए राजधानी में जो कि उस

देश में सबसे ज्यादा बुद्धिमान, सबसे ज्यादा समझदार लोग थे। फिर अंतिम परीक्षा का निर्णय का दिन आ गया, जब कि उन तीन में परीक्षा होगी और अंतिम व्यक्ति चुन लिया जाएगा। बड़ा भारी पद था। आज घोषणा कर दी गई कि कल सुबह परीक्षा होगी। और वे तीनों आदमी महल के एक भवन में ठहरा दिए गए।

बड़ा आश्चर्य तो यह हुआ कि सांझ होते-होते सारे गांव में यह खबर फैल गई कि परीक्षा क्या होनी है। जैसे कि आजकल फैल जाती है, तब भी फैल गई। सांझ होते-होते पता चल गया कि परीक्षा क्या होनी है। सारे गांव में चर्चा शुरू हो गई। एक अजीब परीक्षा राजा लेना चाहता था। उन तीनों व्यक्तियों को कल सुबह भवन के एक बड़े कक्ष में बंद कर दिया जाएगा और भवन के द्वार पर एक ताला लगा दिया जाएगा। वह ताला उस देश के यांत्रिकों, इंजीनियरों ने और गणितज्ञों ने निर्मित किया था। उस ताले में कोई चाबी नहीं लगती थी। उस ताले पर कुछ अंक लिखे हुए थे गणित के और उन अंकों में एक पहेली थी। जो उस अंकों की पहेली को हल कर सकता था, वही ताले को खोल सकता था। बस वह अंकों की पहेली हल करके ठीक बैठ जाती, ताला खुल जाता। वह गणित और यांत्रिक इंजिनियरों ने उस ताले को निर्मित किया था।

सारे गांव में खबर फैल गई कि कल उन तीनों को बंद कर दिया जाएगा और सामने ताला लगा दिया जाएगा जिसकी कोई चाबी नहीं है। तो जो गणित की पहेली को हल कर सकेगा, जो उस ताले पर खुदी हुई है, वह ताले को खोलने में समर्थ हो जाएगा। और जो सबसे पहले द्वार को खोल कर बाहर आ जाएगा वही वजीर बन जाएगा।

सांझ ही यह पता चल गया, उन तीनों लोगों को भी पता चल गया। उनमें से दो भागे हुए बाजार गए और गणित पर तालों के संबंध में जो भी किताबें मिल सकती थीं वे ले आए। उन्होंने रात भर अध्ययन किया। रात भर का मौका था, रात भर की बात थी, फिर जीवन भर के लिए एक बड़ी भारी विजय मिलने को थी। लेकिन उन तीन में से एक बहुत अजीब था। वह न तो कहीं गया, न वह कोई किताब लाया, बल्कि वह सांझ से ही ओढ़ कर सो गया। उन दो ने समझा कि मालूम होता है उसने भय के कारण परीक्षा में न बैठने का निर्णय कर लिया है। या हो सकता है उसे विश्वास न आता हो कि जो खबर उड़ी है वह सच है। लेकिन फिर भी कोई भी मौका खोना ठीक न था। वे दोनों रात भर अध्ययन करते रहे। उन्होंने गणित और तालों के संबंध में जो भी साहित्य था सारा देख डाला।

सुबह होते-होते वे उस जगह पहुंच गए जहां अक्सर परीक्षार्थी पहुंच जाते हैं। उनसे अगर आप पूछते कि दो और दो कितने होते हैं, तो वे घबड़ा कर खड़े रह जाते, उन्हें बताना कठिन हो जाता। रात भर जागे थे और किताबें उनके मन में भर गईं, अब छोटे-छोटे उत्तर देना भी मुश्किल थे। लेकिन एक आदमी रात भर सोया रहा, सुबह उठा और वे तीनों राजमहल पहुंचे। बात सच थी, अफवाह ठीक थी। उन्हें एक कक्ष में बंद कर दिया गया और एक बड़ा ताला उस पर लगा दिया गया और राजा ने उनसे कहा कि गणित की एक पहेली है, इसे जो हल कर सकेगा वह दरवाजा खोल कर बाहर आ जाए। और जो बाहर निकल आएगा, मैं बाहर प्रतीक्षा करता हूं, वही वजीर बन जाएगा जो पहले बाहर आएगा। दरवाजा बंद करके राजा बाहर चला गया।

वे दोनों व्यक्ति जो रात भर पढ़ते रहे थे, अपने वस्त्रों में थोड़ी सी किताबें छिपा कर ले आए थे। आजकल के ही विद्यार्थी लाते हों ऐसा नहीं, यह तो कोई दो हजार वर्ष पुरानी बात है। आदमी हमेशा एक जैसा रहा है, कोई बहुत फर्क नहीं है। तो कोई यह न समझे कि हम बहुत समझदार हो गए हैं और परीक्षाओं में किताबें ले जाते हैं। पहले भी लोग ले जाते रहे हैं। वे ले गए। उन्होंने जैसे ही दरवाजा बंद हुआ अपनी किताबें बाहर निकाल लीं और वह ताले पर लिखे अंकों को कागजों पर लिख कर हल करने में लग गए।

लेकिन वह एक आदमी बहुत अजीब था, वह आंख बंद करके एक कोने में बैठ गया। वे दोनों उस पर हंसे कि मालूम होता है यह पागल है। कुछ करो तभी तो कुछ हो सकेगा। मालूम होता था कि वह घबड़ा गया है और इसलिए अब वह कुछ करने को राजी नहीं है। मालूम होता था उसने तैरना छोड़ दिया, मालूम होता था वह प्रतिस्पर्धा के बाहर हो गया है। लेकिन उसकी आंखें बड़ी शांत थीं, उसका चेहरा बड़ा शांत था। वह उद्विग्न नहीं मालूम पड़ता था। वह शांत बैठा रहा, बैठा रहा। अचानक, अचानक उठ कर खड़ा हुआ, उसे कोई बात दिखाई

पड़ी, वह उठा और उसने जाकर दरवाजे को धीरे से धक्का दिया, दरवाजा खुल गया, दरवाजे में ताला लगाया नहीं गया था, वह बाहर निकल गया।

वे जो किताबों में खोज रहे थे खोजते रहे, उन्हें यह भी पता ही नहीं चला कि तीसरा आदमी बाहर हो गया है। जो लोग किताबों में डूबे रहते हैं वे जिंदगी को देखने से वंचित रह जाते हैं। उन्हें तो तभी पता चला जब राजा उस आदमी को लेकर भीतर आया। और उसने कहा कि बंद करो अपनी किताबें, क्योंकि जिस आदमी को बाहर होना था वह बाहर हो गया। वे तो चौंक कर रह गए। उन्होंने पूछा कि तुम कैसे बाहर हुए? राजा ने कहाः ताला लगाया नहीं गया था, क्योंकि वही ताला खोलने में बहुत कठिन होता है जो लगाया गया न हो। जो लगा हो वह खोला जा सकता है, लेकिन जो न लगा हो उसे खोलना बहुत कठिन हो जाता है। क्योंकि यह खयाल ही पैदा नहीं होता कि हो सकता है ताला न लगा हो। यह आदमी सबसे ज्यादा समझदार है। इसने समझदारी का पहला सबूत दिया। इसने ताले पर लिखे अंकों को हल करने की बजाय सबसे पहले यह देखना चाहा कि ताला लगा भी है या नहीं। वही आदमी सबसे ज्यादा समझदार है जो किसी समस्या को हल करने के पहले यह तो देख ले कि समस्या है भी या नहीं। तो यह आदमी देश का सबसे समझदार आदमी है, हम इसे वजीर बना देते हैं।

यह कहानी बड़ी अजीब है। और यह कहानी बड़ी सच है। और यह कहानी एक आदमी के साथ नहीं, परमात्मा ने करीब-करीब हर आदमी के साथ खेली हुई है। परमात्मा को खोजने में जो लग जाता है वह खो देता है, क्योंकि पहली और खूबी की बात तो यह है कि परमात्मा खोया हुआ नहीं है।

जो उसे खोजने निकल जाता है वह भटक जाता है। पहले तो यह देखना जरूरी है कि ताला लगा भी है या नहीं। लेकिन हम बहुत समझदार हैं--हम या तो धन खोजते हैं, पद और प्रतिष्ठा खोजते हैं और या फिर ऊब कर परेशानी में, बुढ़ापे में, थकी हालत में, निराशा में, असफलता में, विफलता में फिर परमात्मा को खोजने लगते हैं। परमात्मा को कभी नहीं खोजा जा सकता, क्योंकि खोजने वाला आदमी बहुत छोटा है और जिसे खोजना है वह विराट है। छोटा सा आदमी विराट को कैसे खोज सकेगा? तो फिर आदमी जब नहीं खोज पाता है परमात्मा को तो झूठे परमात्मा खुद ही गढ़ लेता है, खुद ही बना लेता है, अपने हाथ से खड़े कर लेता है। जब आदमी असफल हो जाता है और नहीं खोज पाता है तो खुद खड़े कर लेता है।

हमने बहुत से भगवान बना लिए। इसीलिए तो हिंदुओं के भगवान अलग हैं, और मुसलमानों के अलग, और ईसाइयों के अलग, और जैनों के अलग। भगवान भी बहुत प्रकार के हो सकते हैं? परमात्मा भी बहुत प्रकार का हो सकता है? सत्य भी बहुत प्रकार का हो सकता है? लेकिन नहीं, चूंकि आदमी बहुत प्रकार के हैं, इसलिए सत्य को भी उन्होंने बहुत प्रकारों में गढ़ लिया है। और ये गढ़े हुए सत्य, ये होममेड, घर में बनाए गए सत्य झगड़ों का केंद्र हो गए हैं। इतने धर्म हो सकते हैं? इतने मंदिर और मस्जिद हो सकते हैं? नहीं हो सकते। लेकिन आदमी ने उनको गढ़ लिया है इसलिए वे हैं। और आदमी जो भी बना लेगा, और आदमी जो भी निर्मित कर लेगा, और आदमी जिस चीज की भी सृष्टि करेगा, वह सृष्टि आदमी से बड़ी नहीं हो सकती है। हम जो भी बनाएंगे वह हमसे बड़ा नहीं हो सकता।

इसलिए हमारे मंदिर हमसे छोटे हैं और हमारे गढ़े हुए भगवान भी हमसे छोटे पड़ जाते हैं। इसलिए भगवान के नाम पर हम लड़ तो सकते हैं, लेकिन प्रेम नहीं कर सकते। क्योंकि हमारे गढ़े हुए भगवान... जब हम ही प्रेम करने में असमर्थ हैं, हमारे गढ़े हुए भगवान भी आधार नहीं बन सकते हैं प्रेम के। इसलिए हम अपने भगवानों को लेकर युद्ध कर सकते हैं, हिंसा कर सकते हैं, मार सकते हैं और मर सकते हैं, लेकिन जी नहीं सकते। हमारा सब गढ़ा हुआ हमसे छोटा सिद्ध होता है।

एक चर्च में एक रात एक आदमी ने द्वार खटखटाया। दरवाजे खुले। उस पादरी ने दरवाजे खोल कर देखा कि कोई काली चमड़ी का आदमी खड़ा हुआ है। वह चर्च सफेद चमड़ी के लोगों का चर्च था। वहां काली चमड़ी के लोगों के लिए कोई इजाजत न थी। अब तक ऐसा मंदिर नहीं बन पाया है जो सबके लिए हो। उस पादरी ने

कहा, लौट जाओ वापस। क्या करने के लिए इतनी रात में यहां आए हो? उस आदमी ने कहाः हो सकता है, मैंने सोचा, रात में तुम मुझे न पहचान पाओ और मुझे भीतर चले जाने दो। दिन में तो मेरा घुसना मुश्किल था। मेरी चमड़ी घोषणा करती है कि मैं काला हूं। लेकिन मेरे मन में भी भगवान के लिए प्रार्थना उठती है, और मेरे मन में भी खोज पैदा होती है। और मैं भी प्यासा हूं और पानी की खोज में निकला हूं। क्या मुझे भीतर न आने दोगे?

उस पादरी ने कहा कि जाओ पहले अपने मन को शांत करो। पहले अपने मन को शांति से भरो, प्रेम से भरो और आना, पीछे आना। जब तुम्हारा मन स्वच्छ और निर्मल हो जाए तो फिर मैं तुम्हें परमात्मा तक जाने दूंगा। अभी क्या करोगे? बिना मन के निर्दोष हुए कौन परमात्मा तक जा सकता है? इसलिए वापस लौट जाओ। वह आदमी वापस लौट गया।

दो-तीन महीने बीत गए, वह दुबारा नहीं आया। उस पादरी ने सोचा कि वह आएगा भी नहीं। उसने शर्त ऐसी लगा दी थी कि अब आने की कोई गुंजाइश न थी। न होगा मन निर्दोष, न वह आएगा। लेकिन एक दिन रास्ते पर वह आदमी मिल गया। वह नीग्रो मिल गया। उसे देख कर वह पादरी हैरान हुआ! उसकी चाल बदल गई थी, उसकी आंखें बदल गई थीं, उसका चेहरा बदल गया था। उसका सब कुछ बदला हुआ मालूम पड़ता था, वह कोई और आदमी हो गया था। उसके चारों तरफ एक रोशनी और शांति मालूम पड़ती थी। उसके चारों तरफ एक प्रेम झरता हुआ दिखता था। उस पादरी ने उसे रोका और पूछा कि तुम दुबारा नहीं आए?

उस आदमी ने कहाः मैं तो आता था, लेकिन परमात्मा ने आने से रोक दिया।

उस पादरी ने कहाः क्या मतलब?

वह नीग्रो बोलाः जब मैंने अपने मन को निर्दोष करने के प्रयास किए, और जब मैं शांत हो गया, और जब मेरा हृदय प्रेम से भर गया, तो एक रात सपने में मुझे भगवान दिखाई पड़े और उन्होंने मुझसे पूछा कि क्यों तू प्रार्थनाएं कर रहा है? और क्यों मन को शांत और निर्दोष कर रहा है? क्या चाहता है? तो मैंने उनसे कहाः हमारे गांव में जो चर्च है मैं उसमें प्रवेश चाहता हूं। तो भगवान हंसने लगे और उन्होंने कहा कि तू बिल्कुल पागल है। दस साल से मैं भी कोशिश कर रहा हूं उस मंदिर में घुसने की, वह पादरी मुझे नहीं घुसने नहीं देता, तुझे कैसे घुसने देगा! तू बिल्कुल नासमझ है, यह खयाल छोड़ दे। तू और कोई वरदान मांग तो मैं पूरा कर दूं, लेकिन यह वरदान मैं भी नहीं दे सकता हूं। जब मैं ही नहीं घुस पाता... तुझे उस मंदिर में प्रवेश दिलवाने में मैं असमर्थ हूं।

और मैं आपसे कहता हूं, भगवान ने डर कर दस साल कहा होगा, सच्चाई तो यह है कि दस हजार साल से भगवान कोशिश कर रहा है कि किसी मंदिर में घुस जाए, लेकिन किसी मंदिर के पादरी और पुरोहित उसे नहीं घुसने देते।

असल में आज तक भगवान किसी मंदिर में प्रवेश नहीं पा सका है और न आगे पा सकेगा। क्योंकि भगवान है विराट और अनंत और आदमी के बनाए गए मंदिर बहुत छोटे हैं। और भगवान है असीम, और आदमी जो भी बनाएगा उसकी सीमा होगी। आदमी जो भी बनाएगा वह आदमी से बड़ा नहीं हो सकता। आदमी की लिखी गई किताबें भी आदमी से बड़ी नहीं होती हैं। आदमी के बनाए गए दर्शनशास्त्र भी आदमी से बड़े नहीं होते हैं। आदमी की फिलॉसफी भी आदमी से छोटी होती है। आदमी के मंदिर, आदमी की पूजा, आदमी की प्रार्थना, आदमी जो कुछ भी करेगा वह आदमी से बड़ा कैसे हो सकता है। इसलिए आदमी कुछ भी करे उससे भगवान का कोई संबंध नहीं है। फिर क्या है? आदमी दौड़े तो भगवान तक नहीं पहुंच सकता, आदमी कुछ बनाए तो भगवान तक नहीं पहुंच सकता, आदमी कुछ करे तो भगवान तक नहीं पहुंच सकता। सत्य तक नहीं पहुंच सकता।

हमारी प्रार्थनाएं हमें कहीं न ले जाएंगी और हमारी पूजाएं भी नहीं, और हमारे शास्त्र भी नहीं, और हमारे धर्म भी नहीं, क्योंकि हम उनको बनाने वाले हैं। फिर क्या? फिर क्या है रास्ता आदमी को कि वह सत्य को जाने, स्वयं को जाने, शांति को जाने, संगीत को जाने, क्या है रास्ता?

रास्ता कोई और है। उस रास्ते की तीन दिनों में आपसे मैं बात करूंगा।

प्रार्थना रास्ता नहीं है, पूजा रास्ता नहीं है, मंदिर मार्ग नहीं है, शास्त्र द्वार नहीं है, फिर क्या है रास्ता? क्या है द्वार?

तीन छोटे-छोटे सूत्रों पर, जो मुझे दिखाई पड़ते हैं कि मार्ग बन सकते हैं, उन पर मैं चर्चा करूंगा। पहले सूत्र पर अभी थोड़ी सी बात करूंगा, दूसरे सूत्र पर कल, तीसरे सूत्र पर परसों।

पहला सूत्रः मनुष्य को परमात्मा तक जाने के लिए पहली और सबसे अनिवार्य जो बात जानने की है वह यह कि वह जो भी कर सकता है, जो भी बना सकता है, जो भी निर्मित कर सकता है, उससे नहीं बल्कि जिस भांति भी वह खुद को छोड़ सकता है, खुद को मिटा सकता है, खुद को खो सकता है। क्योंकि मैं जो भी बनाऊंगा वह मेरे "मैं" को और मजबूत कर देगा। और मैं जो भी करूंगा उससे मेरा अहंकार और पुष्ट हो जाएगा। और मैं जो भी बनाऊंगा, उसका बनाने वाला, मैं उससे बड़ा हो जाऊंगा। और अहंकार के अतिरिक्त कौन सी दीवाल है जो तोड़े है मनुष्य को? और कोई दीवाल नहीं है। किसी भांति मेरा मैं विलीन हो जाए और खो जाए। किसी भांति मैं कुछ न करूं, कुछ न सोचूं, कहीं न दौडूं। सब भांति मेरा चित्त ठहर जाए। न करने में चल रहा हो, न सोचने में, न प्रार्थना में। सब भांति मेरा चित्त ठहर गया हो, रुक गया हो, स्तब्ध हो गया हो। जैसे कोई झील ठहर गई हो, उसमें कोई लहरें न उठ रही हों। ऐसा अगर मेरा चित्त हो जाए, तो उस शांत, उस स्पंदनहीन, उस मौन, उस साइलेंस में जाना जा सकता है वह जो मेरा स्वरूप है और सबका स्वरूप है।

लेकिन मेरे करने से नहीं, मेरे कुछ बनने से नहीं, बल्कि मेरे मिटने से। धर्म बनने का रास्ता नहीं, मिटने का रास्ता है। और बड़े आश्चर्य की बात यह है कि संसार जो कि बनने का रास्ता है, आखिर में मौत में ले जाता है जहां सब मिट जाता है। और धर्म जो कि मिटने का रास्ता है, आखिर में वहां ले जाता है जिसके मिटने की कोई संभावना नहीं है। जो मिटते हैं वे उसे पा लेते हैं जो अमिट है। बूंद अपने को सागर में खो देती है तो सागर हो जाती है और आदमी अपने को खो देता है तो परमात्मा हो जाता है। इसलिए आदमी का किया हुआ कुछ भी ले जाने में समर्थ नहीं है। आदमी अपने को अनकिया कर दे, अनडन कर दे, तो पहुंच जाएगा। पहुंच जाएगा कहना गलत है, क्योकि वहां वह है, वह पाएगा कि वहां तो मैं हूं।

तो आदमी कैसे अपने को अनडन कर दे, कैसे अपने को मिटा दे, न कर दे, शून्य कर दे? कैसे मनुष्य अपने को शून्य कर ले? उसकी पहली सीढ़ी है, मनुष्य को शून्यता की तरफ ले जाने वाली पहली सीढ़ी हैः अज्ञान। आपने सुना होगा, कि सत्य को पाना है तो बहुत ज्ञान अर्जित करना होगा। मैं आपसे कहूंगा, अगर सत्य को पाना हो तो ज्ञान को विसर्जित कर देना होगा, अर्जित करना नहीं होगा। ज्ञान को जो जितना संगृहीत कर लेता है उसका अहंकार उतना ही प्रबल हो जाता है। उसे लगने लगता है मैं जानता हूं। उसे लगने लगता है मैं जानता हूं। उसे अहसास होने लगता है कि मैं जानने वाला हूं।

साक्रेटीज जब मरने के करीब था, तो उसके एक मित्र ने जाकर उसे कहा कि मैंने सुना है एथेंस के लोग कहते हैं कि तुम सबसे बड़े ज्ञानी हो। साक्रेटीज ने कहा कि जाओ और उनसे कह दो कि वे बड़ी भूल में हैं। जब मैं छोटा सा बच्चा था, अगर तब उन्होंने यह कहा होता कि साक्रेटीज तुम बड़े ज्ञानी हो, तो मैं खुश हो गया होता, क्योंकि जब मैं छोटा बच्चा था तो मैं समझता था कि मैं जानता हूं। जब मैं जवान हुआ तो, मेरी जानने की दीवालों के कई हिस्से गिर चुके थे। और जब मैं बूढ़ा हुआ, तो मैंने पाया कि वह भवन गिर गया जिसको मैं ज्ञान कहता था। आज तो मैं परम अज्ञानी हो गया हूं। जाओ और उनसे कह दो, साक्रेटीज कुछ भी नहीं जानता है।

वे लोग गए और उन्होंने एथेंस के वृद्धों को कहा कि साक्रेटीज से हमने पूछा। एथेंस के लोग कहते हैं कि साक्रेटीज महाज्ञानी है और वह तो कहता है कि जब मैं बच्चा था तब मुझे यह भ्रम था कि मैं जानता हूं, अब जब कि मैं बूढ़ा हो गया हूं, मेरा यह भ्रम टूट गया है। अब तो मैं स्पष्ट कहता हूं कि मैं कुछ भी नहीं जानता।

तो उन वृद्धों ने कहाः इसीलिए हम उसे महाज्ञानी कहते हैं। क्योंकि जो यह जान लेता है कि मैं कुछ भी नहीं जानता, उसके जानने के द्वार खुल जाते हैं।

लेकिन हम सबको लगता है कि हम जानते हैं। और हम जानते क्या हैं? हम शब्दों के सिवाय और क्या जानते हैं? लेकिन शब्दों की संपदा को इकट्ठा करके ऐसा लगने लगता है कि मैं जानता हूं। एक आदमी गीता को याद कर लेता है, एक आदमी कुरान को, एक आदमी बाइबिल को, कोई कुछ और, कोई महावीर की वाणी को, कोई बुद्ध की वाणी को, उसे याद कर लेता है, उन शब्दों को इकट्ठा कर लेता है और उन शब्दों को बार-बार दोहराने से और बार-बार उन शब्दों के साथ जीने से उसको यह भ्रम पैदा होता है कि मैं जानता हूं। शास्त्र यह भ्रम पैदा कर देते हैं कि मैं जानता हूं, शिक्षा यह भ्रम पैदा कर देती है कि मैं जानता हूं। चारों तरफ से जो हम सीख लेते हैं उससे यह भ्रम पैदा हो जाता है कि हम जानते हैं। इस भ्रम को तोड़े बिना कोई सत्य के रास्ते पर आगे नहीं जा सकता। क्योंकि जिसे यह खयाल है कि मैं जानता हूं उसने आगे जानने के द्वार बंद कर लिए। क्योंकि जिसे यह खयाल है कि मैं जानता हूं, उसकी यात्रा बंद हो गई, वह ठहर गया, उसकी खोज टूट गई, उसकी जिज्ञासा समाप्त हो गई। लेकिन जो यह जानता है कि मैं नहीं जानता हूं, उसके सारे प्राण खोजेंगे, खोजेंगे।

लेकिन हमें यह खयाल कैसे पैदा हो जाता है कि हम जानते हैं? उधार विचारों के कारण। जो बॉरोड नालेज, चारों तरफ से हमको उधार विचार मिल रहे हैं, और उन उधार विचारों के कारण ज्ञानी बन जाना बिल्कुल आसान है। लेकिन क्या कभी आपने यह सोचा कि जो विचार मेरा नहीं है वह मेरा ज्ञान कैसे बन सकता है? क्या कभी आपने अपने विचारों की छान-बीन की, परख की, और कभी यह खोजा कि ये विचार किसके हैं? होंगे कृष्ण के, होंगे राम के, होंगे बुद्ध के, महावीर के, लेकिन क्या आपके हैं? और होंगे सत्य, लेकिन जिसने उन्हें जाना होगा उसके लिए होंगे सत्य। आपके लिए कैसे सत्य हो सकते हैं? जो सत्य स्वयं जाना जाता है उसके अतिरिक्त और कोई सत्य नहीं होता है। उधार ज्ञान असत्य से भी खतरनाक है। उधार ज्ञान अज्ञान से भी बड़ा शत्रु है। क्योंकि अज्ञान में तो यह पीड़ा होती है कि मैं जानूं, उधार ज्ञान में यह पीड़ा भी समाप्त हो जाती है। उधार ज्ञान में आदमी निश्चिंत हो जाता है, सेटिसफाइड हो जाता है, लगता है मैं जानता हूं। इसलिए पंडित कभी सत्य को उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। पंडित कभी सत्य को उपलब्ध नहीं हो सकते हैं। पांडित्य की दीवाल इतनी बड़ी है कि सत्य उसको पार नहीं कर पाता। लेकिन हम सब उधार ज्ञान को इकट्ठा करते हैं और उस ज्ञान के इकट्ठा करने को हम समझते है कि धार्मिक कुछ हम कर रहे हैं। हम क्या करते हैं? गीता या कुरान या बाइबिल के साथ हम क्या करते हैं? पढ़ते हैं, शब्दों को स्मरण कर लेते हैं। वे शब्द हमारी स्मृति में जाकर, मेमोरी में जाकर इकट्ठे हो जाते हैं। और जब हमें जरूरत पड़ती है, जब जीवन में प्रश्न खड़े होते हैं, तो स्मृति से उत्तर आ जाता है। पर वह उत्तर बिल्कुल छूठा है।

मैं अभी एक अनाथालय में गया। वहां के संयोजकों ने मुझसे कहा कि हम यहां धर्म की शिक्षा देते हैं। मैंने कहा कि मैं बड़ा हैरान हूं। मैंने आज तक सुना ही नहीं कि धर्म की शिक्षा भी हो सकती है! धर्म की साधना तो हो सकती है, धर्म की शिक्षा कभी न हुई है, न हो सकेगी। अगर धर्म की शिक्षा हो सकती होती तो हम दुनिया को कभी का धार्मिक बना लेते। कौन सी कठिनाई थी! विज्ञान की शिक्षा हो सकती है, दुनिया वैज्ञानिक हुई जा रही है। लेकिन धर्म की कोई शिक्षा नहीं हो सकती।

क्या आप सोचते हैं प्रेम की कोई शिक्षा हो सकती है? क्या हम कोई विद्यालय खोल सकते हैं जहां हम प्रेम करना सिखा दें? और अगर दुर्भाग्य से ऐसा हुआ, और ऐसा कभी होगा, क्योंकि आदमी इतना नासमझ है कि वह जो बेवकूफियां न करे थोड़ा है। वह कभी न कभी प्रेम के विद्यालय बनाएगा।

मैं तो सुनता हूं कि अमरीका में उन्होंने कोई इंस्टिट्यूट डाली है, जहां वे सिखाते हैं कि प्रेम कैसे करें। हजारों किताबें लिखी जाती हैंः हाउ टु लव, कैसे प्रेम करो। अगर किसी दिन आदमी ने ऐसे विद्यालय खोल लिए जहां सिखाया कि प्रेम कैसे करें, तो एक बात तय है उन विद्यालयों से निकले हुए विद्यार्थी कभी प्रेम न कर सकेंगे। उनका सारा प्रेम अभिनय होगा, एक्टिंग होगा। सीखा हुआ प्रेम अभिनय हो ही जाएगा।

इसलिए अभिनेता जो कि चौबीस घंटे प्रेम का धंधा करते हैं, कभी प्रेम करने में समर्थ नहीं हो पाते। कोई अभिनेता कभी प्रेम नहीं कर पाता। अभिनय इतना गहरा हो जाता है कि उसके जीवन से हार्दिक विलीन हो जाता है। जितनी एक्टिंग ज्यादा होगी, उतना हार्दिक विलीन हो जाएगा। तो मैंने उनसे कहाः प्रेम की भी शिक्षा नहीं हो सकती तो परमात्मा की शिक्षा तो और भी असंभव है। हां, यह हो सकता है, हिंदू की शिक्षा हो सकती है, मुसलमान की शिक्षा हो सकती है, जैन की शिक्षा हो सकती है, लेकिन धर्म की शिक्षा नहीं हो सकती। असंभव है धर्म की शिक्षा। तो मैंने उनसे कहा...

(एक आदमी के जोर-जोर से बोलने की आवाज।)

(मालूम होता है कोई धार्मिक आदमी आ गया है।)... तो मैंने उन अनाथालय के संयोजकों को कहा कि धर्म की तो कोई शिक्षा नहीं हो सकती। फिर भी आप क्या शिक्षा देते हैं मैं सुनूं।

तो वे मुझे ले गए। उनके पास कोई सौ बच्चे थे। छोटे-छोटे बच्चे, वैसे ही बच्चे कमजोर होते हैं, फिर अनाथ बच्चे, और भी कमजोर। उनको जो भी सिखाओ उनको सीखना पड़ेगा। उन्होंने उन बच्चों से पूछाः ईश्वर है? उन सारे बच्चों ने हाथ उठाए कि हां, है। जो बात उन्हें सिखाई गई थी उन्होंने हाथ उठा दिए। उन्होंने पूछाः ईश्वर कहां है? तो उन सब बच्चों ने अपने हृदय पर हाथ रखे और कहाः यहां। मैंने एक छोटे से बच्चे को पूछाः हृदय कहां है? उसने कहाः यह तो हमें बताया नहीं गया। यह तो हमारी किताब में भी नहीं लिखा हुआ है।

जो उसे बताया गया था उसने बता दिया, ईश्वर है। कहां है, उसने बता दिया, यहां है। लेकिन हृदय कहां है, उसे बताया नहीं गया था। वह बताता भी तो कैसे बताता!

मैंने उनके अध्यापकों को कहा कि आप बड़े दुश्मन हैं इनके। ये बच्चे सीख कर तैयार हो जाएंगे। जिंदगी में जब भी इनके सामने प्रश्न उठेगा ईश्वर है, तो सीखा हुआ उत्तर भीतर से कहेगाः हां, ईश्वर है। इनके हाथ हिल जाएंगे और ये तृप्त हो जाएंगे, बात समाप्त हो जाएगी। और जब भीतर प्रश्न उठेगा ईश्वर कहां है, तो उनका सीखा हुआ मन कहेगा, यहां। और यह हाथ बिल्कुल झूठा होगा, क्योंकि यह सीखा हुआ हाथ है, इस हाथ का कोई मूल्य नहीं है।

जरूर यहां ईश्वर है, लेकिन उसे सीखा नहीं जा सकता, ऐसा हाथ उठा कर कवायत नहीं की जा सकती। उसे जाना जा सकता है। सत्य को जाना जा सकता है, सीखा नहीं जा सकता। परमात्मा को जाना जा सकता है, अध्ययन नहीं किया जा सकता। और हम सारे लोग भी इसी तरह सीखे हुए हैं। नहीं तो जो बच्चा हिंदू घर में पैदा हुआ वह हिंदू कैसे हो गया? और जो बच्चा मुसलमान घर में पैदा हुआ वह मुसलमान कैसे हो गया? यह सब सिखावन है। यह सब प्रोपेगेंडा है। रूस में क्योंकि वहां हुकूमत उनकी है जो ईश्वर को नहीं मानते, उन्होंने अपने बच्चों को सिखा दिया ईश्वर नहीं है, और बच्चे यही कहने लगे।

मेरे एक मित्र रूस गए थे, उन्होंने एक छोटे से बच्चे से एक परिवार में पूछाः ईश्वर है? तो वह हंसने लगा, उसने कहा, था, है मत कहिए। गॉड वा.ॅज। अब नहीं है। था, हमारे पुरखे सोचते थे कि था। गया, अब नहीं है। दुनिया में इतना विज्ञान का प्रकाश आ गया कि अब उसको खड़े होने की कोई जगह नहीं है। है नहीं, छोटे बच्चे ने उनसे कहा।

सारे रूस में उन्होंने सिखा दिया कि ईश्वर नहीं है, आत्मा नहीं है। बच्चे यही सीख गए और बच्चे दोहराने लगे। वे जवान हो गए और बुढ़े आ गए, वे कहते हैं, ईश्वर नहीं है। क्या उनको पता है कि ईश्वर नहीं है? क्या

आपको पता है कि ईश्वर है? नहीं, आप भी सीखी हुई बातें कह रहे हैं, और वे भी सीखी हुई बातें कह रहे हैं। दोनों सीखी हुई बातों का कोई मूल्य नहीं है। जो भी हम सीख लेते हैं सत्य के संबंध में उसका कोई मूल्य नहीं है। इसलिए मूल्य नहीं है कि सत्य तो हमारे भीतर है, उसे सीखा नहीं जा सकता, लेकिन जाना जा सकता है। अगर हम भीतर उतर सकें तो वह जान लिया जाएगा। इसलिए पहली जो बात है वह है ज्ञान से मुक्त हो जाने की। अज्ञान से मुक्त होने के पहले ज्ञान से मुक्त होना पड़ता है। हमारा सब ज्ञान थोथा, झूठा, सिखाया हुआ है।

यही तो कारण है कि दुनिया में ज्ञान बहुत है, लेकिन धर्म बिल्कुल भी नहीं है। हम सब तो जानते हैं ईश्वर को, आत्मा को, परमात्मा को, पुनर्जन्म को। हम सब जानते हैं, लेकिन धर्म कहां है? अगर यह जानना सच होता तो क्या यह हो सकता था कि हमारा जीवन इसके विपरीत होता? जब ज्ञान सच होता है तो जीवन अनिवार्य रूप से ज्ञान के पीछे चलता है। और जब ज्ञान झूठा होता है, उधार, बासा होता है, दूसरों का होता है, तब जीवन एक तरफ चलता है, ज्ञान दूसरी तरफ चलता है। जीवन बासे ज्ञान के पीछे चलने को राजी नहीं होता। और यह बिल्कुल ठीक भी है। जिंदगी बड़ी चीज है बासे ज्ञान से; इसलिए जिंदगी कभी बासे ज्ञान के पीछे नहीं जाती। चाहे कितना ही समझाओ लोगों से कि हम जो कहें उसके अनुसार आचरण करना। चाहे कितना ही उनसे कहो कि यह धर्म है, तुम इसके अनुसार अपने जीवन को बनाना। लोग कभी अपने जीवन को उसके अनुसार नहीं बनाएंगे। इसलिए बनाना असंभव है--जो ज्ञान मेरा नहीं है वह मेरा जीवन भी नहीं बन सकता। और अगर मैं बनाने की कोशिश करूंगा तो मेरे जीवन में पाखंड के सिवाय और कुछ भी नहीं होगा। मैं उसे ऊपर से थोप लूंगा जबरदस्ती। मेरे प्राण कुछ कहेंगे, मेरी बुद्धि कुछ कहेगी। मेरे भीतर द्वैत, द्वंद्व और कांफ्लिक्ट खड़ी हो जाएगी, और कुछ भी न होगा। मैं एक अभिनेता हो जाऊंगा। जैसे कोई राम का पाठ करता है रामलीला में वैसा राम बन जाऊंगा। भीतर कुछ और, बाहर से राम। भीतर कुछ और, बाहर से कुछ और। हम सारे लोग बाहर से कुछ और हैं, भीतर से कुछ और। क्यों? यह उधार ज्ञान के कारण है।

लेकिन उधार ज्ञान छोड़ने की बड़ी हिम्मत चाहिए, क्योंकि जो हमने सीख लिया है, जो हमने विचार इकट्ठे कर लिए हैं, उनसे हमारे अहंकार को बड़ी तृप्ति मिलती है। हमें लगता है कि मैं जानता हूं। कितनी अजीब बात है! आप ईश्वर को जानते हैं? और अगर ईश्वर को जान लेते तो आप क्या हो जाते! यही बने रहते जो हैं? तो फिर इस बात को स्पष्ट रूप से स्वीकार करना उचित है कि मैं नहीं जानता हूं ईश्वर को, यह सत्य का पहला चरण होगा। अगर यही असत्य है तो बाकी तो सब फिर असत्य हो जाएगा। आप जानते हैं, मैं जानता हूं, अपने से एकांत में यह पूछना जरूरी है कि मैं जानता हूं ईश्वर को? मैं सत्य को जानता हूं? मैं जानता हूं आत्मा को? हां, मैंने किताबों में पढ़ा है, लेकिन वह कोई जानना नहीं है। अगर आप खोजेंगे तो आपको पता चलेगा, ज्ञान की दीवाल गिर जाएगी, आप पाएंगे आप तो कुछ भी नहीं जानते।

और मैं आपसे कहता हूं कि यह पहली शर्त है कि अगर आप स्पष्ट रूप से यह जान लें कि मैं नहीं जानता हूं, तो आप ज्ञान से मुक्त हो जाएंगे, झूठे ज्ञान से मुक्त हो जाएंगे। उसका भार निकल जाएगा। वह नोइंग एटिट्यूट, वह अहंकार, वह दंभ, वह जानने वाला दंभ हवा हो जाएगा।

न जानना एक बड़ी विनम्रता है, स्टेट ऑफ नॉट नोइंग, ऐसा अनुभव करना कि मैं नहीं जानता हूं--बड़ी ह्युमिलिटी है, बड़ा विनम्र कर जाती है, बड़ा सरल कर जाती है। जो नहीं जानता, इसको समझ लेता है, वह एकदम सरल हो जाता है। उसका चित्त दूसरों के दिए हुए ज्ञान से मुक्त हो जाता है। और दूसरों का ज्ञान हमें पकड़े हुए है, उससे छूटे बिना कोई यात्रा नहीं हो सकती।

एक संन्यासियों के आश्रम में एक नया युवक आया। वह आया था सत्य की खोज में, जैसे कि सत्य कहीं और जगह मिलता हो। ऐसे लोग सत्य की खोज में जाते हैं। वह भी निकला था। वह एक आश्रम में आकर रुका। लेकिन दो-चार दिन में ऊब गया। आश्रम का जो गुरु था बहुत वृद्ध था और उसकी बातें थोड़ी सी थीं, वे दो-चार

दिन में चुक गईं, समाप्त हो गईं। उस युवक को लगा कि बस, इतना ही ज्ञान है, तो फिर यहां रुक कर क्या करूंगा? लेकिन जिस दिन वह छोड़ने को था उसी दिन एक मेहमान संन्यासी और आश्रम में आया। वह संन्यासी बहुत ज्ञाता मालूम होता था। वह हर बात की बड़ी सूक्ष्म व्याख्या करता था। वह हर बात के समर्थन में वेदों से लेकर सारे उपनिषद और गीता खड़ी कर देता था। उद्धरण ही उद्धरण, और शास्त्र ही शास्त्र। उसकी बात बड़ी वजनी और ताकतवर थी।

रात बैठक हुई उस आश्रम के अंतःवासियों की, उस नये संयासी ने दो घंटे तक ज्ञान की बातें कहीं। वह युवक जो छोड़ने वाला था, वह भी सुन रहा था। उसके मन में हुआ, ऐसा गुरु हो तो कुछ सीख सकते हैं। एक हमारा गुरु है, वह तो कुछ जानता नहीं, दो-चार छोटी-मोटी बातें जानता है, उन्हीं को बार-बार दोहरा देता है। वह वृद्ध गुरु भी बैठ कर सुन रहा था। उस युवक ने सोचा, आज इसको पता चल रहा होगा ज्ञान किसे कहते हैं। और आज मन में हो रहा होगा पश्चात्ताप, और आज मन में ईर्ष्या जल रही होगी, और आज मन में दुख हो रहा होगा। नये आए संन्यासी ने दो घंटे तक बातें कीं, फिर गौरव से सबकी तरफ देखा। उस वृद्ध गुरु से पूछा कि मेरी बातें आपको कैसी लगीं? वह वृद्ध हंसने लगा और बोला, मैं दो घंटे तक बहुत कोशिश किया तुम्हें सुनने की, समझने की, लेकिन तुम तो कुछ बोलते ही नहीं।

वह आदमी बोलाः आप पागल हैं क्या! दो घंटे मैं नहीं तो और कौन बोलता था?

उस वृद्ध ने कहाः शास्त्र बोलते थे, तुम नहीं। वेद बोलते थे, तुम नहीं। उपनिषद बोलते थे, तुम नहीं। मैं तो बहुत कोशिश किया कि तुम भी बोलो, लेकिन तुम तो कुछ बोलते ही नहीं हो।

स्मृति जब तक बोलती है, तब तक आप नहीं बोल रहे हैं। सीखा हुआ जब तक बोलता है, तब तक आप नहीं बोल रहे हैं। सीखा हुआ जब तक ज्ञान है, तब तक ज्ञान नहीं है। इससे छूटे बिना कोई आगे नहीं जा सकता। शास्त्रों से छूटे बिना कोई सत्य तक नहीं जा सकता।

हम सबके मन में बहुत-बहुत ज्ञान है, वही रुकावट है। लेकिन हम उसको बढ़ाए चले जाते हैं। यहां भी आप इसी खयाल में से कोई मित्र आया हो सकता है कि कुछ ज्ञान बढ़ जाएगा। मैं तीन दिन पूरी कोशिश करूंगा कि आपका ज्ञान छूट जाए। मैं यह पाप करने वालों में से नहीं हूं जो आपके ज्ञान को बढ़ा दूं। आपके पास काफी ज्ञान है, वही खतरा है। आप बहुत जानती हुई हालत में हैं, वही खतरा है। आप उस हालत में आ जाएं जहां अनुभव कर सकें कि नहीं हम जानते हैं, अहसास कर सकें कि नहीं हमें पता है। खयाल हमें हो सके अपने अज्ञान का, खयाल हमें हो सके अपनी असमर्थता का, तो शायद उस अज्ञान के बोध से एक नयी यात्रा का अंकुर जन्मे। लेकिन जो लोग भी सीखे हुए ज्ञान के तट से बंध जाते हैं वे फिर सत्य के सागर में यात्रा नहीं कर पाते।

एक रात ऐसा हुआ। एक गांव में कुछ मित्रों ने जाकर मधुशाला में जाकर शराब पी ली। जब वे शराब के नशे से भर गए और बाहर निकले तो उन्होंने देखा, पूर्णिमा की रात है, आकाश चांदनी से भरा है। चांद ऊपर खड़ा है। वे गीत गाते हुए नदी की तरफ गए और जब वे नदी पर पहुंचे तो उन्होंने देखा एक नाव बंधी है। उनमें से किसी ने कहा कि चलो हम नाव पर बैठें और नौका विहार करें। वे नशे में थे, मस्ती में थे और चांद था और चांदनी थी। वे नाव में बैठ गए, उन्होंने पतवारें उठाईं और नाव चलाई। पूरी रात वे नाव खेते रहे, नशे में जो थे। नाव की जंजीर खोलना वे भूल गए जो कि किनारे से बंधी थी। उनकी यात्रा व्यर्थ हो गई।

इसके पहले कि कोई यात्रा पर निकले सत्य की, सागर की, परमात्मा की, नाव की जंजीर खोल लेनी जरूरी है। और अगर नाव की जंजीर किनारे से बंधी है तो फिर कितनी ही मेहनत हम करें, पतवार चलाएं, कितना ही हम समय, शक्ति खो दें, यात्रा नहीं होगी, हम वहीं पाएंगे जहां हम थे।

जिस ज्ञान को हमने दूसरों से सीख लिया है, चाहे शास्त्रों से, चाहे गुरुओं से, चाहे किसी और से, वह ज्ञान परमात्मा तक नहीं ले जा सकेगा। क्यों? परमात्मा अज्ञात है, अननोन है, और जो हम जानते हैं वह ज्ञात है, वह है नोन। जो हमें ज्ञात है उससे हम उसे नहीं जान सकते जो अज्ञात है। नोन से अननोन नहीं जाना जा सकता।

जो हम जानते हैं उससे हम उसे नहीं जान सकते जिसे हम नहीं जानते। अगर उसे जानना हो जो अज्ञात है तो जो ज्ञात है उसे छोड़ देना होगा। ज्ञात के तट को जब कोई छोड़ देता है तो अज्ञात सागर की यात्रा होती है। ज्ञान के तट को जब कोई छोड़ देता है, सीखे हुए, उधार, बासे, तभी वह सचमुच ज्ञान की दुनिया में प्रवेश करता है।

शास्त्रों को जो पकड़ कर बैठ जाते हैं, वे कभी सत्य तक नहीं पहूंच पाते। शास्त्र को, शब्द को, सिद्धांत को पकड़ कर जो बैठ जाते हैं, उनकी तो यात्रा बंद हो जाती है।

तो पहली जो प्रार्थना मैं आपसे करूं वह यह, उस ज्ञान से मुक्त होना आवश्यक है जो अपना न हो। इसका यह अर्थ नहीं है कि मैं यह कह रहा हूं कि वह ज्ञान असत्य है। नहीं। जिसने उसे जाना है उसके लिए सत्य है। लेकिन जिसने उसे पकड़ा है उसके लिए बिल्कुल व्यर्थ है। ज्ञान हस्तांतरणीय नहीं है, ट्रांसफरेबल नहीं है। मैं जान लूं, कुछ आपको दे दूं ऐसा नहीं है। जैसे मैं आपके लिए मर नहीं सकता, आपको ही मरना पड़ेगा। कोई किसी के लिए मर नहीं सकता, कोई किसी की जगह मर नहीं सकता। और मैं मर जाऊं तो आपको मृत्यु का कोई अनुभव नहीं होगा। आप मरेंगे अपनी जगह, आप ही मर सकते हैं, और आप ही मर कर मृत्यु को जान सकते हैं।

परमात्मा तो मृत्यु से भी ज्यादा गहरा है। कोई दूसरा आपके लिए नहीं जान सकता। आप ही जान सकते हैं, आपके अतिरिक्त कोई और नहीं जान सकता आपके लिए। मृत्यु को भी आप ही जान सकते हैं, प्रेम को भी आप ही, परमात्मा को भी आप ही। लेकिन हम दूसरों से जो सीख लेते हैं और उस सीखे हुए को अगर हम ज्ञान समझ लेते हैं, तो बाधा हो जाती है, रुकावट हो जाती है, ठहराव हो जाता है, हम अटक जाते हैं।

सत्य की तरफ यात्रा में पहली सीढ़ी उस ज्ञान से मुक्त हो जाना है जो उधार है, जो किसी और का है। और स्पष्ट रूप से इस बात को जानना जरूरी है कि मैं नहीं जानता हूं।

यह बड़ी स्वतंत्रता है इस बात को जान लेने की कि मैं नहीं जानता हूं। मन अदभुत स्वतंत्रता को अनुभव करता है। और न केवल स्वतंत्रता को बल्कि साथ ही उस पीड़ा को भी अनुभव करता है जो न जानने से पैदा होती है। अगर एक आदमी बीमार है, उसे पता चल जाए कि वह बीमार है, तो वह बीमारी को दूर करने में लग जाता है। और एक आदमी बीमार है और उसे पता हो कि वह स्वस्थ है, तो फिर बीमारी को वह कैसे दूर करेगा? और एक आदमी को पता हो जाए कि उसके घर में आग लगी है, तो वह उस घर के बाहर निकल जाता है। और एक आदमी को पता हो कि उसके घर में आग नहीं लगी है, तो वह निश्चिंतता से सोया रहता है।

यदि मुझे यह दिखाई पड़ जाए कि मैं नहीं जानता हूं, तो न जानने की पीड़ा इतनी बड़ी है कि किसी आग की पीड़ा नहीं हो सकती। अगर मुझे यह खयाल में आ जाए कि मैं कुछ भी नहीं जानता हूं... क्या हम जानते हैं? परमात्मा को जानते हैं? आत्मा को, सत्य को, जीवन को? कुछ भी नहीं जानते। अगर यह अहसास हो जाए, अगर यह बोध तीव्रता से स्पष्ट हो जाए कि मैं नहीं जानता हूं, तो फिर कोई यहीं रुक नहीं सकता, फिर एक यात्रा शुरू हो जाएगी; जो वहीं समाप्त हो सकती है जहां ज्ञान के सूर्य का दर्शन हो जाए, जहां आंखें खुल जाएं और जहां प्रकाश प्रकट हो जाए।

लेकिन जो लोग दूसरों की आंखों पर विश्वास कर लेते हैं और दूसरों के प्रकाश को प्रकाश मान लेते हैं, दूसरों के दिए गए शब्दों को सत्य, उनके जीवन की यह पीड़ा नष्ट हो जाती है। उनके जीवन में यह बोध अज्ञान का विलीन हो जाता है, दब जाता है। सारे जगत में परमात्मा तक पहुंचने के लिए ज्ञान ने बाधाएं दे दी हैं। हिंदुओं के ज्ञान ने, मुसलमानों के, ईसाइयों के, जैनों के, हजार तरह के ज्ञान और हजार तरह की शिक्षाएं और उनको पकड़ने वाले लोग रुक गए हैं और ठहर गए हैं।

पहला सूत्र हैः दूसरों के विचार और ज्ञान से मुक्त हो जाना। दूसरे दो सूत्रों की बात मैं आगे आपसे करूंगा। लेकिन इसलिए यह सारी बात नहीं है कि मैं जो कह रहा हूं उसे आप पकड़ लें। उसे पकड़ लें तो वही बात हो गई जो आप कुछ और पकड़े हों। कोई भी चीज पकड़ नहीं लेनी है और कोई भी चीज मन में बिठा नहीं लेनी है और किसी भी चीज के साथ जड़ता का और अंधेपन का कोई संबंध नहीं बना लेना है। आंख चाहिए मुक्त, देखने

वाली, खोजने वाली, जिज्ञासा से भरी। और अपनी आंख चाहिए। और सबके पास आंख है, सबके पास आंख है। लेकिन जो लोग उसका उपयोग ही नहीं करते और दूसरों की आंखों से ही काम चला लेते हैं, उनकी वह आंख धीरे-धीरे धूमिल होती चली जाती है और बंद हो जाती है। अगर मैं अपने पैरों से काम न लूं कुछ दिन, तो पैर बंद हो जाएंगे। और अगर मैं अपने हाथों को बंद करके रख दूं, तो हाथ भी थोड़े दिन में व्यर्थ हो जाएंगे। हमने अपने ज्ञान पर खड़े होने का कोई प्रयास जीवन में नहीं किया। सदा दूसरे का ज्ञान पकड़ लेते हैं। फिर चाहे वह गीता से आता हो, चाहे कुरान से, चाहे कहीं और से आता हो, उसे पकड़ लेते हैं। और जब हम सब इस तरह से ज्ञान पकड़ने में लगे होते हैं, तब एक बात घट जाती हैः अपने ज्ञान के पैदा होने की सारी संभावनाएं बंद हो जाती हैं। केवल वही व्यक्ति अपने ज्ञान को जगाने में समर्थ होता है जो दूसरों के ज्ञान से अपने को मुक्त कर लेता है। ज्ञान से मुक्त हो जाइए अगर सच में ज्ञान की तरफ जाना है। और सिद्धांतों से मुक्त हो जाइए अगर सत्य की यात्रा करनी है। और आदमी के बनाए हुए भगवानों से मुक्त हो जाइए अगर उस भगवान को पाना है जिसे कोई नहीं बनाता बल्कि जो ही सबको बनाता है।

एक छोटी सी कहानी और अपनी चर्चा की आज मैं पूर्ति करूंगा।

एक फकीर एक रात सोया और उसने सपना देखा कि वह किसी नई दुनिया में आ गया है। न तो ऐसे लोग उसने देखे थे, न ऐसे दरख्त, न ऐसे चांद, न ऐसे तारे, ऐसी बात ही नहीं देखी थी। यह क्या है? वह कहां आ गया है? उसने पूछा कि मैं कहां हूं? तो किसी ने कहा कि यह स्वर्ग है, यह भगवान के रहने की जगह है।

वह बहुत खुश हुआ। जीवन भर से उसी की प्रार्थना करता था, उसी की तलाश में था। उसने पूछा कि इतना बड़ा जुलूस, इतने लोग ये कहां जा रहे हैं? यह जलसा क्या है? तो किसी ने बताया, आज भगवान का जन्म-दिन है। उसका समारोह स्वर्ग में मनाया जा रहा है।

वह और भी खुश हुआ कि मैं अच्छे दिन आया हूं, भगवान को भी देख लूंगा, जलसे को भी देख लूंगा। और फिर बड़ी भीड़ आई और रथ पर सवार कोई बहुत अलौकिक, बहुत प्रतिभावान व्यक्ति आया, उसने पूछा, क्या ये ही भगवान हैं? किसी राहगीर ने कहा, नहीं, ये भगवान नहीं, ये तो राम हैं और इनके पीछे राम को पूजने और प्रेम करने वाले लोग हैं करोड़ों-करोड़ों। और वह हिस्सा निकल गया। और फिर और भीड़ आई, और घोड़े पर सवार कोई वैसा ही महिमाशाली व्यक्ति। पूछा, यह कौन है? तो कहा, मोहम्मद हैं। फिर कोई भीड़ निकली, उनके मानने वाले, उनको पूजा करने वाले। और फिर क्राइस्ट हैं, और बुद्ध हैं, और महावीर हैं, और कतार लगी... और उनके लाखों-करोड़ों मानने वाले लोग उनके पीछे हैं।

अब वह थक गया, थक गया और पूछता रहा, भगवान कहां हैं? भगवान कहां हैं? लेकिन कोई भगवान का तो कोई जुलूस निकलता नहीं मालूम हुआ। जुलूस खतम हो गया, लोग छंट गए, रास्ते धीरे-धीरे उजड़ गए। वह फकीर खड़ा रहा। और आखिर में उसने देखा, एक पुराने से घोड़े पर एक बूढ़ा सा आदमी है, उसके पीछे कोई भी नहीं। तो उसे बहुत हंसी आई देख कर कि यह कौन पागल है जो अकेला ही बैठा हुआ घोड़े पर चला जा रहा है, जिसके साथ भी कोई नहीं है। उसने किसी राहगीर, अंतिम जाते राहगीर से पूछा कि ये कौन हैं? तो उसने कहाः हो न हो ये भगवान होने चाहिए, क्योंकि उनसे ज्यादा अकेला दुनिया में और कौन है। उसने और किसी से पूछा तो पता चला कि निश्चित ही ये भगवान हैं। उसने पूछा, इनके साथ कोई भी नहीं है? तो भगवान जो उस घोड़े पर सवार थे उन्होंने कहाः कुछ लोग राम के साथ हो गए हैं, कुछ लोग कृष्ण के, कुछ क्राइस्ट के, कुछ मोहम्मद के, कुछ बुद्ध के, कुछ महावीर के, अब कोई बचा ही नहीं जो मेरे साथ हो सके।

वह फकीर घबड़ा गया और उसकी नींद टूट गई और वह रोने लगा और उसने कहाः जो मैंने सपने में देखा है, काश, वह झूठा होता और सपना होता! लेकिन जमीन पर भी तो मैं यही देख रहा हूं। भगवान के साथ कोई भी नहीं है, धर्म के साथ कोई भी नहीं है। धर्मों के साथ लोग हैं, धर्म के साथ कोई भी नहीं। भगवानों के साथ

लोग हैं, भगवान के साथ कोई भी नहीं। इसी कहानी पर आज की चर्चा तो मैं छोड़ देता हूं। भगवान के साथ कैसे हो सकते हैं उसकी दो दिनों मैं आपसे बात करूंगा।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उसके लिए बहुत-बहुत अनुगृहीत हूं। अंत में सबके भीतर बैठे हुए परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

दूसरा प्रवचन

विश्वास और धारणाएं--हमारे बंधन

मेरे प्रिय आत्मन्!

कुछ प्रश्न मेरे सामने आए हैं। कल रात्रि मैंने आपसे कहा मनुष्य का मन जब तक सीखे हुए ज्ञान से मुक्त नहीं होता है तब तक वह उस ज्ञान को उपलब्ध नहीं हो सकेगा जो कि स्वयं में ही सोया हुआ है। और जिसे बाहर से सीखने का कोई भी उपाय नहीं है। मनुष्य की चेतना में, मनुष्य की आत्मा में, मनुष्य के स्वयं के जीवन के केंद्र पर कोई शक्ति सोई हुई है, वह जागे तो ही सत्य का ज्ञान उपलब्ध हो सकता है। सत्य के ज्ञान को पाने के लिए बाहर से जो भी हम सीख लेते हैं वह सब बाधा बन जाती है, यह कल मैंने आपसे कहा। इस संबंध में ही कुछ प्रश्न हैं, पहले उनके आपको उत्तर दूं।

पूछा हैः हम यदि अर्जित ज्ञान को छोड़ दें, जो हमने सीखा है उसे यदि छोड़ दें, तो कहीं जड़ता और निष्क्रियता पैदा न हो जाए?

अर्जित ज्ञान को दो हिस्सों में बांट लेना जरूरी है। बाहर के जगत के संबंध में जो ज्ञान है वह तो अर्जित ज्ञान ही होगा। उस संबंध में जो हम पदार्थ के बाबत जानते हैं, संसार के संबंध में जानते हैं, उसे तो बाहर से ही पाना पड़ता है। जो ज्ञान बाहर के संबंध में है वह बाहर से ही उपलब्ध होता है। लेकिन जो ज्ञान स्वयं के संबंध में है वह बाहर से उपलब्ध नहीं होता है। आत्म-ज्ञान बाहर से उपलब्ध नहीं होता है। गणित को, केमिस्ट्री या फिजिक्स को या भूगोल को या भाषाओं को जो जानना चाहता है, उसे तो बाहर से सीखना पड़ेगा। पराए के संबंध में बिना सीखे कोई उपाय नहीं है। इसीलिए जो हम "पर" के संबंध में जानते हैं उसे ज्ञान कहना भी ठीक नहीं है, वह इनफार्मेशन, सूचना से ज्यादा नहीं है।

ज्ञान तो केवल वही है जो हम स्वयं के संबंध में जानते हैं। क्योंकि जो हमारे बाहर है उससे हम केवल परिचित हो सकते हैं उसे जान नहीं सकते। क्योंकि जो हमारे बाहर है उसकी अंतरात्मा में हम प्रविष्ट नहीं हो सकते हैं, हम केवल उसके बाहर घूम सकते हैं और जान सकते हैं। एक्वेंटेंस हो सकता है, परिचय हो सकता है, ज्ञान नहीं।

विज्ञान ज्ञान नहीं है, विज्ञान केवल परिचय है। ज्ञान तो उसका हो सकता है जिसके प्राणों में हमारे प्राण प्रविष्ट हो सकें। जिसे हम भीतर से जान सकें, उसे ही जान सकते हैं। यही कारण है कि विज्ञान जितना भी खोजता है उतना ही आत्मा को नहीं पाता है। विज्ञान शरीर से गहरा नहीं जा सकता। परिचय शरीर से गहरा नहीं हो सकता। लेकिन एक और रास्ता है। एक और रास्ता है, वही रास्ता धर्म है। विज्ञान "पर" का ज्ञान है, धर्म "स्व" का। विज्ञान सीखा जा सकता है विद्यालयों में, ग्रंथों से, लेकिन धर्म नहीं सीखा जा सकता। न ग्रंथ सिखा सकते हैं, न विद्यालय सिखा सकते हैं। विज्ञान की एक ट्रेडीशन होती है, एक परंपरा होती है।

अगर हम न्यूटन को, एडीसन को अलग निकाल लें, तो आइंस्टीन खड़ा नहीं हो सकेगा। विज्ञान की एक सतत परंपरा है। जो पीछे जाना गया है आगे का विज्ञान उसी पर खड़ा होता है। लेकिन अगर हम महावीर को, बुद्ध को, कृष्ण को, क्राइस्ट को अलग निकाल लें, तो भी धर्म जाना जा सकता है। धर्म की कोई परंपरा नहीं होती। धर्म वैयक्तिक अनुभव है। और विज्ञान एक परंपरा है। अगर दुनिया में सारे धर्मग्रंथ नष्ट हो जाएं, तो भी धर्म नष्ट नहीं होगा; लेकिन विज्ञान के ग्रंथ नष्ट हो जाएं, तो विज्ञान नष्ट हो जाएगा। दुनिया के सारे धर्मग्रंथ नष्ट हो जाएं, तो भी धर्म नष्ट नहीं होगा, क्योंकि धर्म ग्रंथों में है ही नहीं। धर्म तो कोई भी व्यक्ति जब अपने भीतर

जाएगा तो जान लेगा अपने स्वभाव को और पहचान लेगा धर्म को। लेकिन विज्ञान के ग्रंथ नष्ट हो जाएं, तो फिर अ ब स से शुरू करना पड़ेगा। महावीर या बुद्ध जहां समाप्त करते हैं धर्म का अनुभव वहां से शुरू नहीं होता। आइंस्टीन जहां समाप्त करता है उसके बाद में आने वाला विचारक आइंस्टीन के बाद से शुरू करेगा। लेकिन धर्म का अनुभव तो प्रत्येक को प्रारंभ से ही शुरू करना पड़ता है, किसी के कंधे पर खड़े होने का कोई उपाय नहीं है।

धर्म की कोई परंपरा नहीं होती, लेकिन हमने धर्म की परंपरा बना ली है। और धर्म की कोई शिक्षा नहीं होती, लेकिन हम धर्म की शिक्षा देते हैं। और इसी वजह से धर्म विनष्ट हो गया, विलीन हो गया। हमारे प्राणों से उसका संबंध शिथिल हो गया है।

हम धर्म को विज्ञान के ढंग पर समझाना और सिखाना चाहते हैं। यह संभव नहीं है। यह मैंने कल आपसे कहा कि धर्म के संबंध में जो हममें अर्जित ज्ञान है उसे छोड़ देना होगा। छोड़ देने का क्या अर्थ है? छोड़ देने का क्या अर्थ है? छोड़ देने का अर्थ यह नहीं है कि आप उसे भूल जाएंगे जो आपने जान लिया है। जो आपने जान लिया है उसे भूलने का कोई उपाय नहीं है। छोड़ देने का केवल इतना ही अर्थ है कि जो आप जान रहे हैं धर्म के संबंध में अगर आपको पता चल जाए कि यह मेरा ज्ञान नहीं है, तो आपके ऊपर उसकी पकड़ समाप्त हो जाएगी। अगर आपको यह प्रतीत हो जाए कि यह सीखा हुआ ज्ञान ज्ञान नहीं है, अगर आपको यह खयाल में आ जाए कि यह मेरा ज्ञान नहीं है, तो आपके ऊपर उसकी जो जकड़ और बंधन है वह विलीन हो जाएगा। ज्ञान की कोई जंजीरें नहीं होती हैं। हम मान लेते हैं, हमारी मान्यता में ही जंजीर होती है। एक आदमी दो और दो पांच समझता हो, फिर उसे कोई बताए कि दो और दो चार होते हैं, तो क्या वह पूछेगा कि मैं दो और दो पांच अब तक जानता रहा उसे कैसे छोड़ूं। नहीं, उसे यह समझ में आ जाए कि दो और दो चार होते हैं, तो दो और दो पांच होते थे यह अपने आप छूट गया, इसे छोड़ना नहीं पड़ेगा।

ज्ञान की कोई जंजीरें नहीं होतीं कि उन्हें तोड़ना पड़े। वह हमारी मान्यता में और हमारे विश्वास में होती हैं। लेकिन हजारों वर्षों से हमको विश्वास करना सिखाया गया है। हमसे यही कहा जाता रहा हैः विश्वास करो, विचार मत करो। इसका परिणाम यह हुआ है कि विश्वास और विश्वास के अंधे आधार पर हमने कुछ बातें सीख ली हैं और उनसे हम जकड़ गए हैं। और वह जकड़न हमारे चित्त को जमीन से बांधे रखती है, ऊपर की यात्रा नहीं होने देती। कोई हिंदू होकर बंद हो गया है, कोई मुसलमान होकर बंद हो गया, कोई बौद्ध, कोई जैन, कोई ईसाई। हम सब बंद हो गए हैं अपने-अपने कारागृहों में। और स्मरण रहे, जो कारागृह मनुष्य को मनुष्य से अलग कर देते हैं वे मनुष्य को परमात्मा से कभी भी नहीं जोड़ सकेंगे। जो दीवालें आदमी-आदमी को तोड़ देती हैं वे आदमी को परमात्मा से जोड़ने वाले सेतु नहीं बन सकेंगी। अभी मनुष्यता उस स्थान पर भी नहीं पहुंच पाई है जहां सारे मनुष्यों के बीच सब तरह की दीवालें गिर जाएं। और दीवालें किस चीज की हैं, सिवाय शब्दों के और कौन सी दीवालें हैं। कुछ शब्द मैंने सीख लिए हैं, कुछ शब्द आपने सीख लिए हैं, और हमारे शब्द भिन्न हैं, तो मैं हिंदू हूं और आप मुसलमान हैं, आप इसाई हैं, मैं जैन हूं। कुछ शब्द हमने सीख लिए हैं और वे शब्द हमें अलग किए हुए हैं।

सत्य अलग नहीं करेगा, इकट्ठा कर देगा, जोड़ देगा। लेकिन शब्द अलग कर देते हैं। शब्द सत्य नहीं हो सकते। शब्द बहुत थोथे हैं, निर्जीव और मुर्दा हैं।

जब आप आत्मा शब्द का विचार करते हैं, क्या खयाल आता है आपके पास? जब आप परमात्मा शब्द का विचार करते हैं, क्या खयाल आता है? जो आपको सिखा दिया गया है वही। अगर हिंदू के सामने हम कहें परमात्मा, तो वह सोचता है राम, अगर कृष्ण को पूजता है तो कृष्ण। क्राइस्ट के सामने कहें तो वह कुछ और सोचता है। मुसलमान के सामने कहें तो और सोचता है। हर शब्द के संबंध में उन्होंने जो सीख रखा है वही सोचते हैं। और बड़े अर्थ की बात यह है कि सत्य को जानने के लिए मन सभी शब्दों से शून्य हो, तभी उसका अनुभव हो सकता है। क्योंकि शब्द भी एक तरह का तनाव हैं, बेचैनी हैं। शब्द भी मन पर एक तरह का बोझ है।

जब सब भांति शब्दों से मन शून्य होता है, तो वैसा ही हो जाता है जैसे झील लहरों से शून्य हो गई हो। एक दर्पण बन जाता है और उस दर्पण में ही अनुभव होता है।

शब्द बाधा हैं और इन शब्दों को हमने विश्वास के आधार पर पकड़ लिया है। किसने आपसे कहा कि यह सत्य है, लेकिन परंपरा कहती है और हम विश्वास कर लेते हैं। हमने सोचा? हमने विचारा? नहीं। हमने, मनुष्य का जो सबसे महत्वपूर्ण गुण है विचारना, उसको भी छोड़ दिया है। आदमी करीब-करीब भेड़ों की भांति हो गए हैं। वे किसी के पीछे चलते हैं, सोचते नहीं। वे खुद विचार नहीं करते। वे अनुयायी हैं और विश्वासी हैं। और दुनिया के सभी शोषक यही चाहते हैं कि आदमी विश्वासी रहे, विचारशील न हो जाए। राजनीतिज्ञ भी यही चाहते हैं, धर्म-पुरोहित भी यही चाहते हैं। सभी यही चाहते हैं कि मनुष्य में विचार पैदा न हो। क्योंकि विचार बहुत विद्रोही है। विचार बहुत रिबेलियस है। और विचार पैदा होगा तो दुनिया में बड़ी क्रांति हो जाएगी।

इसलिए विचार न हो विश्वास हो तो विश्वास से कभी कोई क्रांति नहीं होती। विश्वास आदमी को भेड़ों जैसा बना देता है, क्रांति का सवाल ही नहीं रह जाता है।

मैंने सुना है, एक स्कूल में एक अध्यापक अपने बच्चों को गणित सिखा रहा था। उसने बच्चों से पूछा कि एक छोटी सी बागुड़ में, एक बगिया में ग्यारह भेड़ें बंद हैं, उनमें से पांच छलांग लगा कर बाहर निकल गईं, तो पीछे कितनी भेड़ें बचेंगी?

एक बच्चे ने हाथ हिलाया। सबसे पहले एक छोटे से बच्चे ने हाथ हिलाया। उस शिक्षक ने पूछाः कितना उत्तर है?

उस बच्चे ने कहाः एक भी भेड़ पीछे नहीं बचेगी।

शिक्षक ने कहाः तुम बिल्कुल पागल हो! पांच भेड़ें बाहर निकलीं और ग्यारह भीतर थीं, भीतर बिल्कुल नहीं बचेंगी?

उस बच्चे ने कहाः आप गणित जानते होंगे, मैं भेड़ों को जानता हूं। मेरे घर में भेड़ें हैं। अगर एक भेड़ भी बाहर निकल गई तो पीछे कोई भेड़ नहीं बचेगी। आप गणित जानते होंगे, लेकिन मैं भेड़ों को जानता हूं, मेरे घर में भेड़ें हैं।

आदमी के बाबत भी क्या यह नहीं कहा जा सकता है कि आदमी ने भेड़ों की तरह व्यवहार किया है? क्या हम यह कह सकते हैं कि हम मनुष्य की भांति विचारपूर्ण हैं या कि हम पीछे चलते हैं? जो भी पीछे चलता है वह अपनी मनुष्यता खो देता है। हम सभी लोग किसी के पीछे चलते हैं। हममें से किसी में भी इतना आत्म-गौरव नहीं समझा है कि वह खुद अपने पैरों पर खड़ा हो और चले, सोचे और चले। नहीं, हम बिना सोचे चलते हैं। आप सोच कर हिंदू हैं? आप सोच कर मुसलमान हैं? आप सोच कर जैन हैं? इसाई हैं? क्या हैं? बिना सोचे हैं, विश्वास से हैं, विचार से नहीं हैं। और जो विश्वास से जीता है वह बंधन में जीता है, वह कभी स्वतंत्र नहीं हो सकता, क्योंकि विश्वास अंधा है। विश्वास के पास कोई आंखें नहीं हैं। और विश्वास की ताकत, विश्वास की ताकत इस बात में नहीं होती कि जो कहा जा रहा है वह सत्य है, बल्कि इस बात में होती है जो कहा जा रहा है वह इतने ढंग से, व्यवस्थित रूप से प्रचारित किया जा रहा है कि सत्य जैसा प्रतीत होने लगेगा।

एडोल्फ हिटलर ने अपनी आत्म-कथा में लिखा हैः ऐसा कोई भी असत्य नहीं है जिसे बार-बार दोहरा कर लोगों के लिए सत्य न बनाया जा सके। ऐसा कोई भी असत्य नहीं है जिसे बार-बार दोहरा कर लोगों के लिए सत्य न बनाया जा सके। हिटलर ने लिखा है कि मैंने अपने जीवन में यही जाना--जो असत्य बार-बार प्रचारित किया जाता है वह सत्य प्रतीत होने लगता है। बार-बार प्रचारित करने से कोई भी बात सत्य प्रतीत होने लगती है। मनुष्य के मन में बार-बार दोहराने से कंडीशनिंग पैदा होती है, संस्कार पैदा होते हैं। और कोई भी बात सत्य मालूम होने लगती है।

अगर हम एक मंदिर में रोज पूजा करते हैं, और बचपन से हमें यह कहा गया है कि यह पूजा भगवान की पूजा है, तो हमें कभी यह खयाल भी नहीं उठता कि हम जो पूजा कर रहे हैं वह सच में भगवान की पूजा है या कि हम अपनी ही बनाई हुई किसी मूर्ति को पूज रहे हैं। लेकिन हमें बार-बार अगर कहा गया है तो वह हमें सत्य प्रतीत होने लगता है। अब तक ऐसी कोई भी बात नहीं है जो मनुष्य के किसी भी हिस्से को बार-बार दोहरा कर सत्य न बनाई जा सके। हमारे आधार क्या हैं विश्वास के? सिवाय इसके कि बचपन से कुछ बातें दोहरा दी जाती हैं, और क्या आधार हैं? जो बच्चा आपके घर में पैदा हुआ है--अगर आप मुसलमान हैं, उस बच्चे को बचपन से ही जैन के घर में रख दें, जवान होकर वह मुसलमान नहीं होगा, जैन होगा। क्यों? वह जैन घर में जो बातें बचपन से सुनेगा उनको दोहराना खुद भी सीख लेगा। वे उसके मन में बैठ जाएंगी।

पावलफ नाम का एक बहुत बड़ा वैज्ञानिक कुछ प्रयोग करता था। वह एक कुत्ते को भोजन कराता था। भोजन लाते ही कुत्ते की जीभ से पानी टपकने लगता था। स्वाभाविक है। पावलफ रोटी देता साथ में घंटी भी बजाता। पंद्रह दिन बाद उसने रोटी तो नहीं दी सिर्फ घंटी बजाई, कुत्ते के मुंह से पानी टपकने लगा। घंटी सुन कर पानी का टपकना बिल्कुल अस्वभाविक है। इससे कोई संबंध नहीं है। घंटी बजाने से कुत्ते के मुंह से लार के टपकने का क्या संबंध है? कोई भी संबंध नहीं है। लेकिन पंद्रह दिन के प्रचार से संबंध हो गया। पंद्रह दिन रोटी के साथ घंटी बजती थी। एसोसिएशन हो गया। रोटी और घंटी में संबंध हो गया। घंटी बजती तो कुत्ते को लगता कि रोटी आने वाली है। आज रोटी तो नहीं आई सिर्फ घंटी बजी, लार टपकने लगी। यह प्रचारित सत्य हो गया। रोटी से लार का टपकना तो स्वाभाविक था, लेकिन घंटी से लार का टपकना प्रचारित सत्य हो गया। प्रचार किया गया पंद्रह दिन तक, कुत्ता राजी हो गया।

हम सारे लोग भी इसी तरह के प्रचारित सत्यों के भीतर जीते हैं। हमसे कहा जाता है यह मूर्ति भगवान की है, तो हमारे हाथ जुड़ने लगते हैं। दूसरे को हमारे पड़ोसी को कहा जाता है यह मूर्ति भगवान की नहीं है, तो उसके हाथ नहीं जुड़ते। मूर्ति वही है, एक हाथ जोड़ता है, एक हाथ नहीं जोड़ता। क्यों? क्या फर्क है? एक आदमी मंदिर के सामने से निकलता है, तो उसका मन होता है हाथ जोड़ें, दूसरा आदमी निकलता है उसका मन होता है इस मंदिर को तोड़ दें तो धर्म हो जाएगा। हिंदू मुसलमान की मस्जिद तोड़ देना चाहता है, मुसलमान हिंदू का मंदिर तोड़ देना चाहता है। जो एक के लिए धर्म-स्थान है वह दूसरे के लिए अर्धम का स्थान बन जाता है। क्यों? प्रचार भिन्न-भिन्न हैं। एक के मन पर एक बात सिखाई गई है, दूसरे के मन को दूसरी बात सिखाई गई है। और कुछ भी सिखाया जा सकता है। कैसी भी मूर्खतापूर्ण बात सिखाई जा सकती है। और हजारों वर्ष तक चलाई जा सकती है। और लाखों लोग उसको मानते रह सकते हैं।

दुनिया का जो पतन... आदमी के जीवन में जो आज इतना अंधकार है उसका कोई और कारण नहीं है--नास्तिकता कारण नहीं है उस अंधकार का, न ही विज्ञान का विकास उसका कारण है, न ही भौतिक समृद्धि का बढ़ जाना उसका कारण है। उसका एक मात्र कारण है--पांच हजार वर्षों से मनुष्य को विश्वास सिखाया जा रहा है, विचार नहीं। मनुष्य के भीतर विचार जड़ हो गया है। उसके भीतर सोचने-समझने की क्षमता क्षीण हो गई है। वह केवल मान सकता है, बिलीफ कर सकता है, विश्वास कर सकता है। खोज नहीं सकता, जान नहीं सकता, पहचान नहीं सकता, अपनी तरफ से प्रयास नहीं कर सकता। कोई कह दे तो वह मान लेगा। जितनी बड़ी ऑथेरिटी हो कहने वाली उतनी जल्दी मान लेगा। इसलिए सभी धर्मों के लोग कहते हैं, हमारा ग्रंथ खुद भगवान का लिखा हुआ है, बड़ी ऑथेरिटी पैदा करते हैं। हमारा ग्रंथ खुद भगवान का लिखा हुआ है। दूसरों के ग्रंथ आदमियों के लिखे हुए हैं। भगवान से बड़ा प्रामाणिक और कौन हो सकता है! प्रचार करने में सुविधा हो जाती है। फिर जितनी पुराने दिनों की बात प्रचारित की गई हो उतनी मन में आसानी से बैठती है।

इसलिए हर दुनिया का धर्म कहता है, हम सबसे पुराने धर्म हैं बाकी सब धर्म नये हैं। क्यों? इतना पुराना होने का शौक क्या है? पुराना होने का कारण है। जितनी बात पुरानी हो, लोगों को लगती है उतनी सच होनी

चाहिए, नहीं तो इतने दिन जिंदा कैसे रहती। जितनी पुरानी हो उतनी सच होनी चाहिए। लेकिन बेवकूफियां भी पुरानी होती हैं, मूर्खताएं भी पुरानी होती हैं। पुराने होने से कुछ भी नहीं होता।

अरस्तू जैसा बहुत विचारशील व्यक्ति, जो कि यूनान में तर्क का पिता कहा जाता है। उसने भी अपनी किताब में लिखा हैः स्त्रियों के दांत पुरुषों से कम होते हैं। यूनान में यह खयाल था की स्त्रियों के दांत पुरुषों से कम होते हैं। और किसी समझदार को यह खयाल न सूझा कि किसी स्त्री के दांत गिन ले। अरस्तू खुद इतना बड़ा तर्कशास्त्री और विचारक था और उसके पास एक-एक नहीं, दो-दो औरतें थीं। उसकी दो पत्नियां थीं। लेकिन उसको यह कभी खयाल न आया कि बैठ कर उनके दांत गिन ले। खयाल था यूनान में कि दांत स्त्रियों के कम होते हैं। असल बात यह है कि पुरुषों को यह कभी समझ में नहीं आता कि स्त्रियां उनके बराबर किसी भी चीज में हो सकती हैं, तो दांत भी बराबर कैसे हो सकते हैं। किसी पुरुष ने यह ठीक न समझा कि दांत गिने, और स्त्रियों ने भी अपने दांत न गिने, क्योंकि स्त्रियां तो पुरुषों की अनुयायी हैं। जहां पुरुष जाते हैं वहां वे भी चली जाती हैं। एक हजार साल तक यूनान के करोड़ों लोग मानते रहे कि स्त्रियों के दांत पुरुषों से कम होते हैं। जिस आदमी ने पहली दफा दांत गिने, लोगों ने उससे कहा कि तुम पागल हो। ऐसा कभी हुआ है कि बराबर दांत हुए हों। और अगर तुम्हारी स्त्री के दांत बराबर हैं, तो यह कोई प्रकृति की भूल होगी। तुम्हारी स्त्री के दांत होंगे बराबर, लेकिन स्त्रियों के दांत कभी पुरुषों के बराबर होते ही नहीं, न कभी हुए हैं।

हजारों साल से अरस्तू जैसे विचारक ने लिखा है कि स्त्रियों के दांत कम होते हैं। दुनिया में हजारों तरह की नासमझियां पुरानी होने की वजह से चलती रही हैं। लेकिन किसी ने उन पर संदेह नहीं किया और विचार नहीं किया। और जो विचार करे वह पागल मालूम पड़ेगा। क्योंकि विचार न करने वालों की भीड़ में एक आदमी जब विचार करता है तो पागल मालूम पड़ता है। जहां सारे लोग एक तरह से सोचते हों और एक तरह से इसीलिए सोचते हैं कि सोचते ही नहीं हैं। जहां भीड़ खड़ी हो वहां एक आदमी जरा भी पृथक सोचेगा तो उसे खुद भी शक होगा कि मैं कहीं गलत तो नहीं हूं, क्योंकि इतने लोग उस तरफ। भीड़ की अपनी ताकत है। और इसलिए मैं कहता हूं, सत्य का भीड़ से कोई संबंध नहीं है। और केवल वे ही लोग सत्य को उपलब्ध हो पाते हैं जो भीड़ से मुक्त होने में समर्थ होते हैं। सिखाए हुए ज्ञान से केवल वही मुक्त हो सकता है जो भीड़ के प्रभाव से मुक्त हो जाए।

एक कहानी मैंने सुनी है।

एक राजा के दरबार में एक नया-नया आदमी आया और उसने उस राजा को कहा कि आप क्या मनुष्यों जैसे वस्त्र पहने हुए हैं? आपके राज्य की सीमाएं नहीं हैं, करीब-करीब पृथ्वी आपके बस में आ गई है और आप मनुष्यों जैसे कपड़े पहनते हैं? मैं आपके लिए देवताओं के वस्त्र ला सकता हूं।

राजा बहुत, बहुत प्रभावित हुआ और उसने कहा कि कितना खर्च होगा, खर्च की कोई फिकर मत करना, लेकिन देवताओं के वस्त्र जरूर लाओ। उस आदमी ने कहाः आज तक पृथ्वी पर देवताओं के वस्त्र नहीं आए। यह पहला मौका होगा। यह, तुम पहले आदमी होओगे जो देवताओं के वस्त्र पहनेगा। लेकिन तुम्हें आदमियों के वस्त्र शोभा नहीं देते।

राजा बहुत, बहुत योजनाएं बनाने लगा और उसने उस आदमी को कहा कि देवताओं के वस्त्र लाने की कोशिश करो। हजारों रुपये उस आदमी ने खर्च कर दिए। दरबारियों को शक था कि देवताओं के वस्त्र न तो कभी देखे गए, न कभी लाए गए, यह आदमी धोखेबाज न हो। लेकिन निश्चित तिथि पर--हजारों रुपये उस आदमी ने खर्च किए--लेकिन निश्चित तिथि पर वह एक बड़ी भारी पेटी लेकर आ गया। दरबार में तब तो लोग निश्चिंत हो गए कि जरूर वह वस्त्र लाया है।

उसने आकर दरबार में पेटी रखी और उसने राजा से कहा कि मैं पेटी खोलता हूं, आप एक-एक वस्त्र अलग करते जाएं, मैं एक-एक वस्त्र आपको निकाल कर देता जाऊंगा। लेकिन एक शर्त है, देवताओं ने मुझसे चलते वक्त कहा कि ये वस्त्र केवल उसी को दिखाई पड़ेंगे जो अपने ही पिता से पैदा हुआ हो। ये वस्त्र सभी को दिखाई नहीं पड़ेंगे। तो यहां जो लोग अपने ही पिता से पैदा हुए हैं दरबार में, उनको ही वस्त्र दिखाई पड़ेंगे।

जिनके पिता संदिग्ध हैं उन्हें वस्त्र दिखाई नहीं पड़ेंगे। राजा ने अपना कोट निकाला। उसने पेटी में से खाली हाथ बाहर लाकर राजा से कहाः यह लो कोट, देवताओं का कोट पहनो। राजा को उसमें कुछ भी दिखाई तो नहीं पड़ा, लेकिन कोट के पीछे अपने पिता को खोना उचित न था। उसने जल्दी से वह कोट पहन लिया जो कि था ही नहीं। और एक-एक वस्त्र राजा के वह उतरवाता गया। अब राजा यह भी कहने में मुश्किल पड़ गया कि मैं नग्न हुआ जा रहा हूं। और दरबारी भी ताली पीटने लगे और कहने लगे कि कितने सुंदर वस्त्र हैं, ऐसे वस्त्र तो कभी देखे नहीं। और सभी दरबारी एक-दूसरे से आगे बढ़ कर प्रशंसा करने लगे। क्योंकि कौन अपने पिता को संदिग्ध करवाए।

सब देख रहे थे राजा नंगा हुआ जा रहा है। आखिर राजा नंगा हो गया। उसके सारे वस्त्र निकलवा दिए गए और देवताओं के वस्त्र पहना दिए गए। राजा देख रहा है कि मैं नंगा हूं, लेकिन सारे दरबारी तालियां पीट रहे हैं और कह रहे हैं कि वस्त्र बहुत सुंदर हैं। तो राजा ने सोचा, हो सकता है मेरे पिता मेरे पिता न रहे हों। और क्या कारण हो सकता है? क्योंकि इतने लोग जब कहते हैं तो ठीक ही कहते होंगे। इतने लोग गलत कहेंगे क्या। फिर उस आदमी ने कहा कि ये वस्त्र पहली दफे पृथ्वी पर उतरे हैं, राजधानी के लोग देखने को उत्सुक होंगे, तो जुलूस निकाला जाए।

तो राजा डरा। लेकिन उसने सोचा कि होंगे दस-पांच ही तो लोग होंगे राजधानी में जिनके पिता संदिग्ध होंगे, उनको शायद मैं नंगा दिखाई पड़ूं, बाकी सारे लोगों को तो वस्त्र दिखाई ही पड़ेंगे। अब जो कुछ होगा, होगा। इनकार करना ठीक न था। क्योंकि इनकार का मतलब कि राजा को शक है कि वस्त्र नहीं हैं। दरबारियों ने भी कहा कि यह तो बिल्कुल ठीक है।

सारे गांव में खबर फैल गई कि राजा ऐसे वस्त्र पहन कर निकलने वाला है जो केवल उनको ही दिखाई पड़ेंगे जिनके पिता सच्चे रहे हों। जुलूस निकला और सारे गांव में तालियां बजने लगीं। लाखों लोग सड़कों के किनारे खड़े होकर कहने लगेः कितने सुंदर वस्त्र हैं, ऐसे वस्त्र तो न कभी देखे, न कभी सुने।

राजा नंगा था, सारा गांव नंगा देख रहा था, लेकिन कौन कहे? एक छोटे से बच्चे ने हिम्मत की और उसने बीच सड़क पर राजा को रोक कर कहा कि कौन कहता है कि वस्त्र हैं, आप बिल्कुल नंगे मालूम हो रहे हैं। गांव के बूढ़ों ने कहाः तुम बच्चे हो, तुम अभी जानते नहीं, तुम्हें पता नहीं कि तुम क्या कह रहे हो। इससे तुम्हारे पिता संदिग्ध हो गए। और फिर तुम बच्चे हो, हम अनुभवी हैं। हम बूढ़े हैं, हम जानते हैं।

उस बच्चे को रास्ते के किनारे से हटा लिया गया। एक ही बच्चे ने हिम्मत की, किसी बूढ़े ने तो कोई हिम्मत नहीं की। क्योंकि बूढ़े सब समझदार थे। उन सबने वस्त्रों की तारीफ की और प्रशंसा की।

सारे गांव में नंगा राजा होकर वापस लौट आया महल में। हर आदमी यही सोचता रहा कि मैं ही गड़बड़ हो सकता हूं, पूरा नगर कैसे गड़बड़ होगा। और किसी आदमी ने किसी दूसरे से न कहा, क्योंकि दूसरे से कहने से बड़ी मुसीबत हो सकती थी।

हमारे विश्वास इससे ज्यादा भिन्न नहीं हैं। हम उन्हें केवल इसलिए पकड़े रहते हैं कि और सारे लोग भी पकड़े हुए हैं। भीड़ चूंकि उन्हें पकड़े हुए है इसलिए साहस हममें नहीं होता कि हम उन्हें छोड़ दें। और जब हमें मिट्टी की एक मूर्ति के सामने खड़े करके कहा जाता है कि ये भगवान हैं, तो हमें दिखाई तो पड़ती है मिट्टी की मूर्ति। राजा तो नंगा दिखाई पड़ता है, लेकिन जब सारे लोग कहते हैं कि ये भगवान हैं, और राजा वस्त्र पहने हुए हैं, तो हम भी हाथ जोड़ते हैं और नमस्कार करते हैं और कहते हैं, भगवान।

जो आदमी भीड़ के इस सम्मोहन में, यह जो भीड़ की हिप्नोसिस है, यह जो भीड़ का प्रभाव है, इसमें बह जाता है, वह आदमी कभी सत्य को नहीं खोज पाता है। उसका चित्त कभी इतना साहस नहीं जुटा पाता कि चीजें जैसी हैं उनको वैसा देख सके। चीजें जैसी हैं वैसा उनको देख सके। तथ्य जैसे हैं, उनको वैसा देख सके, नग्न और सीधा।

नहीं, भीड़ का सम्मोहन बहुत गहरा है। और इसीलिए जब भीड़ मजबूत होती है तो व्यक्ति खो जाता है। दंगे-फसाद में अगर एक हजार, दो हजार आदमी एक मकान में आग लगा रहे हैं, तो आप भी सम्मिलित हो जाते हैं। हो सकता था अकेले में आपसे कोई कहता कि इस मकान में आग लगा दो, तो आप कहते, यह तो बड़ा बुरा काम है; लेकिन जब दो हजार लोग मकान में आग लगा रहे थे तो आप भी सम्मिलित हो गए। क्योंकि दो हजार लोगों का सम्मोहन यह कहता है कि आप गलत होओगे, दो हजार लोग थोड़े ही गलत हो सकते हैं।

इसलिए दुनिया में जितने बड़े पाप हैं वे व्यक्तिगत आदमी कभी नहीं करते, हमेशा भीड़ में करते हैं। छोटे पाप अलग-अलग करते होंगे, बड़े पाप हमेशा भीड़ में करते हैं। दुनिया में छोटे पापों का जिम्मा आदमियों पर कभी नहीं है, भीड़ पर उनका जिम्मा है। भीड़ में आदमी अपनी व्यक्तिगत जिम्मेवारी खो देता है।

अभी हिंदुस्तान-पाकिस्तान का बंटवारा हुआ, भीड़ ने क्या-क्या नहीं किया। उस भीड़ में अच्छे लोग सम्मिलित थे। ऐसे लोग जो रोज सुबह कुरान पढ़ते थे, गीता पढ़ते थे, जो मंदिरों और मस्जिदों में सत्संग करते थे, ऐसे लोग सम्मिलित थे। अगर उनसे हम अकेले में मिल कर पूछें, तो वे कहेंगे, हमारी समझ में नहीं आता कि यह कैसे हुआ! लेकिन जब भीड़ के बीच में वे खड़े थे तो उन्होंने भी किया।

भीड़ के बीच में हमारी व्यक्तिगत चेतना खो जाती है।

इसलिए मैं आपसे कहता हूंः धर्म का कोई संबंध भीड़ से नहीं है। भीड़ से संबंध होगा राजनीति का, धर्म का भीड़ से क्या संबंध है? लेकिन राजनीतिज्ञ बहुत होशियार हैं। उन्होंने धर्म का भी शोषण कर लिया है और धर्म के भी संगठन खड़े कर दिए हैं। जहां भीड़ से संबंध नहीं वहां संगठन से भी कोई संबंध नहीं होता। सच तो यह है कि आज तक सत्य उन लोगों ने जाना है जो अकेले में गए, भीड़ से बाहर गए। उन्होंने नहीं जिन्होंने संगठन किए और भीड़ इकट्ठी की और जो भीड़ में जाकर जुड़ गए। उन्होंने जाना है जो भीड़ से मुक्त हुए और अकेले में और एकांत में गए। और जब उनका चित्त सब भांति भीड़ से मुक्त हो गया, भीड़ की हिप्नोसिस जहां टूट गई, सम्मोहन जहां टूट गया, वहां उन्होंने जाना कि सत्य क्या है। भीड़ ने कुछ बातें सिखाई थीं। जब तक उन्होंने उन बातों को न छोड़ा, तब तक वे कुछ भी न जान सके।

महावीर एकांत में पहाड़ियों में क्या करते थे? शायद आप सोचते होंगे, शास्त्र पढ़ते होंगे। शास्त्र तो महावीर अपने साथ कोई भी नहीं ले गए थे। शायद आप सोचते हैं, कोई मूर्ति बना कर पूजा करते होंगे। महावीर के साथ तो कोई मूर्ति नहीं थी। क्या करते होंगे उस अकेले में? उस अकेले में महावीर भीड़ से मुक्त होने की कोशिश कर रहे थे। वह जो क्राउड है उससे मुक्त होने की कोशिश कर रहे थे। क्राइस्ट क्या कर रहे थे अकेले में? या मोहम्मद क्या कर रहे थे? या बुद्ध क्या कर रहे थे? भीड़ से मुक्त होने की कोशिश कर रहे थे। और इतना ही काफी नहीं है कि कोई भीड़ से भाग कर जंगल में चला जाए। इतना काफी नहीं है। भीड़ मन के साथ वहां भी चली जाएगी। जरूरी यह है कि मन पर भीड़ के प्रभाव न रह जाएं। वह जो हमें सिखाया गया है अगर उसके प्रभाव हमारे मन से अलग हो जाएं तो हम भीड़ के बाहर हो जाएंगे, चाहे भीड़ के बीच खड़े रहें तो भी भीड़ से बाहर हो जाएंगे।

सब हमारे विश्वास, हमारी धारणाएं, हमारे बंधन हैं।

पूछा हैः अगर इनको हम छोड़ दें तो निष्क्रिय हो जाएंगे?

हम बड़े अजीब लोग हैं। हम बिना छोड़े पूछना शुरू कर देते हैं कि छोड़ देंगे तो निष्क्रिय हो जाएंगे? जिसने छोड़ा है आज तक उसे निष्क्रिय देखा गया है? महावीर निष्क्रिय थे? बुद्ध निष्क्रिय थे? उनसे ज्यादा क्रियाशील और कौन होगा? बुद्ध मरने की सूचना कर चुके थे कि आज मैं मर जाऊंगा और उन्होंने अपने भिक्षुओं से पूछा कि तुम्हें कुछ पूछना हो अंतिम बात तो पूछ लो, मेरी आखिरी घड़ी आ गई और मैं विदा हो जाऊंगा।

भिक्षुओं ने... उनकी आंखों में आंसू थे और उनसे कुछ भी पूछते न बन सका। और बुद्ध एक वृक्ष की ओट में चले गए और आंख बंद करके बैठ गए, ताकि वे भीतर डूब सकें और शांति से विलीन हो जाएं। और तभी एक आदमी गांव से भागा हुआ पहुंचा और उसने कहा कि मुझे कुछ पूछना है बुद्ध से। तो भिक्षुओं ने कहाः अब तो वे विदा भी ले चुके, अब तो वे आंखें भी बंद कर चुके और वे पूछ भी चुके कि तुम्हें कुछ पूछना तो नहीं है, तो हम तो इनकार कर दिए, अब असंभव है।

लेकिन वह आदमी चिल्लाया, अगर यह अब असंभव है तो फिर कब संभव होगा? वे तो विलीन हो जाएंगे, फिर मैं किससे पूछूंगा? तो बुद्ध ने आंख खोल दी और कहाः उस आदमी को वापस मत लौटाओ। कहीं मेरे ऊपर यह जुर्म न लगे बाद में कि मैं जिंदा था और मेरे द्वार से कोई प्यासा लौट गया, उस आदमी को ले आओ।

यह आदमी निष्क्रिय है? महावीर भाग रहे हैं, नंगे और पैदल, गांव-गांव, गांव-गांव। किसलिए दौड़ रहे हैं? कोई इलेक्शन जीतना है? किसलिए भाग रहे हैं? कोई धन इकट्ठा करना है? किसलिए दौड़ रहे हैं? कुछ भीतर पाया है जिसे बांटना है। वह भीतर कोई झरना है जो बंट जाना चाहता है। कोई सुगंध है फूल के भीतर। जो फूल खिल जाता है सुगंध बंट जाती है। निष्क्रिय कौन कहेगा? क्राइस्ट को सूली पर लटका दिया और कहा कि तुम्हें कुछ अंतिम बात कहनी हो तो कहो, तो क्राइस्ट ने कहा, हे परमात्मा! इन सबको माफ कर देना, क्योंकि ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं। तभी, और तभी उनके शिष्यों ने समझा कि यह वही आदमी है जिसने कहा थाः जो बाएं गाल पर चाटा मारे तो तुम दायां उसके सामने कर देना। इसने कहा ही नहीं था, यह आदमी कर भी रहा है। जो लोग इसे सूली पर चढ़ा रहे हैं उनके लिए भगवान से प्रार्थना कर रहा है कि इन्हें माफ कर देना, ये नहीं जानते कि ये क्या कर रहे हैं। मरने की आखिरी घड़ी में भी यह आदमी निष्क्रिय है? कौन कहेगा?

सुकरात को जहर दिया जा रहा था। जो आदमी हाथ में प्याला लेकर जहर का देने गया, उसका हाथ कंप रहा था। स्वाभाविक था, सुकरात जैसे प्यारे आदमी को जहर देना। लेकिन जल्लाद के ऊपर जिम्मेवारी थी, नौकरी थी। उसका मन तो दुखी हो रहा था, लेकिन उसका हाथ कंप रहा था। जहर की प्याली कंपती थी। सुकरात ने उससे क्या कहा? कि मेरे मित्र हाथ क्यों कंपता है तुम्हारा? हाथ नहीं कंपना चाहिए। जो भी हम काम करें उसमें हाथ नहीं कंपना चाहिए। वह बोलाः मेरा हृदय दुखी है, मैं तुम्हारी मृत्यु का कारण बन रहा हूं। सुकरात ने कहाः तुम पागल हो, तुम्हें यह पता ही नहीं है कि सुकरात मरेगा नहीं, इसलिए बेफिकर हो जाओ। सुकरात मरेगा नहीं; और तुम्हारे जहर से जो मर जाएगा वह सुकरात नहीं है। तुम बेफिकर हो जाओ, हाथ को मत कंपाओ, हाथ को निष्कंप हो जाने दो, दुखी भी मत होओ, आंखों के आंसू पोंछ लो। यह आदमी जो खुद के मरते वक्त जहर का प्याला पी गया। उसके मित्र इकट्ठे थे, सुकरात ने कहाः कुछ पूछना हो तो पूछ लो। वे बोले कि हम क्या पूछें, आप जहर पी लिए हैं। सुकरात ने कहाः थोड़ा वक्त लग जाएगा, अभी मेरे पैर ठंडे होने शुरू हो गए हैं। फिर और ऊपर के पैर ठंडे हो जाएंगे, फिर हाथ ठंडे हो जाएंगे। लेकिन अभी थोड़ी देर मैं बोल सकूंगा। तो जब तक मैं बोल सकूं अगर मुझसे कुछ तुम्हारा हित हो सकता हो तो हो लेने दो। अभी थोड़ी देर है मेरे मरने में। अभी यह शरीर मरेगा, इसमें थोड़ा समय लगेगा, तो जब तक मैं हूं तब तक कुछ करूं। इस आदमी को कौन निष्क्रिय कहेगा। आज तक कौन निष्क्रिय हुआ है।

सत्य से बड़ी और कोई सक्रियता नहीं। और जो सक्रियता शांति से पैदा होती है वही सक्रियता शुभ है। जो अशांति से पैदा होती है वह अशुभ है। हम सारे लोग सक्रिय हैं, लेकिन चित्त अशांत है। अशांति से जो सक्रियता पैदा होगी वह खतरनाक है। उससे दुनिया में दुख बढ़ेगा, पीड़ा बढ़ेगी, हिंसा बढ़ेगी। शांति से जो सक्रियता आती है उसी से जीवन में शुभ का जन्म होता है, मंगल का जन्म होता है।

लेकिन हम किए बिना पूछते हैंः क्या होगा? हम पूछते हैं कि अगर हमने सारा सीखा हुआ ज्ञान छोड़ दिया तो हम निष्क्रिय हो जाएंगे?

थोड़ा छोड़ कर देखें, क्योंकि किसी आदमी को हम तैरने के लिए सिखाने को कहें, वह कहे, मैं तो पानी में गिरूंगा तो डूब जाऊंगा। क्योंकि पानी में कोई भी गिरता है तो डूब जाता है। तब भी हम उसे कहेंगे, थोड़ा तैर कर देखें, तैरने वाला नहीं डूबता है। लेकिन वह कहेगा, जब तक मैं तैरना न सीख लूं तब तक मैं पानी में उतरूंगा नहीं। तो बिना पानी में उतरे कोई तैरना कभी सीख नहीं सकता। और जो तैरना नहीं जानता वह कहे कि जब तक मैं सीख न लूं तब तक मैं उतरूंगा नहीं, क्योंकि पानी में जो उतरता है डूब जाता है। फिर तो बड़ी कठिनाई हो गई। पहले कदम तो बिना तैरना सीखे पानी में रखने पड़ेंगे, तो ही तैरना सीखा जा सकता है। अधिक लोग इसी भय से कि कहीं डूब न जाएं तैरने के सुख से ही वंचित रह जाते हैं। और क्या आपको पता है जो बीच मझधार में डूबता है वह उस आदमी से बेहतर है जो किनारे पर बैठा हुआ बचा रह जाता है। क्योंकि बीच मझधार में डूबने वाला भी कहीं पहुंचता है। कम से कम साहस तो किया। लेकिन जो किनारे पर ही बैठा रह जाता है वह तो कहीं भी नहीं पहुंचता।

कबीर ने कहा हैः मैं बौरी खोजन गई रहे किनारे बैठ। मैं ऐसा पागल, मैं खोजने गया तो मैं किनारे पर ही बैठ कर रह गया। और पाया तो उन्होंने जो पानी में गहरे पैठ गए, जो पानी में गहरे डूब गए। साहस तो करना होगा। और कुछ बातें हैं जो प्रयोग करके ही जानी जा सकती हैं। लोगों को यही खयाल है कि हम शांत हो जाएंगे तो निष्क्रिय हो जाएंगे। क्योंकि हमारी सारी क्रियाशीलता अशांति से निकलती है। लोगों का यही खयाल है कि अगर हम शांत हो गए तो फिर हम कुछ न करेंगे। लेकिन मैं आपको कहता हूंः संसार में जिन्होंने भी कुछ किया है वे शांत लोग थे। और अशांत लोग अगर निष्क्रिय ही होते तो बहुत अच्छा था। वे कुछ न करते तो दुनिया जैसी है उससे बेहतर होती।

नादिरशाह हिंदुस्तान की तरफ आता था। तो उसने एक ज्योतिषी को पूछा एक गांव में। वह बहुत सोया था--बारह-बारह, चौदह-चौदह घंटे सोया रहता था। उसने एक ज्योतिषी को पूछा कि मैं सुनता हूं, लोग कहते हैं, बहुत सोना बुरा है। मैं बहुत सोता हूं, क्या यह बुरी बात है? उस ज्योतिषी ने कहाः आप चौबीस घंटे सोए रहें और भी अच्छा। उसने पूछा, क्यों? तो उस ज्योतिषी ने कहाः कुछ लोग हैं जिनका जागना अच्छा होता है, कुछ लोग हैं जिनका सोना अच्छा होता है। आप जैसे आदमी सोए रहें तो बहुत अच्छा है, कम से कम दुनिया में उपद्रव कम होंगे। तो उस ज्योतिषी ने कहाः गलत है यह बात कि सभी का ज्यादा सोना बुरा होता है। अच्छे आदमी का जागना अच्छा होता है, बुरे आदमी का सोना अच्छा होता है।

अशांत आदमी निष्क्रिय हो जाए तो अच्छा। उसकी निष्क्रियता शुभ है। अशांत आदमी की सक्रियता खतरनाक है। वह पागल आदमी की सक्रियता है। वह जो भी करेगा उससे खतरा बढ़ेगा दुनिया को। उसका हर किया हुआ उपद्रव बन जाएगा। लेकिन अशांत आदमी बहुत डरता है कि कहीं मैं निष्क्रिय न हो जाऊं। जब कि अशांत आदमी निष्क्रय हो जाए तो दुनिया अच्छी हो जाए। यह जितना हम उपद्रव देख रहे हैं, दुनिया में आए दिन युद्ध देख रहे हैं, यह किनकी कृपा है, यह अशांत और सक्रिय लोगों की कृपा है। जितना अशांत आदमी हो और जितना सक्रिय हो वह उतना बड़ा पॉलिटीशियन हो जाता है, उतना बड़ा राजनीतिज्ञ हो जाता है।

अशांति और सक्रियता मिल जाएं तो आप राजनीतिज्ञ हो ही जाएंगे, बचना मुश्किल है। क्योंकि अशांत आदमी की सक्रियता के लिए सबसे बड़ा द्वार राजनीति का है। फिर वह चढ़ता जाता है। जितना सक्रिय होता है और जितना अशांत होता है उतना ऊपर चढ़ता जाता है। वह राष्ट्रपति बन जाता है, प्रधानमंत्री बन जाता है और न मालूम क्या-क्या बन जाता है। फिर उसके हाथ में ताकत होती है और सक्रियता होती है और चित्त अशांत होता है। फिर वह युद्ध में घसीटता है मुल्कों को। फिर पाकिस्तान का नाम लेता है, हिंदुस्तान का नाम लेता है, चीन का। ये सब बहाने हैं। दुनिया में हर मुल्क में पागल हैं और सब पागल राजनीतिज्ञ हो गए हैं। फिर

वे बहाने कुछ भी लें, इससे कोई भी फर्क नहीं पड़ता। उनका चित्त अशांत है और बड़ा सक्रिय है। एक्टिविटी ज्यादा है और चित्त बिल्कुल शांत नहीं है, तो क्या करेंगे वे? वे जो भी करेंगे उससे खतरा बढ़ेगा।

दुनिया को दो युद्धों में खींच चुके हैं, तीसरे युद्ध में खींचने की तैयारी है। क्या आपको पता है, पांच हजार साल में पंद्रह हजार युद्ध में खींचा है राजनीतिज्ञों ने दुनिया को। पंद्रह हजार युद्ध! कल्पना से भी मन घबड़ाता है! कल्पना से भी! पांच हजार साल के इतिहास में पंद्रह हजार युद्ध, हर साल तीन युद्ध! अब तक दुनिया के पूरे इतिहास में केवल तीन सौ वर्ष का वक्त है जब युद्ध नहीं हुए, बाकी वक्त युद्ध चलता ही रहा कहीं न कहीं। तीन सौ वर्ष इकट्ठा नहीं, कभी एक दिन, कभी दो दिन, कभी चार दिन युद्ध बंद रहा, नहीं तो युद्ध चल ही रहा है जमीन के किसी न किसी कोने पर। ऐसा केवल तीन सौ वर्ष के टुकड़े हैं, छोटे-छोटे जोड़ने से तीन सौ वर्ष बन जाते हैं, पांच हजार वर्ष में। चार हजार सात सौ वर्ष, वे युद्ध में बीते हैं। हम लड़ते ही रहे हैं रोज, लड़ते ही रहे हैं रोज, लड़ते ही रहे हैं रोज। और ये भी तीन सौ वर्ष शांति के वर्ष नहीं हैं, यह नये युद्ध की तैयारी का वक्त है, नहीं तो नये युद्ध की तैयारी कब करेंगे!

तो दुनिया का इतिहास दो हिस्सों में बांट सकते हैं--युद्ध का समय और युद्ध की तैयारी का समय। शांति आज तक मनुष्य ने नहीं जानी; क्योंकि अशांत आदमी सक्रिय है। तो मैं तो कहता हूं, अगर आप निष्क्रिय हो गए तो बहुत शुभ है। भगवान करे आप निष्क्रिय हो जाएं। लेकिन नहीं, शांति अपनी सक्रियता लाती है। अशांति की अपनी सक्रियता है, शांति की अपनी सक्रियता है। अशांति की सक्रियता विक्षिप्तता है, मैडनेस है। शांति की सक्रियता क्रिएटिव होती है, सृजनात्मक होती है। अशांति की सक्रियता डिस्ट्रक्टिव, हिंसा है, तोड़-फोड़ है, विनाश है। शांति की सक्रियता सृजनात्मक है, निर्माण करती है, कुछ बनाती है, कुछ विकसित करती है, किसी बीज को पौधे तक पहुंचाती है, किसी पौधे को सुगंध तक पहुंचाती है, कुछ निर्मित करती है। दुनिया में शांत और सक्रिय लोग चाहिए। अभी अशांत और सक्रिय लोग हैं। लेकिन इन सभी अशांत लोगों को यह भय लगता है कि कहीं हम शांत हो गए, हमारी सक्रियता चली जाएगी। निश्चित ही, यह सक्रियता चली जाएगी जो अभी है। लेकिन यह चली जानी चाहिए। इसके जाने पर ही एक नई सक्रियता का जन्म होता है। वह नई सक्रियता ही धार्मिक सक्रियता है। तब मनुष्य कुछ निर्मित करता है, कुछ बनाता है।

बुद्ध एक पहाड़ पर गए। वहां एक हत्यारे ने उन्हें पकड़ लिया और उस हत्यारे ने कहा कि मैं आपकी गर्दन काटूंगा। मैंने तय किया है कि मैं एक हजार लोगों की गर्दन काटूंगा। मैं नौ सौ निन्यानबे लोगों को काट चुका हूं, आप हजारवें हैं। लेकिन भिक्षु देख कर मुझे तुम पर दया आती है। तुम्हारा निर्दोष चेहरा देख कर मुझे भी दया आती है, तुम लौट जाओ। अगर तुम वापस लौट गए तो मैं तुम्हें छोड़ दूंगा। लेकिन बुद्ध ने कहाः जीवन में क्या कोई कभी वापस लौट सकता है? पीछे लौटने का कोई रास्ता कहां है। बस आगे ही जा सकते हैं, पीछे कैसे लौटेंगे। इसलिए चाहे तुम काटो, चाहे कुछ, मैं आगे आता हूं।

वह आदमी बहुत हैरान हुआ! बुद्ध उसके सामने आकर खड़े हो गए। उसने अपना फरसा उठाया, बुद्ध ने कहाः इसके पहले कि तुम मेरी गर्दन काटो, क्या मरते हुए आदमी की एक इच्छा पूरी कर दोगे?

उसने कहाः क्या?

बुद्ध ने कहाः यह सामने वृक्ष लगा है, क्या उसमें से एक छोटी सी शाखा काट कर मुझे दे दोगे?

उसने अपने फरसे से एक शाखा काट दी और बुद्ध को दे दी। बुद्ध ने कहाः आधा काम तुमने कर दिया, आधा और कर दो, इस शाखा को वापस जोड़ दो।

वह आदमी बोलाः बड़े पागल मालूम होते हो, तोड़ने तक तो ठीक था, जोड़ना तो बड़ा असंभव है।

तो बुद्ध ने कहाः तोड़ तो बच्चे भी सकते थे। कमजोर, काहिल और पागल भी तोड़ सकते थे, इसमें बहादुरी क्या है। इसमें तुम्हारी खुबी क्या है? लेकिन अगर जोड़ सको, तो समझना कि तुम पहली दफा कुछ कर रहे हो। अब तुम मेरी गर्दन काट दो।

उस आदमी का फरसा नीचे गिर गया। उसने कहाः गर्दन कैसे काटूं, एक भी गर्दन जोड़ नहीं सकता हूं।

तो बुद्ध ने कहाः पछताओ उन गर्दनों पर जो काटी हैं और शेष जीवन इसमें लगाओ कि कुछ गर्दनें जोड़ सको। क्योंकि तुम्हारे होने की खूबी वहां है जहां तुम जोड़ते और बनाते हो। तोड़ना तो कोई भी कर सकता है।

अशांत आदमी तोड़ता है, शांत आदमी जोड़ता है। और तोड़ने की सक्रियता जब जाएगी तभी जोड़ने वाली सक्रियता पैदा हो सकती है, उसके पहले वह पैदा नहीं हो सकती। कोई आदमी अपना बगीचा बनाता है तो पहले जमीन में से घास-पात निकाल कर फेंक देता है, फिजूल जड़ें उखाड़ कर फेंक देता है, तब नये बीज बोता है। क्योंकि अगर पुरानी जड़ें और घास-पात वहां रहा, तो नये बीज डूब जाएंगे, वे कहीं फल भी नहीं सकेंगे, वे विकसित भी नहीं हो सकेंगे। मन को पुरानी सक्रियता से हटा लेना होगा तभी नई सक्रियता का जन्म हो सकता है। तो मैं तो कहता हूं, यह अच्छा है कि मन आपका निष्क्रिय हो जाए।

तीसरा प्रवचन

चित्त की सरलता

मेरे प्रिय आत्मन्!

एक अंधेरी रात में सौ ऊंटों का काफिला एक सराय में आकर ठहरा। कोई आधी रात बीत गई थी। काफिले के लोग थके हुए थे और उनका ठहर जाना जरूरी था। एक छोटी सी सराय में वे मेहमान गए। जब काफिले के लोग अपने ऊंटों को बांधने गए, उन्होंने खूंटियां गाड़ीं, रस्सियां बांधी, तो पाया कि सौ ऊंट हैं और केवल निन्यानवें को बांधने की व्यवस्था है। एक खूंटी और एक ऊंट की रस्सी कहीं राह में खो गई थी। उस ऊंट को खुला हुआ छोड़ना खतरनाक था। रात में वह कहीं भटक भी सकता था। तो वे सराय के मालिक के पास गए और उन्होंने कहा, हमारी एक खूंटी और रस्सियां खो गई हैं, निन्यानवें ऊंट बांध दिए गए, एक ऊंट बिना बंधा है। हम क्या करें? आपके पास खूंटी और रस्सी हो तो दे दें।

वह सराय बड़ी छोटी थी और उनके पास कोई भी सामान नहीं था। लेकिन उस बूढ़े आदमी ने कहाः तुम एक काम करो। जाओ, खूंटी गाड़ दो, रस्सी बांध दो और ऊंट को कहो कि बैठ जाओ। लेकिन उन लोगों ने कहाः वह तो हम समझे, लेकिन खूंटी कहां है, रस्सी कहां है? उस बूढ़े आदमी ने कहाः झूठी खूंटी ठोंक दो, लेकिन ठोकना जरूर। और झूठी रस्सी गले में बांध दो, लेकिन बांधना जरूर। ऊंट को प्रतीत हो जाए कि खूंटी गाड़ दी गई है और रस्सी बांध दी गई है। तब तुम उससे कहना, बैठो और आराम करो। उन्हें हंसी आई यह बात जान कर, क्योंकि झूठी खूंटी और झूठी रस्सी से कहीं ऊंट बांधे गए थे? लेकिन मजबूरी थी, कोई रास्ता भी न था। आधी रात बीत गई और अब सोने का इंतजाम करना था। उस बूढ़े आदमी की सलाह पर उन्हें काम करना पड़ा और वे गए और उन्होंने हथौड़ियों से उस खूंटी को ठोंका, जो कि थी ही नहीं और उन्होंने ऊंट के गले में हाथ डाला और उसको रस्सी से बांधा जो कि मौजूद नहीं थी। और उन्होंने ऊंट से कहाः बैठ जाओ। और सारे ऊंट बैठ गए थे, वह ऊंट भी बैठ गया और सो गया। वे लोग बड़े हैरान हुए। सोचा कि कोई मंत्र मालूम पड़ता है, इस बूढ़े आदमी के पास है।

फिर सुबह हुई और काफिला अपनी यात्रा पर निकलने को तैयार होने लगा। काफिले के मालिक ने सभी ऊंटों की खूंटियां निकाल लीं और रस्सियां खोल दीं, लेकिन सौवां ऊंट उठने को राजी नहीं हुआ। वे बड़े परेशान हुए। उसकी न तो खूंटी थी और न रस्सी थी, लेकिन वह ऊंट उठने को राजी नहीं था। उन्होंने जाकर उस बूढ़े को कहा कि तुमने कौन-सा मंत्र कर दिया है? कृपा करो, अपना मंत्र वापस ले लो, हमारे ऊंट को उठाओ। उस बूढ़े आदमी ने कहाः जाओ रस्सी खोलो और खूंटी उखाड़ो। उन्होंने कहाः लेकिन कौन सी खूंटी उखाड़ें, कौन सी रस्सी खोलें? उस बूढ़े आदमी ने कहाः जो रस्सी रात बांधी थी, उसे ही खोलो और जो खूंटी रात गाड़ी थी उसे ही उखाड़ो। उन्हें जाकर मजबूरी में यही करना पड़ा। वह खूंटी उखाड़नी पड़ी, जो कि गड़ी नहीं थी और ऊंट के गले से वे रस्सियां खोलनी पड़ीं जो कि बंधी नहीं थीं। रस्सियों के खुलते, खूंटी के उखड़ते ऊंट उठ कर खड़ा हो गया और चलने को राजी हो गया। उन्होंने उस बूढ़े से कहाः तुमने कोई मंत्र किया था? उस बूढ़े ने कहाः नहीं। लेकिन ऊंट के मन को यह खयाल हो जाए कि खूंटी है और रस्सी बंधी है, तो काम पूरा हो जाता है।

खूंटी नहीं बांधती और न रस्सी बांधती है, मन बांध लेता है।

कल मैंने कुछ थोड़ी-सी बातें आपसे कहीं। मनुष्य का मन भी उन खूंटियों में बंधा है जो हैं ही नहीं और मनुष्य के मन पर भी वे रस्सियां बंधी हैं जो बिल्कुल झूठी हैं, जिनका कोई अस्तित्व नहीं है। लेकिन निरंतर-निरंतर शिक्षा से, निरंतर-निरंतर पुनरुक्ति से कोई भी रस्सी सच्ची हो जाती है और कोई भी खूंटी वास्तविक बन जाती है। और मन उनसे बंध जाए तो अमुक्त हो जाता है, परतंत्र हो जाता है। और ऐसे हजार-हजार विश्वासों

में हमने अपने को बांधा है। सत्य की खोज में उन खूंटियों को उखाड़ देना होगा, और उन रस्सियों को भी, जो कि केवल कल्पना से निर्मित हैं। हमारी धारणा ही, हमारे विश्वास, हमारी मान्यताएं अत्यंत काल्पनिक और झूठी हैं। और जो व्यक्ति उन्हीं मान्यताओं और कल्पनाओं में घिरा रहता है वह उस ऊंट की तरह है जो अस्तित्वहीन खूंटी से, और जिन रस्सियों का कोई होना नहीं है, उनसे बंधा था। मैं आपसे कहूं, यह पहली शर्त है, यह पहली भूमिका है कि हम अपने मन को सब भांति से स्वतंत्र कर लें--परंपरा से, धारणा से, समाज से, भीड़ से, समूह से।

क्या इसका यह अर्थ है कि हमें कुछ तोड़ना पड़ेगा? क्या इसका यह अर्थ है कि हमें सच में कोई जंजीरें तोड़नी पड़ेंगी। जंजीरें होतीं तो तोड़नी पड़तीं। केवल हमारी मान्यता में उनका होना है। हमारे विश्वास में उनकी ताकत है। हमारा विचार जग जाए तो न कोई बंधन है न कोई परतंत्रता है। किसने आपको हिंदू की तरह बांधा हुआ है? किसने आपको मुसलमान की तरह बांधा हुआ है? किसने मुझे ईसाई की तरह बांध लिया है? मेरी कल्पना और मेरी धारणा ने। कौन मुझे बांधे हुए है? एक भारतीय की तरह मुझे कौन बांधे हुए है और एक पाकिस्तानी की तरह मुझे कौन बांधे हुए है? मेरी धारणा। अन्यथा जमीन कहीं भी कटी हुई नहीं है और आदमी कहीं भी विभाजित नहीं है और चेतना और चेतना के बीच में कोई दीवाल नहीं है। लेकिन हमारी मान्यताएं हैं, हमारे विश्वास हैं। इनसे स्वतंत्र हो जाना जरूरी है।

इनसे स्वतंत्र वही हो सकता है जिसे इस बात का अहसास हो कि जो भी मेरा ज्ञान है वह उधार है, बासा है, दूसरों से लिया गया है, बॉरोड है। जो भी मैं ईश्वर के संबंध में जानता हूं या सत्य के, या आत्मा के, इस सबका सब मेरा अपना नहीं है। किसी और का है, वही बांधने वाला बन जाता है। और जो अपना है, वह मुक्त कर देता है। स्वयं का बोध मुक्तिदायी है, दूसरों का ज्ञान का बंधन है। यह मैंने कल आपसे कहा। आज दूसरी सी.ढ़ी के संबंध में आपसे बात करूंगा।

स्वतंत्रता पहली सी.ढ़ी है। मन सब भांति स्वतंत्र होना चाहिए। क्योंकि जो बंधा है कहीं, वह खोज के लिए मुक्त नहीं है और जिसने कोई धारण कर ली है सत्य की, वह सत्य को जानने में समर्थ नहीं हो सकेगा। सत्य के निकट जाने के लिए मन धारणा-शून्य होना चाहिए। मन की कोई धाराणा नहीं होनी चाहिए, तो ही उस निर्दोष, इनोसेंस की हालत में हम सत्य की खोज में अग्रसर होते हैं। और तभी, उस निष्पक्ष चित्त की दशा में... क्योंकि जो पक्ष से बंधा है, जिसका कोई पक्षपात है, जिसकी कोई प्रेजुडिस है, जिसका कोई मत है, जिसका कोई दर्शन है, जिसकी कोई फिलोसफी है, जिसका कोई धर्म है, जो कहीं बंधा है, किसी भी पक्ष में, वह सत्य को जानने से डरता है। वह यह चाहता है कि मेरा पक्ष ही सत्य सिद्ध हो जाए। वह यह नहीं चाहता कि मैं सत्य को जानूं। क्योंकि हो सकता है, सत्य को जानने में, मेरे पक्ष को मुझे खोना पड़े। पक्ष को न खोऊं, यह सत्य को जानने में बाधा बन जाता है। फिर हम आंख बंद कर के जीने लगते हैं, और जिसे हम सत्य मानते रहे हैं, उसी को सत्य दोहराएं चले जाते हैं। इसलिए पहली शर्त है, सभी पक्षपात से मन मुक्त हो।

दूसरी शर्त क्या है? दूसरी शर्त है, चित्त सरल हो। लेकिन सरलता का क्या अर्थ है? क्या कोई आदमी दो बार भोजन न करे और एक बार भोजन करे तो सरल हो जाएगा? सरलता एक बार भोजन करने से पैदा हो जाएगी? या कि कोई आदमी उपवास करे तो सरल हो जाएगा? या कि कोई आदमी वस्त्र छोड़ दे और एक लंगोटी लगा ले तो सरल हो जाएगा? या कि नग्न खड़ा हो जाए तो सरल हो जाएगा?

सरलता का संबंध न तो भोजन से है और न वस्त्रों से है। सरलता का संबंध और गहरा है; चित्त से है, मन से है। और मन को न बदले और कपड़ों को बदल ले तो सरल तो नहीं होता, और भी जटिल हो जाता है। और भी कॉम्प्लेक्सिटी पैदा हो जाती है। भीतर तो मन जटिल होता है, बाहर वस्त्र बदले जाते हैं। वस्त्र दूसरों को धोखा दें, यह तो ठीक है, वस्त्र खुद को भी धोखा देने लगते हैं। दूसरों को दिया गया धोखा खुद पर लौट आता है

और ऐसा प्रतीत होता है, सब ठीक हो गया है, सब सरल और शांत हो गया है। लेकिन चित्त के रास्ते बड़े जटिल हैं।

एक संन्यासी के पास मैं था। उन्होंने मुझसे कहाः मैंने लाखों रुपयों पर लात मार दी। एक बार मैंने सुना, दो बार मैंने सुना, तीन बार मैंने सुना। मैं हैरान हुआ। मैंने उनसे पूछाः यह लात आपने कब मारी? उन्होंने कहाः कोई तीस वर्ष हो गए। मैंने कहाः अगर बुरा न मानें तो एक बात मैं निवेदन करूं, लात ठीक से लग नहीं पाई अन्यथा तीस वर्षों तक इसकी याद न हो सकती थी। लाखों रुपयों पर लात मार दी है, यह बात तीस वर्षों तक याद रखने की कौन-सी जरूरत है? इस बोझ को सिर पर ढोने का कौन सा कारण है? इस खयाल को पकड़े रहने की क्या आवश्यकता है? लात ठीक से लग नहीं पाई। लाखों रुपए तो छूट गए, लेकिन मन सरल नहीं हुआ। मन और जटिल हो गया। जब लाखों रुपए पास में रहे होंगे तब भी लगता रहा होगा, मेरे पास लाखों रुपए हैं। मैं कुछ हूं। वह स्वयं बड़ा होने का, कुछ होने का खयाल रहा। फिर लाखों रुपयों पर लात मार दी। ऊपर से दिखा कि क्रांति हो गई, सब बदल गया, लेकिन भीतर तब से यह लग रहा है कि मैंने लाखों रुपयों पर लात मार दी है, मैं कुछ हूं। जब लाखों रुपए थे तब लगता था, मेरे पास लाखों रुपए हैं, मैं कुछ हूं। और अब यह लग रहा है तीस वर्षों से कि मैं कुछ हूं क्योंकि मैंने लाखों रुपये पर लात मार दी। बात वहीं की वहीं है। तीस वर्ष फिजूल हो गए, उनका कोई अर्थ नहीं हुआ। और धोखा, आत्मवंचना पैदा हो गई। चित्त जहां के तहां।

चित्त के रास्ते बहुत अनूठे हैं। आप बहुत अच्छे वस्त्र पहन कर निकलते हैं सड़कों पर और चाहते हैं कि लोग देखें कि मैंने कैसे वस्त्र पहने हुए हैं। यह भी हो सकता है, एक दिन आप वस्त्र छोड़ दें और नग्न होकर रास्तों पर निकलें और फिर भी आपका मन कहे कि लोग देख लें कि मैं नंगा हो गया हूं--कोई फर्क नहीं पड़ा। बात वहीं के वहीं है। वह एक्जीबीशन, वह प्रदर्शन जो वस्त्रों का था, अब नग्नता का हो गया। अंतर कहां है? कल आपने दिखाया होगा लोगों को कि देखो मेरा मकान सबसे बड़ा है। इसकी चोटी को और कोई मकान नहीं छूता है इस गांव में। फिर आज फकीर हो गए, और कहने लगे कि मेरा त्याग सबसे बड़ा है। क्या फर्क पड़ा? कौन सा भेद पड़ा? चित्त वहीं के वहीं है। चित्त इस भांति सरल नहीं होता है। चित्त की सरलता कोई और ही बात है। न तो कपड़ों के बदलने से, न तो धन के छोड़ देने से, न घर को छोड़ देने से, न गांव को छोड़ देने से, न भाग जाने से, कोई चित्त सरल नहीं होता। ये सब तो एस्केप, सब पलायन है।

जीवन को छोड़ कर भाग जाने से कभी कोई सरल हुआ है? बल्कि इस छोड़ ने से एक नये प्रकार का अहंकार और मन को, और मन को पकड़ लेता है। दो संन्यासी मिल नहीं सकते आपस में। कौन किसको नमस्कार करेगा? और कौन कहां बैठेगा? दो साधु मिल नहीं सकते आपस में। कौन किससे बड़ा है, कौन किससे छोटा? ये चित्त सरल कैसे हुए? यह कैसी सरलता है? यह कैसी सिम्प्लीसिटी है? ऊपर से सरलता ओ.ढ़ ली जा सकती है। सरलता का अभ्यास कर लिया जा सकता है, लेकिन हृदय इससे सरल नहीं होता। बल्कि जो लोग सरलता को जितना ओ.ढ़ लेते हैं, उतने ही जटिल हो जाते हैं, उतने ही कठिन हो जाते है, उतना ही जीवन और उलझ जाता है। जीवन सुलझता नहीं।

एक संन्यासी का आगमन एक राजधानी में होने को था। नग्न फकीर था, दूर-दूर तक उसकी कीर्ति और प्रशंसा थी, दूर-दूर तक उसकी सुगंध फैल गई थी। राजधानी में वह आया। राजधानी के सम्राट ने उसके स्वागत का आयोजन किया। आयोजन के पीछे एक कारण था। संन्यासी और सम्राट बचपन में एक ही स्कूल में प.ढ़े थे। शायद सम्राट तो इसे याद रखे था, हो सकता है संन्यासी इसे भूल भी गया हो। सम्राट ने यह सोच कर कि आता है मेरा मित्र--तपस्वी है, त्यागी है, संन्यासी है, उसका स्वागत करूं--सारी राजधानी को सजाया गया। सारी राजधानी में दीवाली, दीये, सारे गांव में रोशनी की गई। रास्तों पर कालीन डाल दिए गए और सुगंधियां कर दी गई और सारे गांव को कहा गया कि जलसा मनाओ। मेरा एक परम मित्र त्यागी हो कर आ रहा है, उसका मैं

स्वागत करता हूं। संन्यासी रास्ते में था, राहगीरों ने उसे खबर दी कि तुम जिस राजधानी की तरफ जा रहे हो, वह सजाई जा रही है। रास्तों पर बहुमूल्य कालीन बिछाए जा रहे हैं, गांवों को रंग-रौनक दी जा रही है। वह सम्राट अपनी दौलत तुम्हें दिखाना चाहता है। वह तुम्हें दिखाना चाहता है कि तुम क्या हो? एक नंगे फकीर! और मैं क्या हूं? सारी जमीन का मालिक! संन्यासी हंसा और उसने कहाः कोई फिक्र नहीं। अगर वह अपनी दौलत दिखाना चाहता है तो हम भी देख लेंगे।

सांझ होते-होते संन्यासी आया। सम्राट नगर द्वार पर गया। लोग देख कर हैरान हुए। नग्न संन्यासी, घुटनों तक कीचड़ से भरे हुए पैर! बड़ी आश्चर्य की बात थी, वर्षा के दिन न थे। रास्ते सूखे पड़े थे, पानी की कठिनाई थी। कीचड़ कहां मिल गई? घुटने तक पैर कीचड़ से कैसे भर गए? महल में पहुंच कर सम्राट ने उससे पूछाः कोई तकलीफ हुई है मार्ग में, पैर कीचड़ से भरे क्यों हैं? वह संन्यासी बोलाः तुम क्या समझते हो, अपने आपको? अगर तुम अपनी दौलत दिखाना चाहते हो रास्ते पर कालीन बिछा कर, तो हम भी संन्यासी हैं। हम कीचड़ भरे पैर से चल सकते हैं। हम भी फकीर हैं, क्या समझा है तूने हमें? हम दो कौड़ी नहीं समझते तुम्हारे इन कीमती कालीनों को। हम कीचड़ भरे पैर से चल सकते हैं। वह सम्राट हंसने लगा; उस संन्यासी को गले लगा लिया और उसने कहाः मैं तो सोचता था, तुम बदल गए होगे, लेकिन कोई फर्क नहीं हुआ, हम एक ही जगह खड़े हैं। मेरा अहंकार है तो तुम्हारा अपना भी, अपना अहंकार है।

चित्त ऐसे सरल नहीं होता। फिर कैसे चित्त सरल होता है? फिर चित्त कैसे सरल होता है? कुछ और रास्ता है, उसकी मैं आपसे बात करूं। इसके पहले कि उसकी मैं आपसे बात करूं, इस संबंध में थोड़ा समझ लेना जरूरी होगा कि चित्त इतना जटिल क्यों हो गया है? तो शायद हम यह भी समझ जाएं कि चित्त सरल कैसे हो सकता है। यह चित्त इतना जटिल क्यों हो गया है? कौन से कारण हैं इसके पीछे?

दो कारण हैं--पहला कारण, आदर्शों के कारण चित्त जटिल हो गया है। बच्चा पैदा भी नहीं हो पाता कि हम आदर्श का जहर उसे पिलाना शुरू कर देते हैं। हम बच्चे से कहने लगते हैं, राम जैसे बनो, कृष्ण जैसे बनो, बुद्ध जैसे बनो, महावीर जैसे बनो। और अगर पुरानी तस्वीरें झूठी पड़ गई हैं, या पुरानी पड़ गई हैं तो नई तस्वीरें खोज लेते हैं, विवेकानंद जैसे बनो, गांधी जैसे बनो। लेकिन एक बात तय है, किसी जैसे बनो। और बड़े आश्चर्य की बात है आज तक जमीन पर एक जैसा दूसरा आदमी पैदा नहीं हुआ और न कभी होगा। लेकिन हम सिखाते हैं, किसी जैसे बनो।

यह शिक्षा एकदम झूठी और खतरनाक है क्योंकि जो आदमी दूसरों जैसे बनने की कोशिश में पड़ जाता है, उसकी सारी सरलता नष्ट हो जाती है, चित्त जटिल हो जाता है। जटिल हो जाना स्वाभाविक है। उलझ जाना स्वाभाविक है। हर मनुष्य खुद होने को पैदा हुआ है। किसी और जैसा होने को कोई पैदा नहीं हुआ है। और कोई लाख कोशिश करे तो किसी जैसा न कोई हो सकता है, न होने की कोई संभावना है। और अब नहीं हो पाता कोई दूसरे जैसा तो इस चेष्टा में कि मैं किसी और जैसा हो जाऊं, दो बातें हो जाती हैं। किसी और जैसा होना तो मुश्किल है, असंभव है। लेकिन इस दौड़ में, इस कोशिश में, इस प्रयत्न में मैं जो हो सकता था, वह होने से भी वंचित हो जाता हूं। चित्त उलझ जाता है, सारी चीजें गड़बड़ हो जाती हैं। लेकिन आज तक किसी ने किसी से नहीं कहा कि तुम अपने जैसे होना, किसी और जैसे नहीं। अगर कोई मनुष्य अपने ही जैसे होने के खयाल से अनुप्रेरित हो जाए तो उसके जीवन की आधी से ज्यादा जटिलता एकदम विलीन हो जाएगी। लेकिन हमें यह सिखाया जाता रहा है।

और हमें यह इस कारण सिखाया जाता रहा है कि हम यह सोचते हैं कि कोई टाईप, कोई पैर्टन, कोई ढांचा होता है आदमी का, उसमें हरेक को ढाल दो। आदमी मशीन नहीं है। राम हुए होंगे राम, लेकिन कोई दूसरा आदमी राम के ढांचे में नहीं ढाला जा सका। आदमी इतना जीवंत है कि सब ढांचे गलत हैं। किसी ढांचे में

किसी आदमी के प्राणों को नहीं ढाला जा सकता। और अगर ढालने की कोशिश होगी तो राम तो पैदा न होंगे, रामलीला के राम पैदा हो जाएंगे। रामलीला के राम बहुत खतरनाक हैं क्योंकि बिल्कुल झूठे हैं। सारी जमीन पर पाखंड पैदा हुआ इसीलिए कि हम आदमियों से कह रहे हैं कि तुम किसी और जैसे हो जाओ। यह कैसे हो सकता है? और इसके होने की जरूरत क्या है? राम खूब हैं अकेले, कृष्ण खूब हैं अकेले, लेकिन दूसरा कोई आदमी कैसे हो सकता है? क्राइस्ट को मरे दो हजार वर्ष हुए। कोई दूसरा क्राइस्ट पैदा होता है? कितने लोग कोशिश करते हैं, कोई दूसरा आदमी कभी दुबारा दिखाई पड़ता है? लेकिन यह भ्रम हमारा नहीं टूटता और आदमी को हम यह जहर पिलाए जाते हैं कि किसी जैसा हो जाओ। इसी वजह से मनुष्य की बगिया उजाड़ हो गई है। चित्त जटिल हो गए, उन्होंने सरलता खो दी।

आदमी तभी सरल हो सकता है जब खुद जैसे होने की स्वतंत्रता उसे उपलब्ध हो। खुद जैसा हो कर ही वह सरल हो सकता है, और किसी हालत में सरल नहीं हो सकता। और न केवल यह शिक्षा है कि राम जैसे हो जाओ, एक ही साथ कई शिक्षाएं हैं। एक ही आदमी राम जैसे होने की भी कोशिश कर रहा है, गांधी जैसे होने की भी कोशिश कर रहा है, क्राइस्ट जैसे होने की भी कोशिश कर रहा है। वह आदमी अगर पागल नहीं हो जाएगा तो और क्या होगा? एक-एक आदमी कितनी कोशिश में लगा है!

हर आदमी अद्वितीय है, बेजोड़ है, उस जैसा कोई भी नहीं है। आदमी को तो छोड़ दें, एक दरख्त पर एक जैसे दो पत्ते भी खोजने कठिन हैं। एक दरख्त को छोड़ दें, पूरी जमीन पर एक कंकड़ जैसा दूसरा कंकड़ खोजना कठिन है। हर चीज अद्वितीय है। जड़ चीजें, जिन्हें हम कहते हैं, वे भी अद्वितीय हैं, तो मनुष्य की चेतना और आत्मा तो अद्वितीय होगी ही। लेकिन आदर्शवादी अद्वितीय को नहीं मानते मनुष्य की। वे मानते हैं, आदमी को कॉपी होना चाहिए किसी की। खुद नहीं होना चाहिए, कॉर्बन कॉपी होना चाहिए। कोई आदमी कॉर्बन कॉपी नहीं हो सकता। और जब नहीं हो पाता है तो चित्त उलझ जाता है। और अगर हो जाता है, तो होने का मतलब यह है कि वह अभिनय करना सीख जाता है। अभिनेता हो जाता है। और यह भी हो सकता है कि किसी अभिनेता से राम खुद हार जाएं। हो सकता है रामलीला का राम इतना बेचूक पाठ करे कि खुद राम को शक हो जाए कि मैं असली हूं या यह असली है। क्योंकि असली आदमी से तो भूल-चूकें भी होती हैं, लेकिन नकली आदमी भूल-चूक करता ही नहीं है। भूल-चूक का कोई सवाल ही नहीं है। नकली आदमी गणित के हिसाब से चलता है।

एक बार ऐसा हुआ। चार्ली चैप्लिन का नाम आपने सुना होगा--एक हंसोड़ अभिनेता। उसकी कोई वर्षगांठ थी। सारी दुनिया में उसकी ख्याति थी। सारे लोग, न मालूम कितने लोग उससे प्रेम करते थे। उसके मित्रों ने, एक उसके जन्म दिन पर एक कंम्पीटीशन, एक प्रतियोगिता का आयोजन किया। सारे योरोप में यह खबर भेजी गई कि जो लोग भी चार्ली चैप्लिन का पार्ट करना चाहें, वह प्रतियोगिता में भाग ले सकते हैं। सारे मुल्कों में अलग-अलग प्रतियोगिताएं हुई। कुछ अभिनेताओं ने पार्ट किया चार्ली चैप्लिन का, नकल की। छः अभिनेता चुने गए और लंदन में उनका अंतिम निर्णायक अभिनय हुआ। चार्ली चैप्लिन ने सोचा अपने मन में कि मैं भी किसी दूसरे नाम से चोरी के दरवाजे से, पीछे से प्रतियोगिता में सम्मिलित क्यों न हो जाऊं! क्योंकि मुझे तो प्रथम पुरस्कार मिल ही जाएगा। मैं खुद ही चार्ली चैप्लिन हूं। अगर मैं नहीं कर सका अपना पार्ट--अपना पार्ट करने का सवाल ही नहीं है, तो मुझे तो प्रथम पुरस्कार मिल ही जाएगा। वह झूठे नाम से फार्म भर कर पीछे के दरवाजे से प्रतियोगिता में सम्मिलित हो गया। उसके मित्रों को भी पता नहीं की चार्ली चैप्लिन भी सम्मिलित हो गया है। प्रतियोगिता हुई, चार्ली चैप्लिन हैरान हो गया। उसे दूसरा पुरस्कार मिला। पहला पुरस्कार कोई और ले गया। वह तो बाद में बात खुली कि चार्ली चैप्लिन खुद भी सम्मिलित था। तब तो लोग दंग रह गए। उस अभिनेता पर दंग रह गए जिसको प्रथम पुरस्कार मिला।

मैने आपसे कहाः हो सकता है कि महावीर का अभिनय करने वाला कोई आदमी पुरस्कार ले जाए, महावीर हार जाएं। इसमें कोई बड़ी कठिनाई नहीं है। अभिनेता सच्चे आदमी से ज्यादा धोखे का सिद्ध हो सकता

है। क्योकि सच्चे आदमी से भूल-चूक भी होती है। सच्चा आदमी जीता है। जहां जिंदगी है वहां भूल-चूक हो सकती है। लेकिन झूठा आदमी जीता ही नहीं है, उससे भूल-चूक का कोई सवाल ही नहीं है। वह हमेशा ही ठीक होता है। क्योंकि गणित के हिसाब से चलता है, मशीन की तरह चलता है। वह आदमी नहीं होता है, उसमें चेतना नहीं होती है।

तो यह भी हो सकता है कि कोई आदमी सफल हो जाए, लेकिन वह सफलता खतरनाक है क्योंकि वह अपनी आत्मा को खोकर ही सफल हो सकता है। जितना अभिनय हो जाएगा, उतनी ही आत्मा खो जाएगी। क्योंकि मैं अभिनय करूंगा किसी और का और मेरी आत्मा मेरी ही हो सकती है, किसी और की नहीं हो सकती। मैं लाख उपाय करूं, तो भी मेरी आत्मा मेरी है, और किसी और कि नहीं। लेकिन आदमी को यह सिखाया जाता रहा है सैंकड़ों वर्षों से कि तुम हो जाओ, किसी जैसे हो जाओ, किसी जैसे बनो। हम बच्चों को बचपन से यह सिखा रहे हैं कि तुम बनो किसी जैसे। कोई किसी बच्चे से नहीं कहता कि अपने जैसे बनो।

अगर फूलों की बगिया में ऐसे उपदेशक पहुंच जाएं, और चमेली से कहने लगें कि चंपा जैसे हो जाओ, और जूही से कहने लगें, गुलाब जैसे हो जाओ तो क्या होगा? पहली तो बात यह है कि फूल इतने नासमझ नहीं हैं जितना कि आदमी है; इसलिए उस उपदेश की बात ही न सुनेंगे। पहली तो बात यह है। वह कोई सुनेंगे ही नहीं। उपदेशक चिल्लाता हुआ चला आएगा। वे उसकी कोई फिक्र न करेंगे। आदमी के सिवाय और गुरु कहीं होते ही नहीं दुनिया में। तो वे फूल इनकार कर देंगे कि हम इनको गुरु मानते ही नहीं। वह चाहे कितना ही कान फूंकें और मंत्र दें और ढोल बजाएं, फूल सुनेंगे नहीं। लेकिन हो सकता है, आदमी की सोहबत में रहते-रहते कुछ फूल बिगड़ गए हों। सोहबत का असर पड़ता है। आदमी के साथ रहते-रहते कई जानवर बिगड़ गए हैं। हो सकता है, फूल भी बिगड़ गए हों। आदमी के साथ जो जानवर रहते हैं, उनको वही बीमारियां होने लगी हैं जो आदमी को होती हैं। उन्हीं के सगे-साथी जंगलो में रहते हैं, उनको वे बीमारियां नहीं होतीं।

तो हो सकता है, फूल भी बिगड़ गए हों आदमी के साथ रहते-रहते। और कोई फूल मान ले, और राजी हो जाए, और जूही चंपा बनने लगे और चंपा गुलाब बनने लगे तो उस बगिया में क्या होगा? वह बगिया उजड़ जाएगी, उस बगिया में फूल पैदा होने बंद हो जाएंगे। क्यों? जूही गुलाब नहीं हो सकती। चंपा जूही नहीं हो सकती। लेकिन गुलाब होने की कोशिश में जूही गुलाब तो हो ही नहीं पाएगी, जूही होने से भी वंचित हो जाएगी। ताकत लग जाएगी गुलाब होने में, तो जूही होने की शक्ति शेष नहीं रह जाएगी। और तब उसके प्राण बेचैन हो जाएंगे। और तब उसके सारे प्राण कंपित हो जाएंगे और चिंता से भर जाएंगे क्योंकि जब कोई बीज वृक्ष नहीं पहुंचा पाता और उसमें फूल नहीं आ पाते तब तक बेचैनी और तनाव आवश्यक है, निश्चित है, स्वाभाविक है। यह हर आदमी इतना बेचैन है जमीन पर, क्यों? क्योंकि हर आदमी के भीतर जो बीज है वह विकसित नहीं हो पाता, उसे सुगंध पैदा नहीं हो पाती, वह बीज का बीज ही रह जाता है। तो प्राण, सारे प्राण सिकुड़ जाते हैं, किप्रल्ड हो जाते हैं, जैसे कि लकवा लग गया हो। और तब जो तड़पन पैदा होती है वह चित्त को बहुत जटिल कर जाती है। बचैन, अशांत, परेशान कर जाती है।

पहली बात है, जिस व्यक्ति को सरल होना हो उसे समस्त आदर्शों को विदा कर देना चाहिए, उसे नमस्कार कर लेना चाहिए। उसे अपने को कह देना चाहिए, मैं जो हो सकता हूं वही मैं होऊंगा। मैं जो होने को पैदा हूं, उसकी खोज करूंगा। मेरा जो स्वभाव है, मेरा जो स्वधर्म है, मैं उसे जानूंगा और पहचानूंगा, मैं वही होऊंगा। मैं कोई और नहीं हो सकता। न मुझे कोई और होने की आकांक्षा है। अगर यह बात स्पष्ट हो जाए कि मुझे किसी की नकल नहीं करनी है तो जीवन में एक अदभुत क्रांति हो जाएगी। एक सरलता आनी शुरू हो जाएगी। चित्त एकदम एक नई दिशा को पकड़ लेगा।

तो पहली बात है, आदर्श से मुक्ति--जिनके भी चित्त को सफलता की दिशा में जाना हो। जो आदर्श से बंधा है वह कभी सरल नहीं हो सकता। जितना ही आदर्श को ओ.ढ़ता जाएगा उतना ही जटिल और कठोर होता

जाएगा। ये आदर्शवादी बड़े खतरनाक लोग हैं, खुद के ऊपर तो वे लोहे की जंजीरें बांध ही लेते हैं, वे दूसरे लोगों पर भी बांधते हैं। वे हर आदमी को बांध देना चाहते हैं। हर आदमी को एक पैटर्न और ढांचे में ढाल देना चाहते हैं। जैसे आदमी कोई मशीन हो। यह तो हो सकता है कि फोर्ड की सारी कारें एक जैसी हों। यह नहीं हो सकता कि आदमी एक जैसे हों। यह हो सकता है कि मशीनें एक जैसी बना दी जाएं--यही तो फर्क है मनुष्य और मशीन में! दुर्भाग्य होगा वह दिन जिस दिन सभी मनुष्य एक जैसे हो जाएंगे। उस दिन से ज्यादा अभागा कोई दिन नहीं हो सकता क्योंकि उस दिन सारे लोग मशीनें हो जाएंगे। उनकी सारी आत्मा खो जाएगी।

लेकिन यह दौड़ चलती है हजारों साल, और आदमी के प्राणों को अवशोषित करती है। सरलता की दिशा में पहला कदम है स्वयं का स्वीकार। हम कोई भी अपने को स्वीकार नहीं करते। हम महावीर को स्वीकार करते हैं, बुद्ध को, कृष्ण को, क्राइस्ट को। लेकिन अपने को? अपने को कोई भी स्वीकार नहीं करता है। और जो अपने को स्वीकार कर रहा है वह सरल कैसे होगा? स्वयं की स्वीकृति चाहिए, एक्सेप्टिबिलिटी चाहिए कि मैं अपने को अंगीकार करूं, स्वीकार करूं जो मैं हूं।

पर हम डरे हुए हैं। हमें डर सिखाया गया है कि अगर तुमने अपने को स्वीकार किया तो तुम पशु जैसे हो जाओगे। अगर तुमने अपने को स्वीकार क्या तो तुम्हारी सारी यात्रा बंद हो जाएगी ऊपर उठने की। तुमने अगर अपने को स्वीकार किया तो तुम गए नर्क में। क्योकि तुम्हारे भीतर तो क्रोध है, काम है, सेक्स है, घृणा है और न मालूम क्या--सारे पाप ही पाप हैं तुम्हारे भीतर। अगर तुमने अपने को स्वीकार किया तो तुम गए, डूब गए उन्हीं में। इसीलिए तो शिक्षक कहते हैं, अपने को स्वीकार करना। महावीर को स्वीकार करना, जिनमें हिंसा नहीं है। बुद्ध को स्वीकार करना, जिनमें घृणा नहीं है। क्राइस्ट को स्वीकार करना, जिनमें प्रेम है। अपने को स्वीकार मत करना। तुम में तो घृणा है, हिंसा है, क्रोध है। अगर तुमने अपने को स्वीकार किया तो तुम डूब गए। लेकिन मैं आपसे कहता हूं, जो अपने को स्वीकार करेगा, वही इनसे मुक्त हो सकता है। कोई दूसरा और नहीं।

अपने को स्वीकार करने के बाद ही कोई व्यक्ति उन तत्वों से मुक्त हो सकता है जो जीवन को दुख में और पीड़ा में ले जाते हैं। जो अपने को स्वीकार नहीं करता वह कभी भी उनसे मुक्त नहीं हो सकता। क्या कारण हैं मेरे कहने के? कुछ बातें इस संबंध में समझ लेनी बहुत जरूरी हैं।

पहली बात, जो व्यक्ति अपने को स्वीकार नहीं करता वह अपना दमन करता है, सप्रेशन करता है। अगर आप अपने को स्वीकार करते और आपके भीतर क्रोध है तो आप क्या करेंगे? आप अपने क्रोध को दबाएंगे, पी जाएंगे। लेकिन दबाने से कभी क्रोध खतम नहीं होता है। दबाने से क्रोध और प्राणों में गहरे घुस जाता है। अगर आपके भीतर सेक्स है, कामना है, वासना है, आप क्या करेंगे? दबाएंगे? तो दबाने से तो सेक्स और गहरे चला जाएगा। वह चित्त की और गहरी पर्तों में प्रविष्ट हो जाएगा। वह तो प्राणों में और नीचे उतर जाएगा। जिसको आप दबाएंगे, उससे आप कभी मुक्त नहीं हो सकते हैं। क्योंकि जो बात जितनी दबाई जाती है, वह प्राणों में निकलने की उतनी ही कोशिश करने लगती है। इसलिए भले लोग दिन भर भले रहते हैं, रात सपने बहुत बुरे देखते हैं। जो दिन भर संयमी है, वह रात को भोग के सपने देखता है। जिसने दिन भर उपवास किया है वह रात भर भोजन करता है। दिन में जिसे हम दबा लेते हैं वह रात नींद में निकलना शुरू हो जाता है, नींद में डोलने लगता है। क्योंकि नींद में हमारा दबाने वाला तत्व खुद सो जाता है। तो जिसको दबाया था वह ऊपर निकल आता है। जिसने जवानी में सेक्स को दबा लिया, वह बु.ढ़ापे में परेशान होगा क्योंकि जवानी में ताकत थी दबाने की, बुढ़ापे में ताकत कम हो जाएगी। दबा हुआ सेक्स फिर उठना शुरू होगा। और बु.ढ़ापा नर्क हो जाएगा।

जिसने दिन में दबाया वह रात परेशान हो जाएगा। इसीलिए तो साधु-संन्यासी सोने से बहुत डरते हैं, नींद से बहुत डरते हैं। कहते हैं, नींद बड़ा पाप है। जागे रहो किसी तरह, सोओ मत। क्यों? सोने से इतना भय क्या है? सोने से एक ही भय है, जिसको दिन भर दबाया है वह वापस लौट आता है। जिन स्त्रियों से दिन भर आंखे बंद की हैं वे वापस खड़ी हो जाती हैं। वे खड़ी होंगी, काम में खड़ी होंगी--होना बिल्कुल जरूरी है। जिस

चीज को हम धकाते हैं भीतर, वह जाएगी कहां? वह हमारे ही भीतर किसी कोने में बैठ रहेगी और मौके की तलाश करेगी, जब मौका मिल जाए तो मैं वापस लौट आऊं।

एक रात एक होटल में ऐसा हुआ। एक नया मेहमान आकर ठहरा। मैनेजर ने कहाः किसी और होटल में ठहर जाएं। होटल हमारा भरा हुआ है, एक ही कमरा खाली है लेकिन उसे देने में मुझे संकोच है। उस कमरे के नीचे जो सज्जन ठहरे हुए हैं, वे बड़े उपद्रवी मालूम होते हैं। वह ऊपर के कमरे के आदमी से जरा-जरा सी बात पर झगड़ने लगते हैं। अगर आप जरा ही जोर से चल गए तो वे झगड़ने आ जाएंगे कि आपने मेरी नींद खराब कर दी। आवाज क्यों किया आपने? तो इसलिए मैंने वह कमरा खाली ही छोड़ रखा है। कौन झंझट ले? आप कृपा करके कहीं और ठहर जाएं। लेकिन उस मेहमान ने कहा कि मुझे कोई ज्यादा काम नहीं है। मैं कमरे में मुश्किल से रात को दो-तीन घंटे सोऊंगा, सुबह मैं काम पर चला जाऊंगा। दिन भर काम करूंगा, रात आकर फिर सो जाऊंगा। कोई मौका नहीं है कि मेरा उनसे झगड़ा हो। फिर आपने मुझे सचेत कर दिया, मैं ध्यान रखूंगा, मुझे ठहर जाने दें।

वह आदमी ठहर गया। उसने दिन भर काम किया होगा अपना, रात बारह बजे लौटा। थका मांदा अपने बिस्तर पर बैठा। उसने अपना जूता खोला और पटका। जूता जोर से गिरा। तो उसे खयाल आया कि कहीं नीचे के आदमी की नींद न खुल जाए। तो उसने दूसरे जूते को आहिस्ता से रख दिया और सो गया। कोई दो घंटे के बाद नीचे के मेहमान ने आकर दरवाजा खटखटाया। वह घबड़ा कर नींद से उठा। उसने कहाः क्या हो गया? उस नीचे के मेहमान ने पूछा कि दूसरे जूते का क्या हुआ? उसने कहाः दूसरा जूता! मेरी नींद हराम कर दी। तुम्हारे पहले जूते ने नहीं, तुम्हारे दूसरे जूते ने। पहला जूता तो मैं समझ गया कि आप आ गए हैं, लेकिन तब मेरी प्रतीक्षा हो गई कि दूसरा जूता नहीं गिर रहा। दूसरे का क्या हुआ? मैंने बहुत अपने मन से हटाने की कोशिश की कि मुझे किसी के जूते से क्या लेना-देना, हुआ होगा कुछ। लेकिन जितना मैं हटाने लगा, उतनी मेरी नींद मुश्किल हो गई और आपका दूसरा जूता मुझे लटका हुआ दिखाई पड़ने लगा। घबड़ा गया। मैंने सोचा कि जाकर पूछ ही लूं, बात खत्म हो जाए। तो कृपा करके बता दीजिए कि दूसरे जूते का क्या हो गया?

दुनिया में जो लोग अपना दमन करते हैं उनकी स्थिति दूसरे जूते के लटके होने वाली हो जाती है। जिस चीज को हटाते हैं, वही सिर पर लटक जाती है। सेक्स को हटाते हैं, सेक्स के चक्कर लगाने लगते हैं। क्रोध को हटाते हैं, क्रोध ही भीतर घूमने लगता है। घृणा को हटाते हैं, घृणा ही भीतर इकट्ठी हो जाती है। हटाएंगे कहां? कोई ऐसी चीजें हैं कि उठा कर बाहर फेंक देंगे? हटाएंगे भीतर हट जाएंगी। हटाना, यानी भीतर हट जाना। भीतर, और भीतर चली जाएंगी। आपका चित्त और जटिल और विकृत हो जाएगा। ऊपर शांति होगी, भीतर क्रोध होगा। ऊपर प्रेम की बातें होंगी, भीतर घृणा होगी। ऊपर प्रार्थना-पूजा होगी, भीतर छुरा होगा। बाहर से रोज मंदिर जाएंगे, भीतर से कभी मंदिर नहीं जाएंगे। यह होगा। ऊपर कुछ, भीतर कुछ हो जाएगा। चित्त दो खंडो में टूट जाएगा, अनेक खंडो में टूट जाएगा। और चित्त जितना टूट जाएगा स्व-विरोधी खंडो में, उतना ही जटिल हो जाएगा। उतना ही उलझ जाएगा।

ऐसा चित्त चाहिए, जो खंडित न हो, अखंड हो, तो ही सरल हो सकता है। अखंड चित्त ही सरल हो सकता है। और कोई चित्त सरल नहीं होता। लेकिन आदर्शों ने और दमन ने मनुष्य के चित्त को बहुत बुरी तरह खंडित कर दिया। और भय हमें यह बताया जाता है कि अगर हमने घृणा को नहीं दबाया, अगर क्रोध को नहीं दबाया, अगर सेक्स को नहीं दबाया तो तुम पशु हो जाओगे।

हमें दो ही विकल्प दिखाई पड़ते हैं--या तो दबाओ, और या भोगो। लेकिन मैं आपसे कहता हूं, एक तीसरा विकल्प भी है। न तो भोगने का सवाल है और न दमन करने का। ये दोनों एक ही चीज की दो अतियां हैं। ये एक ही चीज के दो छोर हैं। एक तीसरा विकल्प भी है। न तो भोगो, और न भागो, बल्कि जागो। चित्त में जो भी है--क्रोध है, सेक्स है, घृणा है, जो भी है--राग है, उस सब के प्रति जागना है उससे भागना नहीं है। और न उसको

भोगने में अर्थ है और न भागने में। भोगने से, रोज-रोज पुनरुक्ति से मजबूत होती हैं वे ही बातें। दबाने से, भागने से प्रविष्ट होती हैं। इन दोनों से कोई अंतर नहीं पड़ता। अंतर इतना ही पड़ता है, जैसे आप सीधे खड़े हैं और एक आदमी सिर के बल खड़ा हो जाए। गृहस्थ सीधा खड़ा है, संन्यासी सिर के बल खड़े हैं। कोई फर्क नहीं है। एक आदमी स्त्री की तरफ भाग रहा है, दूसरा आदमी स्त्री की तरफ से भाग रहा है, लेकिन दोनों का चित्त स्त्री पर अटका हुआ है। एक आदमी धन की तरफ भाग रहा है, दूसरा आदमी धन की तरफ पीठ करके भाग रहा है, लेकिन दोनों का चित्त धन पर अटका हुआ है। तो एक-दूसरे का शीर्षासन करता हुआ रूप है, इससे ज्यादा कोई भी भेद नहीं है। दोनों के चित्त एक जैसे हैं--एक जैसे जटिल, एक जैसे कठिन, एक जैसे उलझे हुए। दोनों में कोई अंतर नहीं है। लेकिन एक तीसरा विकल्प है, और वही है विकल्प चित्त के ट्रांसफर्मेशन का, वही है चित्त के परिवर्तन का।

बड़े रहस्य की बात यह है कि जिस क्रोध से आप लड़-लड़ कर परेशान हो जाएं और मुक्त नहीं हो सकते, उसी क्रोध की तरफ अगर पूरी तरह सम्यक रूप से जाग जाएं, अगर राइट अवेयरनेस हो, अगर क्रोध के प्रति सम्यक बोध और होश हो, अगर उस क्रोध के प्रति पूरी तरह जागें, उसका निरीक्षण करें, उसे देखें, पहचानें, तो जैसे-जैसे जागरण ब.ढ़ेगा वैसे-वैसे क्रोध विलीन होता जाएगा। जैसे-जैसे होश ब.ढ़ेगा, वैसे-वैसे क्रोध परिवर्तित होता जाएगा। आप कहेंगे, फिर क्रोध कहां जाएगा? क्रोध ही क्षमा बन जाता है। क्षमा क्रोध का ही परिवर्तित रूप है। सेक्स कहां जाएगा? सेक्स ही ब्रह्मचर्य बन जाता है। सेक्स का ही बदला हुआ रूप है। इसलिए अगर आप महाक्रोधी हैं तो घबराएं न, आपके महाक्षमावान होने की क्षमता है। अगर चित्त में बहुत सेक्स है तो परेशान न हों। सेक्स तो एक शक्ति है अगर बहुत है, तो बहुत शुभ है, बहुत मंगल है। अगर परिवर्तित हो जाए तो उतना ही बड़ा ब्रह्मचर्य प्रगट होगा। अगर घृणा है तो घबड़ाएं नहीं, वही घृणा प्रेम बन जाती है। और उसके बदलने का सूत्र है जागरण, निरीक्षण, ओब्जर्वेशन। सप्रेशन नहीं, दमन नहीं, इंडलजेंस नहीं, भोग नहीं--ओब्जर्वेशन, निरीक्षण।

लेकिन जो लोग किसी को आदर्श मान लेते हैं वे निरीक्षण नहीं कर पाते। वे तो बदलने के लिए इतने उत्सुक होते हैं कि निरीक्षण करने के लिए उन्हें फुर्सत कहां है? वे तो क्षमा बनाना चाहते हैं जीवन में, क्रोध को हटाना चाहते हैं। और उन्हें यह पता ही नहीं कि क्रोध अगर हट जाएगा तो क्षमा कभी पैदा ही नहीं होगी। क्योंकि क्रोध की शक्ति ही क्षमा बनती है। कोई आदमी अपने घर के बाहर कूड़े-करकट का ढेर लगा ले तो गंदगी फैल जाएगी, बदबू भर जाएगी, जीना मुश्किल हो जाएगा। उसी गंदगी के ढेर से खाद बनती है। लेकिन खाद शत्रु नहीं है। अगर हम उसको खाद नहीं बना पा रहे हैं बीजों की सुगंध लाने के लिए तो हम भूल में हैं। कसूर क्रोध का नहीं है, कसूर हमारा है। कसूर सेक्स का नहीं है, कसूर हमारा है। जीवन में ये सारी शक्तियां हैं, ये सारी बीज रूप शक्तियां है। अगर हम सजग होकर इन शक्तिओं के प्रति निरीक्षक बन जाएं, साक्षी बन जाएं, तो इनमें क्रांति हो जाएगी।

आप कहेंगे... कहेंगे, निरीक्षण से क्या होगा? क्या निरीक्षण मात्र से क्रांति हो जाएगी? हमें कुछ करना नहीं पड़ेगा? मैं आपसे कहता हूं, हां, मात्र निरीक्षण से क्रांति हो जाती है और कुछ भी नहीं करना पड़ता है।

अगर किसी घर में अंधकार भरा हो और घर के लोग उस अंधकार को निकालना चाहतें हो, और कोई सदगुरु उन्हें मिल जाए और उनसे कह दे, धक्के दो, अंधकार को बाहर निकाल दो। तो वे लोग वहीं टूट कर समाप्त हो जाएंगे, अंधकार कभी नहीं निकलेगा। अंधकार को धक्के नहीं दिए जा सकते। क्यों? न अंधकार को रस्सियों में बांधा जा सकता है। न अंधकार को तलवार से काटा जा सकता है। क्यों? अंधकार है ही नहीं। केवल प्रकाश का अभाव है। अंधकार की अपनी कोई सत्ता नहीं है, अपना कोई एक्जिस्टेंस नहीं है। इसलिए अंधकार

को न बांध सकते हैं, न धक्का दे सकते हैं। लेकिन एक दीया कोई जला ले, फिर अंधकार कहां चला जाता है? कहीं चला जाता है क्या? नहीं, अंधकार पाया ही नहीं जाता।

ऐसा मैंने सुना है कि एक बार अंधकार ने भगवान के पास शिकायत कर दी थी कि यह सूरज मेरे पीछे बहुत बुरी तरह पड़ा हुआ है। रोज सुबह से मेरा पीछा करता है और सांझ तक मुझे परेशान कर डालता है। तो भगवान ने सूरज को कहा कि तुम इस बेचारे अंधकार के पीछे क्यों पड़े हुए हो? इसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? सूरज ने कहा, अंधकार! मैंने आज तक अंधकार को नहीं देखा। मैं उसके पीछे कैसे पड़ूंगा? मैं पहचानता भी नहीं हूं कि अंधकार कौन है और कहां है? अगर उसने शिकायत की है तो उसे मेरे सामने बुला लें, मैं उससे क्षमा मांगू और उसे पहचान लूं ताकि दुबारा उसका पीछा न करूं।

कहतें हैं हजारों वर्ष हो गए, भगवान भी थक गए, अब तक अंधेरे को सूरज के सामने नहीं ला सके। वह मामला वैसा ही पड़ा हुआ है अपील की कोर्ट में। उसका कोई निर्णय नहीं होता। उसका कोई निर्णय नहीं होता। हो भी नहीं सकता, कभी नहीं होगा यह निर्णय। भगवान होंगे सर्वशक्तिमान, लेकिन अंधेरे को प्रकाश के सामने वे भी नहीं ला सकते। क्योंकि अंधेरा तो है ही नहीं। अंधेरे का कोई एक्जिस्टेंस नहीं है। अंधेरा तो केवल अभाव है, एब्सेंस है। अनुपस्थिति है किसी की।

मैं आपसे कहता हूं, क्रोध, काम, लोभ, इनकी अपनी कोई शक्ति नहीं है। इनका कोई पोजीटिव एक्जिस्टेंस नहीं है। हम सोए हुए हैं, इसलिए ये हैं। हम जाग जाएं, ये नहीं पाए जा सकते। जैसे प्रकाश ले आएं, अंधेरा नहीं मिलता, ऐसे ही भीतर कोई जाग जाए तो न क्रोध मिलता है, न घृणा मिलती है। जागरण आते ही जीवन में एक क्रांति हो जाती है। इसलिए दमन नहीं। दमन विकृत करता है। अनुकरण नहीं, क्योंकि अनुकरण पाखंड पैदा करता है। स्वयं का स्वीकार और स्वयं का निरीक्षण सरलता का मार्ग है। स्वयं का स्वीकार और स्वयं का निरीक्षण, स्वयं के प्रति जागा हुआ बोध। क्रोध है, घृणा है हम जागें, देखें। लेकिन हम जाग न सकेंगे अगर हम शत्रु बने हुए हैं। हम तो शत्रु बने हुए हैं। सिखाने वाले बैठे हैं, वे कहते हैं, क्रोध शत्रु है, घृणा शत्रु है, लोभ शत्रु है, ये सब रिपु हैं, फलां हैं, ढिकां हैं। हजार तरह की नासमझियां सिखाई गई हैं। शत्रु नहीं हैं, शक्तियां हैं। और जो अपनी ही शक्तिओं को शत्रु मान लेगा वह नष्ट हो जाएगा। वह अपने से ही लड़ने लगेगा और खुद टूट जाएगा, खंडित हो जाएगा।

मैं आपसे कहता हूं, अपने से न लड़ना। अपने को प्रेम करना। अपने को अस्वीकार मत करना, अपने को इंकार मत करना, अपने को अंगीकार करना, स्वीकार करना। और स्वीकार के आधार पर ही निरीक्षण हो सकेगा। निरीक्षण का क्या अर्थ है? क्या निरिक्षण का अर्थ है, मेरे चित्त में जो भी हो, मैं उसे पहले देखूं तो! क्या है वह?

एक फकीर हिंदुस्तान से कोई चौदह सौ वर्ष पहले चीन गया था। वहां का बादशाह उसके स्वागत के लिए आया राजधानी की सीमा पर, और उस बादशाह ने उस फकीर बोधिधर्म का स्वागत किया और महल में उसे ले गया और फिर उससे एकांत में पूछा कि मेरे भीतर बहुत क्रोध है। मैं क्या करूं? इसे बहुत कोशिश करता हूं दबाने की, लेकिन यह फूट-फूट पड़ता है। और मैंने शास्त्रों में प.ढ़ा है और गुरुओं से सुना है कि जिसके भीतर क्रोध है वह नर्क की यात्रा करेगा। मैं नर्क की यात्रा नहीं करना चहता हूं। कोई भी नहीं करना चाहता नर्क की यात्रा। वह राजा भी नहीं करना चाहता था और राजाओं को नर्क की यात्रा का डर बहुत स्वाभाविक है। क्योंकि अगर राजा नर्क में नही जाएंगे तो कौन नर्क में जाएगा? वह भी राजा डरा हुआ था। उसने बोधिधर्म को कहाः बहुत क्रोध हैं मेरे भीतर और कहते हैं, क्रोध नर्क में ले जाएगा। मुझे बचाओ। बोधिधर्म ने कहाः तू ठीक आदमी के पास आ गया। कल सुबह होने से पहले मैं तेरे क्रोध को नष्ट कर दूंगा। बहुत भिक्षुओं के पास वह गया था। ऐसा कोई भी न मिला था जो यह कहता। वह बहुत हैरान हुआ। उसने कहाः मैं कब आ जाऊं, ताकि आप नष्ट कर दें? उसने कहाः तुम सुबह चार बजे आ जाओ। लेकिन याद रखो, अपने साथ अपने क्रोध को भी ले आना। वह राजा

बहुत हैरान हुआ कि यह क्या बात है? यह फकीर कुछ गड़बड़ मालूम होता है। जब इसने यह कहा कि मैं खत्म ही कर दूंगा तेरे क्रोध को, तभी शक हुआ था... और अब उसने यह कहा कि आ जाना सुबह चार बजे, और देखो, साथ में क्रोध को ले आना।

राजा तो चला गया। चार बजे आया भी। वह फकीर बैठा हुआ था अपने डंडे को लेकर। उसने कहाः ले आए क्रोध? कहां है? वह बोलाः आप भी कैसी बातें करते हैं। क्रोध क्या ऐसी चीज है कि मैं ले आता? वह तो मेरे साथ है। तो उसने कहाः आंख बंद करो और खोजो, कहां है। अगर मिल जाए तो मैं उसे खत्म कर दूं। उस राजा ने आंख बंद की और बहुत खोजा। कहीं क्रोध पकड़ में नहीं आया। आंख खोलता, वह फकीर कहता, और खोज लो एक दफा, दुबारा मत कहना आकर मुझसे क्योंकि मैं भी तय किए बैठा हूं कि आज खत्म कर दूंगा, मिल भर जाए! वह राजा सुबह हो गई, सूरज निकलने लगा और राजा पसीना-पसीना हो गया खोज कर भीतर। कहीं क्रोध मिलता नहीं था। उसने आंख खोली और कहाः माफ करें, क्रोध तो मिलता नहीं। उस फकीर ने कहाः जाओ जब मिलता ही नहीं तो उसको शांत कैसे किया जा सकता है? तुमने आज तक खोजा नहीं था इसलिए वह मिलता था। आज तुमने खोजा वह नहीं मिलता। अब तुम खोजते ही रहना। अब तुम खोजते ही रहना इस जीवन में कि कहां मिल जाए और जिस दिन मिल जाए। मेरे पास लाने की जरूरत नहीं। तुम्हीं को मिल जाए, तुम्हीं खत्म कर लोगे। जो नहीं खोजता, उसे मिलता है। जो खोजता है, उसे मिलता ही नहीं। दीये को जलाएं, और घर के भीतर जा कर खोजें कि अंधकार कहां है तो मिलेगा? नहीं मिलेगा। दीये को जला कर जो खोजने जाता है वह अंधकार को नहीं पाता।

अपने भीतर भी जो अपने बोध को जगा कर खोजने जाता है वह नहीं पाता। और जब जीवन में ये सारी चीजें पाई जातीं तो इनकी खोज करते-करते बोध तो जगता जाता है और ये विलीन होती चली जाती हैं। धीरे-धीरे भीतर केवल बोध रह जाता है और यह बोध का रह जाना ही, मात्र बोध का, अवेयरनेस का जग जाना ही क्रांति बन जाती है। सब कुछ बदल जाता है। जागा हुआ मनुष्य एक बिल्कुल नया मनुष्य है, दूसरे तरह का मनुष्य है। उसके भीतर कोई दमन नहीं होता है। उसके प्राणों में ये सब पाप छिपते नहीं हैं। उसका जीवन भीतर से एकदम खाली हो जाता है। क्योंकि कुछ भी नहीं पाया जाता वहां। वहां केवल ज्योति रह जाती है जागने की, और उससे ही पैदा होती है सरलता।

निरीक्षण सूत्र है सरलता का। स्वयं की स्वीकृति भूमिका है निरीक्षण की। स्वयं की स्वीकृति से आता है निरीक्षण। निरीक्षण से आती है सरलता। लेकिन बहुत आंख खोल कर स्वयं को देखने और खोजने की बात है।

एक वृद्ध वैज्ञानिक अपने बच्चों को कुछ समझाता था। उनको कहता था कि विज्ञान की खोज में दो बातें जरूरी हैं। एक बात तो जरूरी है साहस, करेज। और दूसरी बात जरूरी है, निरीक्षण, ओब्जर्वेशन। तो उन बच्चों ने कहा, हमें समझाएं कि ये दोनों बातें कैसी हैं। वह वृद्ध वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला में गया और वहां से एक प्याली लेकर आया। उस प्याली में बहुत कड़वा, बहुत तीखा कोई नमक का घोल भर कर लाया। उसने कहा के मेरे बच्चों, यह घोल है बहुत कड़वा, बहुत तीखा। अगर इसे एक बूंद भी जीभ पर रख लोगे तो वमन हो जाएगा, उल्टी हो जाएगी। लेकिन हमें इसकी परीक्षा करनी है कि यह क्या है और पहचानना है। और बिना जीभ पर रखे नहीं पहचान सकोगे।। तो तुम्हें साहस करना पड़ेगा इसे जीभ पर रखने का। तो मैं पहले अपनी जीभ पर रखूंगा तो तुम ठीक से निरीक्षण करना कि किस भांति जीभ डुबाता हूं, किस भांति जीभ पर रखता हूं अपनी अंगुली को। तुम ठीक से देखना। जैसा मैं करूं, ठीक से निरीक्षण कर लेना। ऐसा ही तुम्हें भी करना है।

उस वृद्ध वैज्ञानिक ने उंगली डुबाई और अपनी जीभ पर रखी। न तो उसने चेहरा बिगाड़ा, न कोई कड़वेपन का भाव उसकी आंखों में आया, न उसे कोई उल्टी हुई। फिर उसके बाद उन बच्चों ने भी यही किया। उन्होंने भी अपनी उंगली डाली और अपनी जीभ पर रखा। हरेक बच्चा घबड़ा गया और आंख से आंसू निकलने लगे। किन्हीं बच्चों को उल्टियां हो गई। लेकिन सभी बच्चों ने हिम्मत की और जीभ पर उसको रखा। जब बीस ही बच्चे रख चुके तो उस वृद्ध वैज्ञानिक ने कहाः मेरे बेटों, जहां तक साहस का संबंध है, तुम सब सफल हो गए। तुम

सबने साहस किया। लेकिन जहां तक निरीक्षण का संबंध है, तुम सब असफल रहे। तुमने यह देखा ही नहीं, मैंने जो उंगली डुबाई थी, वही उंगली जीभ पर न रखी थी। जो उंगली घोल में डुबाई थी वही उंगली मैंने जीभ पर नहीं रखी थी, यह तुमने देखा ही नहीं। तो साहस में तो तुम सफल हुए, लेकिन निरीक्षण में असफल हो गए।

उसने कहाः अकेला साहस मूर्खतापूर्ण है। अकसर मूर्ख साहसी होते हैं और ऐसे मूर्ख साहसी सारी दुनिया को बड़े खतरे में डालते रहते हैं। अकेला साहस खतरनाक है। निरीक्षण, ओब्जर्वेशन चाहिए। क्या हो रहा है, उसे देखने के लिए पूरी सजगता होनी चाहिए। पूरे होश, पूरी अटेंशन से जो देखता है... ।

विज्ञान में ही निरीक्षण जरूरी है, ऐसा नहीं। धर्म में तो और भी ज्यादा जरूरी है क्योंकि विज्ञान तो पदार्थों की खोज करता है, धर्म तो आत्मा की। विज्ञान में निरीक्षण जरूरी है लेकिन, धर्म में तो निरीक्षण और भी अनिवार्य है। विज्ञान बाहर के पदार्थों का निरीक्षण करता है, धर्म स्वयं के भीतर जो चित्त है, उसका।

चित्त का निरीक्षण करें। जागें, और जागें, और जागें और देखें चित्त को। देखते-देखते यह क्रांति घटित होती है और चित्त परिवर्तित हो जाता है। और परिणाम में जो उपलब्ध होता है वह है सरलता। यह दूसरा सूत्र है।

पहला सूत्र है, स्वतंत्रता।

दूसरा सूत्र है, सरलता।

तीसरा सूत्र है, शून्यता।

उसकी मैं कल रात आपसे बात करूंगा। सरलता के इस सूत्र के संबंध में, या स्वतंत्रता के कल के सूत्र के संबंध में कुछ बातें पूछने को हों तो वह सुबह आप पूछ ले सकते हैं। मेरी बातों को इतनी प्रेम और शांति से सुना है, उसके लिए बहुत-बहुत अनुग्रहीत हूं। सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरा प्रणाम स्वीकार करें।

इंदौर, दिनांक 6 मई, 1967, सायंकाल

चौथा प्रवचन

पक्षपातों से मुक्त मन

बहुत से प्रश्न मेरे पास आए हैं। थोड़े से प्रश्नों की अभी चर्चा हो सकेगी।

एक मित्र ने पूछा है, ज्ञान मुक्ति है, ऐसा कहा गया है। लेकिन मैंने कहा, अज्ञान द्वार है। इसका क्या अर्थ है?

ज्ञान निश्चय ही मुक्ति है, लेकिन वह ज्ञान नहीं है जो दूसरों से हमें उपलब्ध होता है। जो ज्ञान मन के भीतर जन्मता है, मन की चेतना में आविर्भूत होता है, वह निश्चय ही मुक्ति है। लेकिन वह ज्ञान, जो हम दूसरों से स्वीकार करते हैं, शास्त्रों से, समाज से, परंपराओं से, वह ज्ञान मुक्ति तो दूर, वह ज्ञान ही मुक्ति के मार्ग में सब से बड़ी बाधा है। इसलिए मैंने कहा कि इसके पहले कि यह ज्ञान मिल सके जो मुक्त करता है, उस ज्ञान को छोड़ देना होगा जो कि परतंत्र करता है। असल में उस ज्ञान को ज्ञान कहना ही उचित नहीं है जो हम दूसरों से उधार इकट्ठा कर लेते हैं। लेकिन हमारा सारा ज्ञान ऐसा ही है।

कोई आदमी कुआं खोदता है तो कुआं खोदने में मिट्टी और पत्थर निकाल कर बाहर कर देने होते हैं। मिट्टी और पत्थर निकालता जाता है, खोदता जाता है, थोड़ी देर नीचे जलस्रोत उपलब्ध हो जाते हैं। जल तो नीचे मौजूद था, उसे कहीं से लाना नहीं पड़ा। लेकिन मिट्टी पत्थर से बीच में उन्हें अलग कर देना पड़ा। लेकिन दूसरा आदमी हौज बनाता है। वह मिट्टी-पत्थर खरीद के लाता है, उनकी दीवाल बनाता है और कहीं से पानी लाकर उसमें भर देता है। कुएं में भी पानी होता है, हौज में भी पानी होता है, लेकिन दोनों के पानी में जमीन-आसमान का भेद है। कुएं में से मिट्टी और पत्थर निकाल कर बाहर करना होता है। हौज में मिट्टी और पत्थर खरीद कर दीवाल बनानी पड़ती है। कुएं में से पानी अपने आप निकलता है, हौज में पानी कहीं से लाकर भरना पड़ता है। कुएं का पानी जीवित होता है। हौज का पानी बहुत जल्दी सड़ जाता है। हौज के पानी में कोई स्रोत नहीं होते। कुएं के पानी का प्राण समुद्रों से जुड़ा होता है नीचे, अंतर्धाराओं से जुड़ा होता है। हौज कहीं से भी जुड़ी नहीं होती। हौज एकदम उधार है। उसके पास अपनी कोई आत्मा नहीं है।। कुआं जीवित है, उसके पास अपने प्राण हैं, अपने जीवित स्रोत हैं।

हौज और कुएं में जो फर्क है, वही ज्ञानी और पंडित में फर्क है। ज्ञान वह है, जो कुएं की भांति चित्त से सारे ईंट-पत्थर अलग कर देने से उत्पन्न होता है, भीतर से जन्मता है। लेकिन पंडित का ज्ञान उधार है, बाहर से लाया हुआ है।। शास्त्रों से, शब्दों से, सिद्धांतों से उसने अपने ज्ञान को बनाया है। ये दोनों स्थितियां एक-दूसरे के बिल्कुल विपरीत और भिन्न और विरोधी हैं। कुएं जैसा जो ज्ञान है, वह मुक्त करता है, हौज जैसा जो ज्ञान है वह परतंत्र करता है। वह मुक्त नहीं करता है।

पंडितों ने कभी सत्य जाना हो, ऐसा संभव नहीं है। उसका जानना ही बाधा बन जाता है। यह भी मनुष्यता की अस्मिता और अहंकार है कि मैं जानूंगा।

एक फकीर हुआ, अगस्तीन। कोई तीस वर्षों से परमात्मा की खोज में था। भूखा और प्यासा, रोता और चिल्लाता और प्रार्थना करता। एक क्षण का विश्राम न लेता। जीवन का कोई भरोसा नहीं है। परमात्मा को पा लेना है। तो सब भांति के उपाय उसने किए। बूढ़ा हो गया था, थक गया था, परमात्मा की कोई प्राप्ति न हुई थी। कोई दूर, परमात्मा निकट नहीं आया। बुढ़ापा निकट आ रहा था, मौत करीब आ रही थी उतने ही प्राण और चिंतित होते जाते थे। एक दिन सुबह-सुबह ही... रात भर रोकर भगवान से प्रार्थना करता रहा कि कब मुझे दर्शन दोगे? सुबह उठा और नदी के, समुद्र के किनारे घूमने चला गया। सूरज उगने को था। किनारा एकांत था समुद्र का, कोई भी वहां न था। थोड़ी दूर चलने पर एक छोटा-सा बच्चा उसे खड़ा हुआ दिखाई पड़ा एक चट्टान

के पास। बहुत चिंतित, बहुत परेशान वह बच्चा था। अगस्तीन ने पूछाः तू किसलिए इतना परेशान है? और इतने सुबह-सुबह इस अकेले समुद्र के किनारे क्यों चला आया? उस बच्चे ने, अपने कंधे पर एक झोली टांग रखी थी। उस झोली में से एक बर्तन निकाला, छोटा सा बर्तन, और उसने कहा, मैं परेशान हूं। मैं इस बर्तन में समुद्र को भर लेना चाहता हूं लेकिन यह समुद्र भरता ही नहीं।

उस बच्चे का यह कहना था कि मैं इस बर्तन में इस समुद्र को भर लेना चाहता हूं, लेकिन यह भरता ही नहीं है।। और जैसे अगस्तीन के सामने कोई बंद द्वार खुल गया। और वह एकदम जोर से हंसने लगा और रोने भी लगा। तो उस बच्चे ने पूछा कि आपको क्या हो गया है? अगस्तीन ने कहा कि तू ही नासमझ नहीं है जो एक छोटे से बर्तन में समुद्र को भरने निकल पड़ा है। मैं भी नासमझ हूं। मैं अपनी छोटी सी बुद्धि में परमात्मा को पकड़ने चला था। मैं अपने छोटे से मस्तिष्क में सत्य को समाने निकल पड़ा था। अगर तू नासमझ है तो मैं और भी ज्यादा नासमझ हूं। समुद्र की तो फिर भी सीमा है, और हो सकता है, और हो सकता है किसी बड़ी प्याली में समुद्र बन भी जाए।। प्याली की भी सीमा है, और समुद्र की भी सीमा है। लेकिन मेरी बुद्धि की तो सीमा है और परमात्मा की कोई सीमा नहीं। मैं तुझसे भी ज्यादा नासमझ रहा। तीस वर्ष मैं पागल था कि मैं ईश्वर को जानने चला था। "मैं" ईश्वर को जानने चला था। तीस वर्ष मैंने गंवाए, रोया और पीड़ित हुआ अनेक बार परमात्मा को मैंने दोष दिया कि तू कैसा निर्दय और कठोर है कि मैं रोता हूं, मेरे आंसू तुझ तक नहीं पहुंचते। और आज मैं समझ पाया कि मेरी भूल वही थी जो तेरी भूल है। मैं परमात्मा की खोज छोड़ता हूं। मैं परमात्मा को जानने का पागलपन छोड़ता हूं।

वह नाचता हुआ वापस लौट आया अपने आश्रम में। वहां के और संन्यासियों ने कहाः क्या तुम्हें परमात्मा मिल गया जो तुम आज खुश हो? जो कि तीस वर्षों से कभी मुस्कराते नहीं देखे गए, आज नाचते हो, क्या तूने उसको पा लिया? क्या तुमने उसे जान लिया? अगस्तीन ने कहाः उसे तो मैंने नहीं पाया, लेकिन अपने को खो दिया। उसे तो मैंने नहीं जाना, लेकिन अपने जानने के पागलपन को मैं समझ गया। और जिस क्षण मैंने यह दौड़ छोड़ दी और जानने का यह भ्रम छोड़ दिया उस क्षण मैंने पाया, वह तो सामने ही था। वह तो सामने ही है। मैं भी तो वही हूं। मैंने उसे कभी खोया ही नहीं था। लेकिन उसे खोजने और जानने के पागलपन में मैं पड़ गया था और मैं इसी भूल में उसे खोए हुए था जो कि अभी खोया हुआ नहीं था।

अगस्तीन का जानने का खयाल छूटा और उसने जान लिया। अज्ञान के लिए मैंने कहा है कि यह अज्ञान हमारे अहंकार की मृत्यु बन जाएगी, अगर मैं यह ठीक से जान सकूं कि मैं कुछ भी नहीं जानता हूं और मैं यह जान सकूं कि जो असीम है वह सीमित बुद्धि से नहीं जाना जा सकेगा; और मैं यह जान सकूं कि प्याली में समुद्र भरना पागलपन है, और अपनी बुद्धि में सत्य को भर लेने का खयाल और भी बड़ा पागलपन है। अगर यह मुझे दिखाई पड़ जाए, तो मैं तो गया, मेरी सामर्थ्य तो मिट गई। मैं तो रिक्त और शून्य हो गया। और जिस क्षण कोई व्यक्ति उस स्थिति में पहुंच जाता है जहां उसे यह भी भ्रम नहीं रह जाता कि मैं जानता हूं।। अज्ञान की, न जानने की, स्टेट ऑफ नॉट नोइंग में है, जब कि उसे कुछ भी प्रतीत नहीं होता कि मैं जानता हूं, मन एकदम मौन और शांत हो जाता है। उसी शांति में जाना जाता है।

अज्ञान ज्ञान का द्वार है, अज्ञान का बोध। लेकिन हम सारे लोग अज्ञान को ढांक लेते हैं उधार ज्ञान से। अज्ञान तो भीतर बना रहता है, ज्ञान बाहर से इकट्ठा कर लाते हैं। और उस ज्ञान के ऊपर, छा जाता है हमारा अज्ञान के ऊपर। ऐसे अज्ञान को भीतर छिपा लेते हैं। आप जानते हैं, ईश्वर है? भीतर अगर झांकेंगे तो पता चलेगा, नहीं जानता हूं। लेकिन अगर बुद्धि से पूछेंगे तो बुद्धि कहेगी, हां ईश्वर तो है, किताबों में लिखा है। गुरु कहते हैं, ऋषि मुनि कहते हैं, ईश्वर है। जब तक कोई और कहता है, ईश्वर है तब तक आपके लिए ईश्वर नहीं है। जिस दिन आपके प्राण जानेंगे, उसी दिन होगा। उसके पहले नहीं हो सकता।

और आपके प्राण कब जानेंगे? आपके प्राण तभी जानेंगे जब दूसरों के जानने पर से आप अपने विश्वास को वापस लौटा लेंगे। जो आदमी दूसरों पर विश्वास करता है, वह अपने पर विश्वास नहीं करता है। खुद पर जो अविश्वास है वही दूसरों पर विश्वास बन जाता है। खुद पर जो अश्रद्धा है वही दूसरों के ऊपर श्रद्धा बन जाती है। और जो व्यक्ति किसी और को पकड़े हुए है, वह कभी भी उसको नहीं जान सकेगा जो उसके भीतर छिपा है।

दूसरों को पकड़ने के आसरे और सहारे में अपने से वंचित रह जाता है। छोड़ देना होगा।

जरथुस्त्रा अपने शिष्यों से विदा हो रहा था। उसका आखिरी दिन आ गया और उसने अपने शिष्यों से कहा कि अब मैं जाऊं, और मेरी पुकार आ गई है उस देश से जहां मुझे जाना पड़ेगा और जहां सब को जाना पड़ेगा। और तुम्हें कुछ अंतिम बात मुझसे पूछनी हो तो पूछ लो। उसके शिष्यों ने कहाः जो तुम्हें कहना था, तुमने हमसे कहा है और हम उसे प्राणों में संजोए रखेंगे। अगर तुम्हारे ही मन में कुछ कहने को हो तो तुम अंतिम समय में मुझसे कह दो। जरथुस्त्रा ने क्या कहा।। हैरान हो जाएंगे जो जरथुस्त्रा ने कहा।। जरथुस्त्रा ने कहाः बीवेयर ऑफ जरथुस्त्रा। जरथुस्त्रा ने कहाः जरथुस्त्रा से सावधान रहना। शिष्य उससे बोले, क्या अर्थ है तुम्हारा? जरथुस्त्रा ने कहाः मुझे मत पकड़ लेना नहीं तो तुम उस ज्ञान से वंचित रह जाओगे जो तुम्हारे भीतर पैदा हो सकता है। तो मैंने तुमसे बातें कहीं, और अब अंतिम बात यह कहता हूं कि मुझसे सावधान रहना और मुझे मत पक.ड़ लेना। नहीं तो मैं ही तुम्हारा शत्रु हो जाऊंगा। इसलिए जरथुस्त्रा ने कहा, बीवेयर ऑफ जरथुस्त्रा। ब.ड़ी अजीब बात कही है। कहा, मुझसे सावधान रहना, मुझको मत पक.ड़ लेना। लेकिन लोगों ने जरथुस्त्रा को पक.ड़ लिया है, महावीर को, बुद्ध को, कृष्ण को, क्राइस्ट को; और इसी वजह से खुद को पाने में असमर्थ हैं।

जो भी किसी को पक.ड़ लेगा, वह खुद को पाने में असमर्थ हो जाएगा। जो आंखे दूसरों पर टिक जाती हैं, वह अपने को नहीं जान पाती हैं, और जो ज्ञान दूसरों के ज्ञान से तृप्त हो जाता है वह उस ज्ञान को नहीं खोज पाता जो भीतर खोया हुआ है। वह ज्ञान तो जागता तभी है जब हम बाहर के सारे ज्ञान से अतृप्त हो जाते हैं और किसी ज्ञान से तृप्त नहीं होते। जीवन में खोई हुई शक्तियों के जागने का एक ही नियम है और वह नियम यह है कि जब चुनौती ख.ड़ी होती है तभी शक्तियां जागती हैं। आपसे अगर मै कहूं, दौ.ड़ए, तो आप कितनी तेज दौ.ड़ सकते हैं? आप अपनी पूरी ताकत लगा कर दौ.ड़ें तब भी आप अपनी पूरी ताकत से नहीं दौ.ड़ेंगे। लेकिन कल अगर आपके पीछे कोई बंदूक लेकर लग जाए तब आपको पता चलेगा, आप कितनी तेजी से दौ.ड़ सकते हैं। तब आप जानेंगे, जितनी तेजी से मैं दौ.ड़ा था वह पूरा दौ.ड़ना नहीं था, मेरे भीतर और ताकत थी सोई हुई। लेकिन कोई बंदूक लेकर पीछे प.ड़ गया तो उस चुनौती में, उस चैलेंज में आपके भीतर की सारी सोई हुई ताकत जाग जाती है और आप पूरी ताकत से दौ.ड़ते हैं। वह सोई हुई थी ताकत, लेकिन चुनौती उसे मिले तो वह जागेगी।

हमारे भीतर ज्ञान की शक्ति सोई हुई है, लेकिन चुनौती नहीं देते हम उन्हें। बल्कि हम सारी चुनौती को मार डालते हैं। दूसरों का ज्ञान पकड़ लेते हैं और तृप्त हो जाते हैं। चुनौती नष्ट हो जाती है, चैलेंज नष्ट हो जाता है। जो आदमी किसी के भी ज्ञान को कभी स्वीकार नहीं करता और हमेशा इस कोशिश में रहता है कि मैं किसी और के ज्ञान से तृप्त न होऊं उसके भीतर।। उसके भीतर एक खाली जगह पैदा हो जाती है, एक रिक्तता पैदा हो जाती है और उसके भीतर अज्ञान का बोध गहरा होने लगता है। वह उस रिक्तता में, उस अज्ञान की पीड़ा में ही, उस चुनौती में ही भीतर सोई हुई शक्तियां जागती हैं और कोई भी रास्ता भीतर की सोई हुई शक्तिओं के जागने का नहीं है।

लेकिन जो लोग अपने को किसी ज्ञान से भर लेते हैं उनकी सोई हुई शक्तियां सोई हुई रह जाती हैं। इसलिए मैंने कहा, ज्ञान से सावधान। किस ज्ञान की मैं बात कर रहा हूं? उस ज्ञान की, जो बाहर से आता है। और किसलिए कह रहा हूं, उस ज्ञान से सावधान? ताकि वह ज्ञान आ सके, जो कहीं से भी नहीं आता है।। भीतर से जन्मता है और विकसित होता है।

जो लोग कागज के फूल लाकर घर सजा लेते हैं, उन्हें यह खयाल भी भूल जाता है कि ऐसे फूल भी पैदा किए जा सकते हैं जो कागज के नहीं होते। और जो लोग कागज के फूलों पर विश्वास करने पर धीरे-धीरे निर्भर

हो जाते हैं, असली फूलों को पैदा करने का उनका खयाल ही मिट जाता है। जो ज्ञान दूसरों से आता है वह कागज के फूलों की भांति है। वे बाजार में सस्ते मिल जाते हैं। उनके लिए कोई श्रम नहीं करना पड़ता। उन्हें पैदा करने के लिए कोई मेहनत, कोई साधना नहीं करनी पड़ती है। उन्हें सम्हालने की बहुत चिंता नहीं करनी पड़ती है। वे फूल मुर्दा होने की वजह से कभी मुर्झाते भी नहीं है। कागज के फूल घरों में जैसे सजाने की आदत है... और वह आदत दुनिया में बढ़ती चली जा रही है। कागज की जगह और प्लास्टिक के फूल बन रहे हैं, और अच्छे फूल बनेंगे। यह भी हो सकता है, आदमी ऐसे फूल बना ले जो परमात्मा के फूलों के मुकाबले भी ज्यादा सुगंध देने लगें, ज्यादा सुंदर दिखाई पड़ने लगें, ज्यादा टिकाऊ हों, एक दफे खरीद लें और जिंदगी भर काम दे जाएं। आदमी ऐसे फूल बना लेगा। इसमें क्या कठिनाई है? लेकिन फिर भी मैं आपसे कहता हूं कि वे फूल मुर्दा होंगे, वे फूल जिंदा नहीं होंगे।

ठीक जैसे हम कागज के फूल बनाते हैं, वैसे ही हमने कागज का ज्ञान इकट्ठा कर लिया है। किताबों से, कागजों से किया गया इकट्ठा ज्ञान कागजी फूलों से ज्यादा नहीं है। वह ज्ञान सस्ता भी मिल जाता है, आसानी से मिल जाता है और मजे से हम ज्ञानी हो जाते हैं। बिना ज्ञानी हुए ज्ञानी होने का आनंद आ जाता है। अहंकार तृप्त हो जाता है और यात्रा रुक जाती है। इसलिए मैंने कहा, ज्ञान से सावधान! ज्ञान से छूटना होगा ताकि सच में ज्ञान पैदा हो सके। ज्ञान मुक्ति है, लेकिन वह ज्ञान नहीं, जो हम दूसरों से पा लेते हैं। वह ज्ञान, जो भीतर से आता है, मुक्त करता है। लेकिन उसकी यात्रा में यह साहस करना होगा, इसे छोड़ने का साहस करना होगा।। इसलिए मैंने कहा।

किन्हीं मित्र ने पूछा है इसी संबंध में, कि आप कहते हैं, शब्द बाधा है, शास्त्र बाधा है, फिर भी आप तो शब्दों का उपयोग कर रहे हैं?

यह तो मैंने कहा नहीं कि शब्दों का उपयोग न करें। यह तो मैंने आपसे कहा नहीं कि शब्दों का उपयोग वर्जित कर दें, आप चुप हो जाएं। मैंने कहा कुल इतना है कि शब्दों के द्वारा सत्य हस्तांतरित नहीं होता है। मैं शब्दों का उपयोग कर रहा हूं, लेकिन इस भ्रम में नहीं हूं कि जो सत्य मुझे दिखाई पड़ता है वह मैं आपको शब्दों के द्वारा दे सकता हूं। इस भ्रम में नहीं हूं। और मेरे शब्दों को भूल से भी पकड़ना मत। उनको पकड़ने में कोई भी सत्य मिलने वाला नहीं है। फिर भी क्यों बोल रहा हूं?

मैं इसलिए नहीं बोल रहा हूं कि आपको सत्य दे सकूंगा। बल्कि केवल इसलिए बोल रहा हूं कि जो असत्य शब्दों के द्वारा आपके भीतर बैठ गया है, शब्दों के द्वारा उस असत्य को निकाला जा सकता है। कांटा कांटे को निकाल सकता है। शब्द, सत्य मान कर अगर भीतर बैठ गए हों तो शब्दों के द्वारा ही उन शब्दों को बाहर निकाला जा सकता है। लेकिन इससे आपको सत्य मिल न जाएगा। मेरे शब्द आपको सत्य नहीं दे सकते हैं। मेरे शब्दों से सत्य आपको उपलब्ध नहीं हो सकता है। लेकिन एक बात हो सकती है। अगर आपको यह भी बोध आ जाए कि शब्द व्यर्थ हैं और शब्दों की पकड़ व्यर्थ है और उसे खोजना है, जो शब्दों के बाहर है, तो आप उस यात्रा पर निकल जाएंगे जहां सत्य मिल सकता है। वह मैं या कोई और आपको नहीं देगा। वह यात्रा तो आपको ही करनी पड़ेगी।

शब्दों के द्वारा असत्य क्या है, यह कहा जा सकता है और यह भी कहा जा सकता है कि शब्दों के द्वारा असत्य पहुंचाया नहीं जा सकता। लेकिन शब्दों से सत्य नहीं दिया जा सकता। शब्द कांटो की तरह काम कर सकते हैं। लगा हुआ कांटा निकाल सकते हैं। लेकिन पहला कांटा अगर पैर में लगा हो, दूसरे कांटे से हम उस कांटे को निकाल लें तो फिर कोई इस खयाल में न पड़ जाए कि दूसरे कांटे ने बड़ी कृपा की है इसलिए अब इसको पैर में लगा लें। यह मूढ़ता हो गई। क्योंकि इस कांटे ने बड़ी कृपा की, पहले कांटे को निकाला तो चलो इसका मंदिर बनाएं, इसकी पूजा करें। यह कांटा बहुत ही अच्छा है, इसने कांटे को निकाला। हम पहले कांटे को निकाल कर दूसरे को भी फेंक देते हैं, जैसे पहले को फेंक दिया।

तो मेरे शब्द या किसी के भी शब्द एक काम कर सकते हैं कि किसी कांटे को निकाल दें। लेकिन कांटा निकल जाने के बाद उनकी कीमत उतनी ही है जितनी दूसरे कांटे की होती है, उससे ज्यादा नहीं है। वह उनको बिल्कुल फेंक देने की जरूरत है। उनको रख कर, मंदिर बना कर पूजा करने की जरूरत नहीं है। उनकी इससे ज्यादा कोई उपादेयता नहीं है। अगर कोई भी शब्द आपके मन में न रह जाए तो... शायद उसका आपको अनुभव हो सके जो निः-शब्द सत्य है। मैं इसलिए नहीं बोल रहा हूं कि आपको मैं बोलने से सत्य दे दूंगा। कोई कभी किसी को बोलने से सत्य नहीं दे सका है। लेकिन हां, एक नेगेटिव, एक नकारात्मक काम शब्द कर सकते हैं। वे कांटे का काम कर सकते हैं और किन्हीं कांटों को निकाला जा सकता है। लेकिन हम बहुत पागल हैं। जो कांटे हमारे कांटे को निकालते हैं हम उन्हीं कांटों को अपने पुराने घाव में रख लेते हैं और उनकी पूजा करना शुरू कर देते हैं। महावीर की, बुद्ध की, कृष्ण की, क्राइस्ट की पूजा और क्या है? किन्हीं शब्दों को उन्होंने निकालने की कोशिश की थी, हमने उनके शब्द पकड़ लिए हैं।

बुद्ध ने जीवन भर कहाः पूजा मत करना किसी की। बुद्ध की जितनी मूर्तियां है दुनिया में उतनी और किसी की भी नहीं हैं। बुद्ध की इतनी ज्यादा मूर्तियां बनीं कि बुत-बुत शब्द का अर्थ ही मूर्ति हो गया। यह शब्द बुद्ध का ही अपभ्रंश है। बुद्ध का अर्थ ही मूर्ति हो गया। और बुद्ध ने कहा था, पूजा करना मत। तो जिसने हमसे कहा, पूजा मत करना तो हमने कहा, यह आदमी बहुत अच्छा है, इसकी पूजा करो। इसने हमको पूजा करने से छुड़ाया तो अब हम क्या करें? हम इसकी पूजा करें।

यह सारी दुनिया में हुआ है। यह आज भी हो रहा है। यह कल भी हो सकता है।

एक मित्र ने पूछा है कि आपकी किताबों के ऊपर आपके चित्र छपे हैं। आप बैठते हैं तो आपके सम्मान में माला पहनाई जाती है और आप यह स्वीकार करते हैं। तो फिर भगवान की मूर्ति पर अगर हम माला चढ़ाएं और भगवान की मूर्ति बनाएं और पूजा करें, तो हर्ज क्या है?

बड़ी ठीक बात पूछी है। आदमी बड़ा अदभुत है। बुद्ध की, महावीर की, कृष्ण की और राम की मूर्तियां बनीं, उनकी पूजा हुई। मुहम्मद ने देखा कि पूजा तो खराब हो गई; पूजा ने तो आदमी को भटका दिया तो मुहम्मद ने कहा, पूजा मत करना और मूर्ति मत बनाना। तो एक तरह के पागल थे मूर्तिपूजक। मोहम्म्द ने दूसरे लोगों को कहा कि मूर्ति बनाना मत, मूर्ति पूजना मत, मूर्ति बाधा है। दूसरे तरह के पागल दुनिया में खड़े हो गए, जो मूर्ति तोड़ने लगे और फोड़ने लगे। उन्होंने फिर यह झंडा निकाला कि हम सारी दुनिया की मूर्तियां मिटा देंगे, सारे मंदिर तोड़ डालेंगे। एक खतरा था कि लोग मूर्ति पूज रहे थे, दूसरा खतरा पैदा हो गया कि लोग मूर्ति तोड़ने लगे। ये दोनों एक ही जैसे पागल हैं। इसमें कोई भेद नहीं है। आदमी इतना अदभुत है कि वह किस चीज से क्या अर्थ निकालेगा, यह बड़ी हैरानी की बात है। तो अगर मैं किसी से कहूं कि मेरी फोटो छापिए किताब पर, तो वह पूजा शुरू कर देगा। और अगर मैं यह कहूं कि फोटो मत छापिए तब वह कहेगा कि मेरा मत यह है कि फोटो मत छापो। तो अगर कहीं फोटो छपी हो तो फाड़ दो। अब मैं क्या करू?

हमारा मन बड़ा अदभुत है। हम हर बात से कुछ न कुछ उपद्रव की बात निकालते हैं और खोजते हैं। इसलिए सवाल यह नहीं है कि फोटो छपें या न छपें, सवाल यह है कि आपका मन पूजक का मन नहीं होना चाहिए। भंजक का भी मन नहीं होना चाहिए। पूजा करने वाला उतनी ही भूल में है जितना मूर्तिभंजक क्योंकि दोनों की श्रद्धा मूर्ति पर है। मूर्ति बनाने वाले की श्रद्धा और तोड़ने वाले की श्रद्धा, दोनों की श्रद्धा मूर्ति पर है। दोनों मानते हैं कि मूर्ति बनाने से कुछ होगा। एक मानता है, तोड़ने से कुछ होगा।

न तो किताबों पर फोटो से कुछ होता है और न, न होने से कुछ होता है। ये दोनों बातें एक सी फिजूल, एक सी अर्थ की नहीं; या एक सी अर्थहीन हैं। इन दोनों बातों में से किसी बात को मूल्य देने का कोई अर्थ, कोई प्रयोजन नहीं है।

और एक बात आपसे कहूं, मेरी तो फोटो हो सकती है, आपकी फोटो हो सकती है, लेकिन परमात्मा की फोटो कैसे हो सकती है? मेरी मूर्ति हो सकती है, आपकी मूर्ति हो सकती है, लेकिन परमात्मा की मूर्ति कैसे हो सकती है? परमात्मा का कोई रूप है? परमात्मा का कोई आकार है? परमात्मा की कोई देह है? अब तक तो कोई फोटोग्राफर समर्थ नहीं हो पाया परमात्मा की फोटो निकालने में। अब तक कौन समर्थ हो पाया है? और जिन मूर्तियों को हम परमात्मा की मूर्तियां कहते हैं।। हमें यहीं भूल हो जाती है, वे सभी आदमियों की मूर्तियां हैं, परमात्मा की कोई मूर्ति नहीं है। अगर आपको यह खयाल हो कि यह राम की मूर्ति है तो कोई हर्जा नहीं है, कृष्ण की है मूर्ति है तो कोई हर्जा नहीं है। लेकिन यह परमात्मा की मूर्ति है तो खतरा शुरू हो गया। ये मूर्तियां मनुष्य की हैं और मनुष्य के द्वारा बनाई गई हैं और मनुष्य ने अपने ही आधार पर, अपनी ही अनुकृति में मूर्तियां बना ली हैं। हिंदुओं की मूर्तियां देखिए, चीनियों की मूर्तियां देखिए, नीग्रो की मूर्तियां देखिए, आपको फर्क पता चल जाएगा। नीग्रो भगवान की मूर्ति जो बनाता है तो उसके ओठ मोटे हैं, बाल घुंघराले होते हैं। हिंदू तो ऐसी मूर्ति नहीं बनाता भगवान की। चीनी जो मूर्ति बनाता है उसकी हड्डियां निकली हुईं, नाक चपटी होती हैं। हिंदुस्तान में तो हम ऐसी चपटी नाक के भगवान नहीं बनाते। कोई बनाएगा तो हम कहेंगे, यह कैसे भगवान हैं, चपटी नाक वाले भगवान! अब तक तो ऐसे भगवान हमने नहीं देखे। हमारे भगवान की नाक तो बड़ी लंबी, नुकीली है। वैसी नाक होती है।

लेकिन चीनियों की नाक चपटी क्यों होती है भगवान की? कई तरह के भगवान भी हैं क्या? लेकिन चीनी अपनी अनुकृति में अपने भगवान को बनाते हैं। वह आदमी की ही मूर्ति है। हिंदु अपनी अनुकृति में बनाते हैं, नीग्रो अपनी अनुकृति में बनाते हैं, और नीग्रो के भगवान काले होते हैं, गोरे बिल्कुल नहीं होते। लेकिन एक अंग्रेज अपने भगवान को काला कभी भी नहीं बना सकता है। वह तो काले आदमी को अपने रास्तों से नहीं निकलने देता तो काले भगवान को मंदिर में कैसे घुसेड़ेगा? वह तो काले भगवान आ जाएं तो अंग्रेज के होटल में नहीं घुस सकते। मंदिर की तो बात अलग है।

हम अपनी अनुकृति में भगवान बनाते हैं। भगवान की कोई मूर्ति है क्या? पुरुष ने भगवान की मूर्तियां बनाई हैं। अब तक स्त्रियों ने भगवान की मूर्तियां नहीं बनाईं नहीं तो वे दूसरे ढंग की होतीं। आपको पता है? राम को मूछें नहीं हैं, दाढ़ी नहीं है। कृष्ण को मूछें नहीं हैं। बुद्ध को, महावीर को मूछें-दाढ़ी नहीं हैं। या तो यह कोई बहुत दैवी ढंग से शेव करवाते रहे होंगे और या इनको कुछ बीमारी रही होगी कि इनको मूछें-दाढ़ी पैदा नहीं हुईं। नहीं, लेकिन यह बात नहीं है। पुरुष ने ये मूर्तियां बनाई हैं। और पुरुष के मन में स्त्री सौंदर्य की प्रतिमूर्ति है, स्त्री सौंदर्य की मूर्ति है। पुरुष के चित्त में स्त्री का सौंदर्य सब कुछ है। स्त्री को दाढ़ी-मूंछ नहीं होतीं। जब उसने अपने भगवान बनाए तो उसको सुंदर बनाने के लिए दाढ़ी-मूछ से विहीन बना दिए। पुरुष के मन में स्त्री की प्रतिमा है सौंदर्य की। सौंदर्य की जो प्रतिमा है पुरुष के मन में, वह स्त्रैण है। स्त्री उसे सुंदर मालूम पड़ती है। तो जब उसने अपने भगवान बनाए, तो उनको सुंदर बनाने के लिए दाढ़ी-मूंछ से मुक्त कर दिया।

भगवान बहुत पहले दाढ़ी-मूंछ से मुक्त हो गए। लोग तो अब धीरे-धीरे मुक्त हो रहे हैं। यह धीरे-धीरे लोगों को समझ में आया है कि जब भगवान मुक्त हो सकते हैं दाढ़ी-मूंछ से, तो हम भी मुक्त हो जाएं। तो उन्होंने भी दाढ़ी-मूंछ साफ कर दिए। यह स्त्रैण प्रतिमा है हमारे चित्त में सौंदर्य की जिसको हमने भगवान पर थोप दिया है। अगर घोड़े भगवान की मूर्ति बनाएं तो आप समझते हैं आदमी जैसी बनाएंगे? आप गलती में हैं। घोड़े जैसी बनाएंगे। अगर गधे भगवान की मूर्ति बनाएं, तो आप जैसी बनाएंगे? कोई गधा आपको इस योग्य न समझेगा कि आप भगवान हो सकते हैं। गधा अपने जैसी मूर्ति बनाएगा भगवान की। चिड़ियां बनाएंगी तो अपने जैसी बनाएंगी।

भगवान की मूर्तियां नहीं हैं ये, हमारे मन की मूर्तियां हैं जो हम बना रहे हैं। यह हम बनाते हैं। हमारा चित्त इनमें प्रतिफलित है। तो आप आदमियों के चित्र बनाएं, कोई मुझे इनकार नहीं है। आप आदमियों की

मूर्तियां बनाएं, कोई इनकार नहीं है। बनानी चाहिए। कोई हर्जा नहीं है। लेकिन जब आप किसी मूर्ति को या किसी चित्र को भगवान कहने लगते हैं तब भूल शुरू हो जाती है। तब आप गलती में पड़ जाते हैं। तब वह मूर्ति और रूप आपको बांधने का कारण हो जाता है। और भगवान को तो केवल वे ही जान सकते हैं जो सब मूर्तियों, सब रूपों से ऊपर उठ जाएं।

तो मेरी किताब पर अगर कोई न फोटो छाप दी हो तो परेशान न हों। एक ही खयाल रखें परेशान होने वाला वही आदमी है जो पूजा करने वाला है। इन दोनों में फर्क नहीं है। कोई फर्क नहीं पड़ता है, छापें या न छापें। आदमी की फोटो छापने से क्या हर्जा है? लेकिन उस फोटो को अगर कोई भगवान कहने लगे तो उससे सावधान रहना। उसकी रिपोर्ट पुलिस में करवा दें कि यह आदमी खतरनाक है। यह एक आदमी की फोटो को भगवान की फोटो कहता है। अगर कोई कहने लगे, यह फोटो तीर्थंकर की है, अवतार की है, तो उस आदमी से सावधान रहना। उसको पकड़ कर पागलखाने भेज देना, उसका इलाज करवा देना।

जब भी हम आकार में भगवान को बांधने की कोशिश करते हैं, तभी पागलपन शुरू हो जाता है। और दुनिया में ऐसे पागल भी हुए हैं जो खुद यह घोषणा कर दें कि मैं हूं भगवान। मुझको पूजो, मैं तुम्हें मुक्ति दिलवा दूंगा। ऐसे पागल भी हुए हैं।

मैंने एक घटना सुनी।। इराक में एक आदमी ने यह घोषणा कर दी कि मैं भगवान का पैगंबर हूं। मुझे भगवान ने भेजा है। मोहम्मद के बाद ही मैं ही आया हूं दुनिया में। लेकिन मुसलमान तो इस बात को मान नहीं सकते कि मोहम्म्द के बाद और कोई पैगंबर आ सकता है?

जैन इस बात को नहीं मान सकते कि महावीर के बाद और कोई तीर्थंकर आ सकता है। बौद्ध इस बात को नहीं मान सकते कि बुद्ध के बाद और कोई आ गए भगवान। सबने दरवाजे बंद कर दिए हैं, डोर क्लोज्ड हैं। उसके आगे अब कोई नहीं आ सकता। क्योंकि खतरा है एक। अगर पच्चीसवां तीर्थंकर आ जाए और कहने लगे, महावीर गलत थे तो फिर क्या करेंगे? किस तीर्थंकर को मानेंगे? और मोहम्मद के बाद कोई पैगंबर आ जाए और कह दे कुरान में फलां-फलां भूलें हैं, भगवान ने मुझे नया एडीशन लेकर भेजा है कुरान का। तो फिर क्या करिएगा? नये को मानिए या पुराने को, इसलिए सब किताबों ने दरवाजे बंद कर दिए। इसलिए अब यह फाइनल है, यह अंतिम है, अब इसके आगे कोई जरूरत नहीं है किसी के आने की।

एक आदमी ने घोषणा कर दी कि मैं पैगंबर हूं नया और मैं नई किताब को लेकर आ गया हूं, अब कुरान को पूजने की कोई जरूरत नहीं। उस आदमी को फौरन पकड़ कर जेलखाने में बंद कर दिया गया। बादशाह उससे मिलने गया दूसरे दिन सुबह। और उसने कहाः तुम बड़े पागल मालूम होते हो। यह नासमझी छोड़ दो, नहीं तो सिवाय फांसी के और कोई रास्ता नहीं है। तुम्हें मैं समझाने आया हूं, तुम अपनी भूल स्वीकार कर लो और माफी मांग लो। हम तुम्हें छोड़ देंगे। तुमने कोई ऐसा जुर्म नहीं किया है। लेकिन यह सबसे बड़ा पाप है किसी का यह कहना कि मैं पैगंबर हूं। बस, मोहम्मद के सिवाय और कोई पैगंबर नहीं है। अल्लाह के सिवाय कोई भगवान नहीं है, मोहम्मद के सिवाय कोई पैगम्बर नहीं है। कहो कि मोहम्मद पैगंबर है और क्षमा मांग लो। उस आदमी ने कहाः तुम पागल हो। मोहम्मद पैगंबर था, उससे मैं बड़ा पैगंबर हूं। उसने जो भूलें कीं उसे ठीक करने के लिए भगवान ने मुझे भेजा है। और रही फांसी की बात, तो चिंता मत करो, पैगंबरों पर मुसीबतें हमेशा आती रही हैं। यह कोई नई बात है? अरे, क्राइस्ट को सूली पर लटकाया लोगों ने, सुकरात को जहर पिलाया, मंसूर के टुकड़े-टुकड़े कर दिए! यह तो हमेशा होता रहा है। यह तो पैगंबरों की परीक्षाएं भगवान लेता है। तो तुम्हें जो करना है, करो। मैं तो एलान करूंगा नई किताब का।

यह बात ही चलती थी कि सींखचों के भीतर से एक दूसरा आदमी चिल्लाया कि यह आदमी बिल्कुल गलत कह रहा है।। एक और आदमी बंद था सींखचों के भीतर, वह चिल्लाया कि यह आदमी बिल्कुल गलत कह

रहा है। मैं खुद परमात्मा हूं। मैंने मोहम्मद के बाद किसी को भेजा ही नहीं, इसको तो मैंने देखा ही नहीं आंख से। ये सज्जन और एक महीने पहले बंद किए गए थे। इसको भगवान होने का ही खयाल पैदा हो गया है!

हमारा चित्त, हमारा अहंकार क्या-क्या रूप ले सकता है, इसका कोई हिसाब नहीं। क्या-क्या रूप ले सकता है, इसका कोई हिसाब नहीं है। मैं तीर्थंकर हूं, मैं हूं भगवान, मैं हूं ईश्वर का पुत्र, ये पागलपन की स्थितियां हैं, और कुछ भी नहीं हैं। कोई दूसरा कहे तब तो ठीक है, लेकिन मैं खुद इसकी घोषणाएं करूं तो बड़ा पागलपन हो जाता है। आप इसकी घोषणाएं करें, आप पागल हैं। अगर दुनिया किसी दिन स्वस्थ होगी तो ऐसे लोगों की हम पूजा नहीं इलाज करेंगे। इनके लिए हम मंदिर नहीं बनाएंगे, इनके लिए चिकित्सालय बनाएंगे। इनका इलाज होना चाहिए। ये परेशान, पीड़ित, अहंकार की अंतिम स्थिति में पहुंचे हुए लोग हैं।

जब किसी को सत्य का अनुभव होता है तो उसे ऐसा अनुभव नहीं होता है कि मैं परमात्मा हूं, उसे अनुभव होता है कि जो भी है, सब परमात्मा है। "मैं" का तो खयाल ही मिट जाता है। "मैं" का तो बिंदु ही टूट जाता है। उसे तो लगता है, सब परमात्मा है। उसे तो लगता है, जो भी है, सब परमात्मा है। उसे तो भेद नहीं रह जाता कि परमात्मा के अतिरिक्त और भी कुछ है, यह दिखाई नहीं पड़ता। उसे यह कैसे दिखाई पड़ेगा कि मैं परमात्मा हूं और तुम मेरी पूजा करो, तुमको मैं ले चलूंगा आगे, मोक्ष पहुंचा दूंगा! तो तुम कौन हो, अगर मैं परमात्मा हूं? जिसको परमात्मा का बोध होता है उसे दिखाई पड़ता है कि परमात्मा के सिवाय और कुछ भी नहीं है। तो वह किसकी मूर्ति बनाने को कहेगा, और किसकी पूजा करने को कहेगा?

एक बात ध्यान में रखना जरूरी है कि सत्य की कोई सीमा नहीं है, प्रभु की कोई सीमा नहीं है। तो जहां-जहां सीमा हो, वहां जानना कि मनुष्य का ईजाद है। मनुष्य की खोज, मनुष्य की खोज मनुष्य की सृष्टि है। और अगर असीम को पाना हो तो सीमाएं छोड़ देनी पड़ेंगी, सीमाओं से ऊपर उठ जाना पड़ेगा। सीमाएं बाधा हैं। उनको जो छोड़ेगा वही ऊपर उठ सकता है, और असीम के साथ एक हो सकता है।

और इस तरह के लोगों से भी सावधान, और अपने भीतर भी इस वृत्ति से सावधान रहना। अहंकार बड़े सूक्ष्म रूप लेता है और घोषणाएं करता है। ये सब अहंकार की ही स्थितियां हैं, इससे ज्यादा नहीं। यह ध्यान में रहे कि सीमित से, साकार से बंध नहीं जाना है चित्त को बांध नहीं लेना है। बस इतना ध्यान में रहे। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि आप जाकर मूर्तियां तोड़ने लगें और मंदिरों में जाकर आग लगाने लगें क्योंकि यह भी सीमित की ही फिर पूजा शुरू हो गई। चाहे आग लगातें हों तो भी सीमित की ही पूजा शुरू हो गई है। आपको क्या परेशानी हो गई है? आपको सीमित से ऊपर उठना है, मूर्ति बनाने से भी उठना है, मूर्ति तोड़ने से भी उठना है। एक ऐसा मनुष्य चाहिए, एक ऐसा चित्त चाहिए जो सब भांति मूर्ति के ऊपर उठ जाए, सीमा के ऊपर उठ जाए, न वह मूर्ति बनाने वाला हो, न तोड़ने वाला हो। तो।। तो शायद, अमूर्त जो है, वह जो सबमें फैला हुआ अमूर्त और निराकार है उसकी प्रतीति और अहसास हो सकेगा। उसके संबंध में आज रात थोड़ी बात और आपसे करूंगा।

एक-दो छोटे प्रश्नों के और उत्तर।

एक मित्र ने पूछा हैः पुनरुक्ति से मूर्छा आती है, तो नाम स्मरण से भी तो मूर्च्छा आएगी?

निश्चित आएगी। और नाम स्मरण का उपयोग मूर्च्छा के लिए किया ही जाता है। आदमी बहुत दुखी और परेशान है। आदमी बहुत पीड़ित और चिंतित है। उसका चित्त बहुत बेचैन है। बहुत टेंस, तनाव से भरा हुआ है। यह जो दुख की और तनाव की स्थिति है, इससे बचने के दो उपाय उसे दिखाई पड़ते हैं। एक उपाय तो यह है कि किसी भांति इसे भूला जा सके। तो वह सिनेमा देखता है तीन घंटे तक और भूल जाता है तीन घंटे के लिए। डूब

जाता है कहीं, तन्मय हो जाता है, फिल्म को देखने में भूल जाता है। तीन घंटे के बाद फिर दुख आपस लौट आता है तो वह सोचता है कि कल और सिनेमा देखेंगे। मेटनी शो भी देख लें। एक आदमी बेचैन है, परेशान है, नशा कर लेता है, शराब पी लेता है। शराब पी लेता है, जब तक बेहोश रहता है, भूला रहता है। फिर होश में आ जाता है, फिर चिंता और दुख लौट आते हैं। सेक्स है, शराब है, संगीत है।। एक आदमी संगीत सुनने में चला जाता है। सिर हिलाने लगता है, भूल जाता है।

एक घटना मुझे स्मरण में आती है। लखनऊ में नवाब था। नवाब अकसर ही पागल होते हैं। होना स्वाभाविक है क्योंकि जो पागल नहीं होता है वह नवाब होना ही नहीं चाहता है। वह भी पागल था। एक संगीतज्ञ उसके दरबार में आया। उसकी बड़ी ख्याति थी, उस संगीतज्ञ की। लेकिन वह संगीतज्ञ भी अपने ही तरह का अनूठा आदमी था। सितार बजाता था तो कोई शर्त पहले रख लेता था। उसने बड़ी अजीब शर्त लखनऊ के दरबार में रखी। उसने कहा कि मैं बजाऊंगा सितार, लेकिन सुनने वालों में से किसी का सिर नहीं हिलना चाहिए। अगर सिर हिला तो मैं फौरन बजाना बंद कर दूंगा। नवाब तो था वाजिद अली, उसने कहाः तुम बेफिकर रहो। सिर हिलने की बात कहते हो? बंद करने की कोई जरूरत नहीं, हम सिर ही अगल करवा देंगे। तुम डरते क्या हो? जो सिर हिलेगा, उसको ही हम अलग करवा देंगे। तुम अपना बजाना जारी रखना, इसकी फिकर मत करना।

लखनऊ में उसने खबर पिटवा दी कि जो लोग सुनने आएं, सोच समझ कर आएं क्योंकि जिसने भी सिर हिलाया, उसका सिर कटवा देंगे। वह सिर लिए हुए वापस नहीं लौटेगा। वैसे तो हजारों लोग आते। फिर गांव जो बहुत ही अति संयमी रहे होंगे वही थोड़े से सौ पचास लोग आए। वे बिल्कुल योगासन साध कर बैठ गए होंगे सौ पचास लोग। किसी भांति हिलना खतरनाक है। भूल से भी मक्खी उड़ाने के लिए भी हिल जाओ तो झंझट हो जाएगी।

सितार शुरू हुआ। घड़ी बीती, दो घड़ी बीती, लोग मूर्तियां बने बैठे रहे। रात आधी होने को आई, सितार अपनी पूरी गहराई में आया होगा। कुछ सिर हिलने शुरू हो गए। कोई पंद्रह-बीस सिर हिलने लगे। नवाब ने आदमी लगा रखा था कि नोट कर लेना कि कौन-कौन सिर हिलते थे। सुबह होते-होते संगीत पूरा हुआ। पंद्रह आदमी पकड़ कर सामने खड़े कर दिए गए संगीतज्ञ के। और नवाब ने कहाः इनके सिर कटवा दूं? संगीतज्ञ ने कहा कि नहीं, सिर कटवाने की जरूरत नहीं। कल मैं केवल इन्हीं लोगों के सामने बजाऊंगा, और कोई नहीं आ सकता है। नवाब ने उन लोगों से पूछा कि तुम कैसे पागल हो। जब मरने का पता था तो सिर क्यों हिलाया? उन लोगों ने कहाः जब तक हमें होश था तब तक हमने नहीं हिलाया। लेकिन जब हमें होश ही नहीं रहा तो सिर के हिलाने की जिम्मेवारी हमारे ऊपर ही नहीं रही। जब तक हम थे, तब तक सिर नहीं हिला, जब हम नहीं रहे, अब फिर उसके बाबत हम कुछ कह ही नहीं सकते। जो कुछ हुआ, हुआ।

ये पंद्रह लोग डूब गए बेहोशी में। इन्हें यह भी पता नहीं रहा कि हम हैं। अगर इन्हें यह पता रहता कि हम हैं तो सिर नहीं हिल सकता था। संगीतज्ञ भी बेहोशी लाता है, शराब भी बेहोशी लाती है, सेक्स भी बेहोशी लाता है। और हजार रास्ते हैं। आदमी अपने को भुलाने का उपाय करता है कि किसी भांति जो उसके चित्त की पीड़ा है, वह भूल जाए। उन्हीं उपायों में कुछ उपाय गैर-धार्मिक हैं, कुछ उपाय धार्मिक हैं। कुछ इररिलीजियस मेथड हैं, कुछ रिलीजियस मेथड हैं।

नाम-स्मरण, मंत्र, पाठ, पूजा, प्रार्थना, भजन, इसी तरह के उपाय हैं, जो धार्मिक उपाय हैं भूलने के। खुद को भूलने के धार्मिक उपाय हैं। इनमें और इंटाक्सिकेंट में, इनमें और नशे की चीजों में कोई बुनियादी फर्क नहीं है। इन दोनों से एक ही का काम होता है भीतर जाकर। आदमी थोड़ी देर को अपने को भूल जाता है। और धर्म का भूलने से कोई संबंध नहीं है। धर्म का संबंध है कि आदमी पूरी तरह से अपने को जान ले और ये सारे उपाय हैं इस बात के लिए कि आदमी किसी भांति अपने को भूल जाए। ये दोनों बिल्कुल विरोधी दिशाएं हैं। धर्म का

संबंध सेल्फ रिमेंबरिंग से है। आदमी को आत्म स्मृति आ जाए। और इन सब उपायों का संबंध सेल्फ फॉरगेटफुलनेस से है, आदमी किसी भांति अपने को भूल जाए। भूलने के सब उपाय नशे हैं।

और किसी भी शब्द के निरंतर पुनरुक्ति से मूर्च्छा पैदा हो जाती है। कोई भी शब्द उपयोग करें, आपको मूर्च्छा पैदा हो जाएगी। यह कोई जरूरी नहीं है कि राम का ही नाम लें। राम को ज्यादा परेशान करने की कोई आवश्यकता नहीं है। अगर आप कुर्सी-कुर्सी भी कहते रहें तो भी काम चल जाएगा। कोई राम के नाम पर दोष देने की जरूरत नहीं है। उन पर बेचारों पर रिस्पांसिबिलिटी थोपने का कोई कारण भी नहीं है। आप कोई भी शब्द चुन लें।। इसीलिए तो दुनियां के अलग-अलग धर्म अलग शब्द चुन लेते हैं, सभी से काम चल जाता है। "क्राइस्ट-क्राइस्ट" कहते रहें, "अल्लाह-अल्लाह" कहते रहें तो काम चल जाएगा। "ओम-ओम" कहते रहें तो काम चल जाएगा। "ए बी सी डी, ए बी सी डी" कहते रहें तो काम चल जाएगा। "एक दो तीन, एक दो तीन" कहते रहें तो काम चल जाएगा। फर्क नहीं है, मेकेनिज्म दिमाग का यह काम करता है कि कोई भी शब्द को बार-बार दोहराया जाए तो तंद्रा पैदा हो जाती है, स्लीपलेसनेस पैदा हो जाती है। नींद पैदा हो जाती है। कोई भी शब्द का उपयोग कर लें। उस नींद में, उस तंद्रा मे अच्छा लगेगा। अगर रात अच्छी नींद आ जाए, सुबह अच्छा लगता है। क्योंकि निद्रा में सब कुछ भूल जाता है आदमी। सुबह ताजगी मालूम होने लगती है।

तो अगर आप किसी शब्द को दोहरा कर नींद में चले जाएं तो उसके बाद आपको अच्छा लगेगा। आप कहेंगे, देखो भगवान के नाम का कितना मजा आ रहा है, कितना आनंद आ रहा है। यह भगवान के नाम का आनंद नहीं है। भगवान का तो कोई नाम ही नहीं है। भगवान का नाम आप लेंगे कैसे? भगवान के कोई पिता नहीं हैं जो उनका नाम याद रख दें। भगवान का कोई नाम नहीं है। आप नाम लेंगे कैसे? आप ही होशियार हैं, आप ही नाम रख लेते हैं, आप ही नाम दोहराते हैं। और रिपीटीशन से, बोर्डम पैदा होती है, नींद आ जाती है। इसमें कोई कठिनाई नहीं है। अगर आप एक ही रिकॉर्ड को रोज-रोज लगा कर कई दफे सुनें तो रिकार्ड आपका वही काम करने लगेगा। अगर हम आपको एक फिल्म दिखाने ले जाएं आज, तो आज आप जागे रहेंगे। कल भी ले जाएं, कल आप इतने जागे न रहेंगे। परसों भी ले जाएं, तो आप इनकार करने लगेंगे कि क्षमा करिए, अब मैं नहीं जाना चाहता हूं। लेकिन अगर हम आपको महीने भर लेते चले जाएं तो क्या आप सोचते हैं कि महीने भर बाद भी आप उस फिल्म में जागे रहेंगे? आप खर्राटे लेंगे। वहीं सोएंगे मजे से। और अगर न सोएंगे तो पागल हो जाएंगे। एक महीने तक अगर वही-वही फिल्म देखनी पड़े और सो भी न सकें तो दिमाग खराब हो जाएगा कि यह क्या हो रहा है!

तो राम-राम अगर आप जपते हैं तो या तो आप सो जाएंगे; और अगर न सो पाएं तो परेशान हो जाएंगे, और पागल हो जाएंगे। दो ही रास्ते हैं। इसलिए कई साधु आपको पागल होते दिख जाते हैं, तो यह मत समझना कि भगवान के उन्माद में पागल हो रहे हैं। यह शब्दों की निरंतर पुनरुक्ति से पागलपन पैदा होता है। और या नींद आ जाती है। दोनों बातें खतरनाक हैं। विक्षिप्त हो जाएं तो भी खतरनाक है, सुषुप्ति आ जाए तो भी खतरनाक है।

फिर रास्ता क्या है? फिर मार्ग क्या है? मार्ग सोना नहीं है, मार्ग भूल जाना नहीं है, मार्ग तन्मय हो जाना नहीं है, मार्ग जागरुक होना है। होश से भरना है। खुद के आत्मस्मरण से भरना है। इसकी बात हम रात और कल सुबह करेंगे कि कैसे आत्मस्मरण से भर सकते हैं। लेकिन एक बात निश्चित समझ लें।। भूलना धर्म नहीं है।

उन मुल्कों को देखें जो राम-राम जपते भजते रहे, और दीन होते चले गए। गुलामी है तो राम-राम जपते रहे और गुलाम हो गए। उन कौमों की हालतें देखिए जिन्होंने भूलने की कोशिश की। वे कहां जमीन पर? उनकी हालतें क्या हैं? लेकिन जितनी हालतें बिगड़ती हैं वह और ज्यादा हाथ जोड़ कर राम-राम जपने लगते हैं कि अब भगवान कुछ कृपा करें तो अपनी ये हालतें ठीक हों। और उनको पता नहीं है कि इसी जप से ये हालतें हो

गई हैं। एक विसियस सर्किल पैदा हो गया है। जिस नासमझी से परिणाम बिगड़े हैं उसी नासमझी को इलाज समझ रहे हैं और काम जारी है।

मैं आपको कहता हूं, अगर व्यक्ति अपने को भूल जाए तो उसका जीवन नष्ट हो जाता है। कौम अपने को भूल जाए तो उसका जीवन नष्ट हो जाता है। सवाल भूलने का नहीं, सवाल जागने का, पूरी तरह सचेतन, पूरी अवेयरनेस, पूरी कांसशनेस पाने का है। जितना व्यक्ति चेतन होता चला जाता है, दुख को भूलना नहीं पड़ता है, दुख मिट जाता है। दुख मिटना चाहिए, दुख भूलना नहीं चाहिए। जितना आत्म-बोध गहरा होता है, दुख मिटता है, भूलता नहीं। दुख विलीन होता है, नष्ट होता है। एक घड़ी आती है, दुख नहीं रह जाता। यह बात और है। दुख भूल जाए यह बात और है, दुख न रह जाए, यह बात और है। लेकिन भूल जाने को कोई समझ ले कि नहीं रह गया दुख तो वह गलती में है; तो वह आत्मवंचना में है। सेल्फ डिसेप्शन है।

तो मैं भूलने को नहीं कहता हूं, पूरी तरह जागने को, होश से भरने को कहता हूं। उसके संबंध में आगे बात करेंगे।

और बहुत से प्रश्न हैं, कल सुबह उस प्रश्नों पर चर्चा हो सकेगी। फिर भी हो सकता है कि बहुत से प्रश्नों के उत्तर न हो पाएं। एक मित्र ने दो पन्नों में प्रश्न लिखा है और ऊपर लिखा है, संक्षिप्त में उत्तर दे दीजिए। बड़ा मुश्किल है, दो पन्ने में प्रश्न आप लिखते हैं और मुझसे उत्तर संक्षिप्त मांगते हैं। इतनी तो कृपा करनी ही चाहिए कि जितना प्रश्न है कम से कम उतना तो उत्तर होना ही पड़ेगा!

एक बार ऐसा हुआ, गांधी जी से मिलने एक व्यक्ति गया। गांधी जी से उसने समय मांगा तो उन्होंने पूछा कि कितना चाहते हैं? तो उसने कहाः दस मिनट। वह मिलने गया, दस मिनट वह प्रश्न ही पूछता रहा। जब दस मिनट खत्म हो गए तो गांधी जी ने उससे कहा कि दस मिनट में तुमने प्रश्न ही पूछा, उत्तर के लिए क्या होगा? और गांधी ने उस मित्र को कहा कि दस मिनट जिसको प्रश्न पूछने में लग जाते हैं, जहां तक अंदाज यही है कि उसे पता नहीं है कि वह क्या पूछना चाहता है? तो तुम पहले ठीक से तय करके आओ क्योंकि मैं अभी यही नहीं समझ पाया कि तुम क्या पूछना चाहते हो? तुम पहले ठीक से तय करके आओ कि क्या पूछना चाहते हो, फिर आना। और अब दस मिनट समय मांगो तो कम से कम दो मिनट में पूछ लेना और आठ मिनट मुझे भी छोड़ना। वह आदमी गया, वह दुबारा लौट कर नहीं आया। क्योंकि जितना उसने सोचा होगा प्रश्न और लंबा होता गया होगा। यही हुआ होगा, इसलिए वह कभी नहीं लौटा।

तो यह हो सकता है कि आपके बहुत लंबे-लंबे प्रश्नों के उत्तर मैं न दे पाऊं, लेकिन एक बात अगर खयाल में रखेंगे तो मेरे उत्तर देने की कोई जरूरत नहीं है। इन तीन दिनों में अगर मेरा दृष्टि-बिंदु, मेरा एंगल ऑफ वि.जन आपको खयाल में आ जाए तो मैं क्या उत्तर दूंगा, यह आप भी सोच सकते हैं। अब जैसे, और मैं जो दूसरे उत्तर दे रहा हूं, बहुत प्रश्नों के उत्तर उनमें आ जाएंगे। लेकिन हर आदमी को ऐसा मोह होता है कि मेरे प्रश्न का उत्तर होना चाहिए। चाहे हम हजार प्रश्नों के उत्तर दे दें, उसके प्रश्न का अगर उत्तर न हो पाए तो वह बड़ा असंतुष्ट लौट जाएगा। उसके अहंकार को बड़ा धक्का लगता है कि मेरे प्रश्न का उत्तर नहीं हो पाया? मेरा प्रश्न! लेकिन मैं कोशिश यह कर रहा हूं।। सीधे चाहे उन प्रश्नों के उत्तर न भी हो पाएं, लेकिन उनके उत्तर मैंने दिए हैं।

जैसे अब एक मित्र ने पूछा है कि क्या कभी आपने ईश्वर से बातचीत की है? आपको ईश्वर से मिलना हुआ? अब मैं क्या कहूं! अगर कोई आपसे कहता हो, मेरी ईश्वर से बातचीत होती है तो समझ लेना, उसका इलाज करवाना एकदम जरूरी हो गया है। वह आदमी पागल है। ईश्वर से मिलना कैसे हो सकता है? ईश्वर कोई आदमी है कि आप गए और मिल लिए?

एक छोटी सी घटना।। और आज की सुबह की चर्चा मैं पूरी करूंगा।

एक भारतीय युवक, संन्यासी हो गया था। वह सारी दुनिया घूम कर हिंदुस्तान वापस आया। वह एक छोटी सी रियासत में मेहमान हुआ। उस रियासत का राजा सुबह ही सुबह आया और उसने उस युवा संन्यासी को कहा कि मैं ईश्वर से मिलना चाहता हूं। मिलवा सकते हैं? उस राजा ने यह प्रश्न न मालूम कितने संन्यासियों से पूछा था कि मैं ईश्वर से मिलना चाहता हूं, मिलवा सकते हैं? अब कोई कैसे मिलवाता? तो बेचारे संन्यासी उपनिषद और वेदों के वचन निकाल-निकाल कर समझाने की कोशिश करते थे, लेकिन वह कहता था कि मैं मिलना चाहता हूं। ये बातें छोड़िए। बातचीत से क्या होगा? मुझे मिलवाइए। मिलवाता कौन है? इस युवक से भी आकर वही प्रश्न पूछा, एक ही प्रश्न था उसका, हमेशा वही पूछता रहा था। उसने पूछा कि मुझे ईश्वर से मिलवा दे सकते हैं? उस संन्यासी ने कहाः अभी मिलेंगे या थोड़ी देर ठहर सकते हैं?

वह राजा थोड़ा हैरान हुआ। हालांकि पूछता यही था लेकिन यह कभी न सोचा था कि कोई ऐसा भी मिल जाएगा जो कहेगा कि अभी मिल सकते हैं या थोड़ी देर ठहर सकते हैं। यह कभी उसने सोचा भी नहीं था कि इतनी जल्दी मिलने को मैं खुद भी राजी हूं कि नहीं? उसे थोड़ा शक हुआ। उसे अपने पर तो शक नहीं हुआ कि मैं पागल हूं. जो ऐसा प्रश्न पूछता हूं। उसे इस संन्यासी पर शक हुआ कि यह पागल तो नहीं है? सोचा कि शायद यह कुछ गलत तो नहीं समझ गया? कोई ईश्वर नाम के आदमी के बाबत तो नहीं समझ गया? क्योंकि कई लोग ऐसे भी हैं कि ईश्वर नाम रख लेते हैं। उसके गांव में भी ऐसे दो-चार तो होंगे ही, जिन्होंने ईश्वर नाम रख लिया होगा। कोई पान की दुकान करते होंगे, कोई कपड़े की दुकान करते होंगे, कोई डाक्टर हो गए होंगे। कुछ न कुछ, कई ईश्वर नाम के आदमी होंगे। उसने सोचा, कुछ भूल हो गई होगी। तो उसने पूछाः स्वामी जी, आप गलती कर रहे हैं, मालूम होता है। मैं किसी ईश्वर नाम के आदमी से नहीं मिलना चाहता हूं, मैं ऊपर वाले ईश्वर से मिलने की बात कर रहा हूं।

उस संन्यासी ने कहाः बिल्कुल बेफिकर रहो। गलती मुझसे भी हो सकती थी। अगर तुम ईश्वर वाले किसी आदमी से मिलना चाहते होते, तो मुझसे भूल हो सकती थी कि कहीं तुम ऊपर वाले से तो नहीं मिलना चाह रहे हो? ऐसी भूल मुझसे नहीं हो सकती, क्योंकि मेरा धंधा ही ईश्वर से मिलाने का है। यह तो मेरा प्रोफेशन है। तुम अच्छे आ गए, हम तो इसी खोज में फिरते हैं कि कोई मिलने वाला मिल जाए तो दिखा दें। तुम सुबह-सुबह अपने आप चले आए, यह बहुत अच्छा हुआ। राजा थोड़ा घबड़ाया कि यह तो गड़बड़ है। उस राजा ने पूछाः एकांत में मिलवाइएगा कि सबके सामने? एकांत में और डर हो सकता था ऐसे पागल आदमी से। क्या करे अकेले में! संन्यासी ने कहाः मिलना तो एकांत में ही पड़ेगा। आप अपने मय दरबार के वहां नहीं जा सकते। आज तक कोई भगवान से मिलने मय मित्रों के नहीं गया है। आप अपने पत्नी-बच्चों को भी नहीं ले जा सकते। अकेले ही मिलना पड़ेगा।

राजा ने कहाः तो फिर जरा मैं सोच कर आता हूं। यह झंझट की बात है। लेकिन उस संन्यासी ने कहाः सोच कर आप बाद में आना, पहले आप एक बात तो सुन लो, कंडीशन तो सुन लो। मिल तो सकते हो, लेकिन पहले मिलने की पात्रता का सवाल है। राजा तब निश्चिंत हुआ कि पात्रता का सवाल है, तब बात समझ ली जाए। उसने कहाः क्या पात्रता है? संन्यासी ने कहाः बहुत छोटी सी बात है। एक कागज पर लिख के दे दें कि आप कौन हैं, तो यह परमात्मा तक पहुंचा दूं। फिर वे मिलने का वक्त दे देंगे, अपाइंटमेंट हो जाएगा, उस संन्यासी ने कहा। राजा ने कहाः यह तो ठीक है, मैं भी किसी से मिलता हूं तो पहले लिखवा लेता हूं, कौन हो, क्या हो? क्योंकि मिलने में खयाल रखना पड़ता है। कोई ऐरे-गैरे फालतू आदमी आ जाएं तो खिसका भी देते हैं। संन्यासी ने कहाः इसके मामले में तो बिल्कुल बेफिकर रहो। तुम राजा हो, भगवान इतना तो खयाल रखता ही होगा कि राजा है, इससे मिलें। उसने अपना पता लिख दिया, अपना नाम लिख दिया कि कौन-कौन बहादुर सिंह, क्या-क्या है, उसने लिख दिया। कौन से महल में रहता है, वह लिख दिया। किस स्टेट का राजा है, वह

लिख दिया, और दिया। उस संन्यासी ने कहाः यह पता तो बिल्कुल झूठा मालूम पड़ता है। इसकी जांच-परख करनी पड़े, तभी मिलवाया जा सकता है। यह नाम सच्चा नहीं मालूम पड़ता।

उस राजा ने कहाः यह फिजूल की बातें कर रहे हो? मुझे पहले शक हो गया था जब तुमने भगवान से मिलाने की बात कही थी। कौन कह सकता है कि मेरा नाम झूठा है? यह पूरी बस्ती मुझे जानती है, मेरी राजधानी है। किसी को भी बुला कर पूछ लो। उसने कहाः किसी को बुलाने की पूछने की जरूरत नहीं है। तुमसे ही पूछूंगा। अगर तुम्हारा नाम बदल दिया जाए तो तुम बदल जाओगे? या तुम्हारे मां-बाप दूसरा नाम दे देते तो तुम दूसरे हो जाते? उस राजा ने कहाः नाम बदलने से क्या फर्क पड़ता था? मैं तो मैं ही रहता, चाहे नाम बदल दिया जाए। उस संन्यासी ने कहाः जब नाम बदलने से तुममें कोई फर्क नहीं पड़ता तो तुम अलग हो और नाम अलग है। तो फिर यह कहना कि यह नाम मैं हूं, एकदम गलत बात है। और उस संन्यासी ने कहाः आज तुम राजा हो, कल भिखारी हो जाओ, तो बदल जाओगे? राजा ने कहा कि नहीं, भिखारी रह कर भी मैं तो मैं ही रहूंगा। राज-पाट चला जाएगा, धन-दौलत चली जाएगी, लेकिन मैं तो मैं ही रहूंगा। उस संन्यासी ने कहाः फिर यह भी मत कहो परिचय में कि मैं राजा हूं। यह भी एसेंशियल नहीं है। यह भी जरूरी नहीं है परिचय का हिस्सा। नॉन-एसेंशियल है। भिखारी भी हो सकते हो, तब भी तुम रहोगे। अभी तुम जवान हो, कल बूढ़े हो जाओगे। तुमने अपनी उम्र क्यों लिखी है इसमें? क्या बूढ़े होकर तुम बदल जाओगे? राजा ने कहाः नहीं, बूढ़ा होकर तो मै, मैं ही रहूंगा। उम्र बदल जाएगी, शरीर बदल जाएगा, लेकिन मैं? मैं तो जो बचपन में था, वही जवानी में, वही बूढ़ापे में रहूंगा।

जब संन्यासी ने कहाः फिर यह भी गैर-जरूरी बात है। न तुम्हारे नाम से तुम्हारा कोई संबंध है, न तुम्हारे राज्य से, न तुम्हारी उम्र से, न तुम्हारे शरीर से। फिर तुम कौन हो? वह राजा बोलाः अगर यह सब मैं नहीं हूं तो फिर मैं कौन हूं, यह तो मुझे ही पता नहीं। तो उस संन्यासी ने कहाः जिसे यह भी पता नहीं है कि मैं कौन हूं, वह ईश्वर से मिलने निकल पड़ा है तो नासमझ है या नहीं? तो तुम कृपा करो, पहले यह तो पता लगा लो कि तुम कौन हो, फिर ईश्वर की फिक्र करना। ईश्वर को उस पर छोड़ दो। अभी तुम अपना ही पता लगा लो। और जाते वक्त उस संन्यासी ने कहाः एक बात तुम्हें याद दिलाए देता हूं, जिस दिन तुम यह जान लोगे कि तुम कौन हो उसी दिन तुम यह भी जान लोगे कि परमत्मा क्या है?

परमात्मा स्वयं से पृथक नहीं है कि आप उसका दर्शन कर लेंगे, हाथ मिलाएंगे, इंटरव्यू लेंगे। आपसे अलग नहीं है वह, जो आप उससे बातचीत करेंगे। नहीं, इसलिए आपके सीखे हुए डायलॉग कोई भी काम न आएंगे। और आपने सीखा हो कि हाथ जोड़ कर, घुटने टेक कर खड़े हो जाएंगे भगवान के सामने कि हे परमपिता, हे पतितपावन! यह कोई काम न आएगा। क्योंकि वहां कोई है ही नहीं आपके अलावा, जिससे आप यह बातें कर सकेंगे। परमात्मा तो सबके भीतर छिपा हुआ प्राण है। परमात्मा तो सब के भीतर छिपा हुआ जीवन है। परमात्मा तो अस्तित्व है। यह जो एक्झिस्टेंस है यही परमात्मा है। इससे अलग कोई और परमात्मा नहीं है। जो है, वही परमात्मा है। और उसे जानने के लिए, परमात्मा को खोजने के लिए नहीं जाना पड़ता, खुद को जान लेना पड़ता है।

जो स्वयं को जानता है वह सत्य को जान लेता है, सर्व को जान लेता है, वही परम परमात्मा है।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं। सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

इंदौर, दिनांक 7 मई, 1967, प्रातःकाल।

पांचवां प्रवचन

सजग चेतना और शांत चित्त

मेरे प्रिय आत्मन्!

एक छोटी सी कहानी से मैं अपनी चर्चा शुरू करूंगा।

यूनान में एक बड़ा मूर्तिकार हुआ। उसकी बड़ी दूर-दूर तक ख्याति थी। दूर देशों तक उसका नाम और उसकी कीर्ति पहुंच गई थी। उसकी मूर्तियां विश्व के सभी बाजारों में बिकी थीं, और शायद ही कोई राजमहल हो जहां उसकी मूर्तियां न पहुंची हों। बड़ी उसकी ख्याति थी, बड़ा उसका यश था। यश और ख्याति में वह भूल ही गया था, एक दिन मौत आ जाती है और सब नष्ट हो जाता है। एक दिन मौत आ गई।

मैंने कहा, कहानी है; सच्ची तो नहीं होती लेकिन कभी-कभी कहानियां ऐसे सत्य कह देती हैं जो जीवन में भी उपलब्ध नहीं होतीं। उसकी मौत आ गई। बड़ा कलाकार था और बड़ा मूर्तिकार था। आते हुए बुढ़ापे और मृत्य को देख कर उसने सोचा, मैं बचने का कोई उपाय करूं। मौत से किस भांति बचूं! एक सीधी सी बात जो उसे सूझ गई वह यह थी। उसने अपनी ही ग्यारह मूर्तियां बना लीं और जिस दिन मौत उसके द्वार पर आई, वह उन ग्यारह मूर्तियों में छिप कर खड़ा हो गया। उसकी कुशलता इतनी अदभुत थी कि यह तय करना मुश्किल था कि कौन मूर्ति है और कौन मूल! असली आदमी कौन है उन बारह मूर्तियों में, खोजना कठिन था।

मौत भीतर आई। मौत घबड़ा गई। जिसको लेने आई थी, वैसे बारह लोग वहां मौजूद थे। वह मूर्तिकार भी श्वास बंद कर मूर्तियों के बीच मूर्ति बन कर खड़ा हो गया। पहचानना कठिन था, कौन असली है। एक को ले जाना था, बारह को तो ले जाया नहीं जा सकता था। भूल करना उचित न था। मौत वापस लौट गई। और उसने जाकर परमात्मा को पूछा कि वहां तो बारह लोग एक जैसे मौजूद हैं। मैं किसको लाऊं? और जो असली है उसका पता कैसे लगे? परमात्मा ने मौत के कान में कुछ कहा। कहाः जाकर इस सूत्र को बोल देना, जो असली है वह बाहर निकल आएगा। मौत वापस लौटी। उस मूर्तिकार के भवन में मूर्तिकार छिपा था अपनी मूर्तियों में। मौत भीतर गई, उसने एक-एक मूर्ति को गौर से देखा फिर अचानक वह बोलीः और तो सब ठीक है, एक थोड़ी सी भूल रह गई। और जैसे ही उसने यह कहाः और तो सब ठीक है, थोड़ी सी भूल रह गई, वह मूर्तिकार बोला, कौन सी भूल? उस मृत्यु ने कहाः यही, कि तुम अपने को नहीं भूल सकते हो। और नहीं भूल सकते हो कि तुमने इन मूर्तियों को बनाया। तुम हो। इस बात को तुम नहीं भूल सकते हो, बाहर आ जाओ। तुम पकड़ लिए गए, मौत ने तुम्हें चुन लिया है।

मूर्तियां बनाई थीं उस चित्रकार ने, लेकिन एक बात वह नहीं भूल सकता था कि मैंने बनाई, मैं हूं। और उस मृत्यु से रास्ते में उसने पूछा कि अगर मैं यह भूल जाता कि मैं हूं तो क्या होता? उस मृत्यु ने कहाः मैं तुझे खोजने में असमर्थ हो जाती। जो यह भूल जाता है कि मैं हूं उसके लिए मृत्यु समाप्त हो जाती है। मृत्यु उसे नहीं खोज पाती है। जो यह भूल जाता है कि मैं हूं, जिसे अहंकार विसर्जित हो जाता है वह अमृतत्व को उपलब्ध कर लेता है। वह उसे पा लेता है जिसकी कोई मृत्यु नहीं।

मनुष्य के जीवन में, अहंकार के अतिरिक्त, मैं हूं, इसके अतिरिक्त अमृतत्व से तोड़ने वाली और कोई दीवाल नहीं है। कल रात इस संबंध में मैंने बहुत सी बातें आपसे कहीं। अहंकार ही अधर्म है। अहंकार ही अंधकार है। अहंकार ही दुख और पीड़ा है। बहुत से प्रश्न इस संबंध में मेरे पास आए हैः इस अहंकार को कैसे छोड़ें? यह अहंकार कैसे जाए? यह अहंकार कैसे मिटे? इन प्रश्नों के संबंध में थोड़ी आपसे बात करूंगा। फिर और भी कुछ प्रश्न हैं, उन पर भी आपसे कुछ चर्चा करूंगा।

अहंकार कैसे इकट्ठा होता है, इसे अगर कोई समझ ले तो अहंकार कैसे जाएगा, इसे समझना कठिन नहीं है। अहंकार कैसे एकत्रित होता है, कैसे एकुमुलेट होता है, कैसे इकट्ठा होता है हमारे जीवन में? अगर मैं अपने हाथ में एक मशाल ले लूं और उस मशाल को जोर से घुमाऊं तो आपको मशाल तो दिखाई नहीं पड़ेगी बल्कि एक अग्नि-वृत्त, एक फायर सर्किल दिखाई पड़ने लगेगा। और अगर मैं मशाल रोक लूं तो आप पाएंगे कि अग्नि-वृत्त तो कहीं भी नहीं था, वह आग का चक्कर कहीं भी नहीं था, केवल एक मशाल थी जो तेजी से घूमती थी, तो अग्नि का वृत्त मालूम होता था। वह था नहीं, केवल प्रतीत होता था।

अहंकार भी विचार की तीव्र गति के कारण प्रतीत होता है, है नहीं। विचार इतने तेजी से मन में घूम रहे हैं कि वे ठोस मालूम होने लगते हैं। शायद आपको यह पता न हो, दुनिया में कोई चीज ठोस नहीं होती। यह दीवाल जो आपको ठोस दिखाई पड़ रही है यह भी ठोस नहीं है। कोई चीज सालिड नहीं है। कोई चीज ठोस नहीं है। हर चीज तरल है, और बहती हुई है। लेकिन, अगर चीज बहुत तेजी से बहती हो और बहुत तेजी से घूमती हो तो ठोस मालूम होने लगती है। पंखा चल रहा है ऊपर, वह इतनी तेजी से चलाया जा सकता है कि पंखुड़ियां दिखाई देनी बंद हो जाएं और आपको मालूम पड़े कि कोई गोल ठीकरी घूम रही है। वह इतनी तेजी से घुमाया जा सकता है कि उसका घूमना दिखाई पड़ना बंद हो जाए और मालूम हो कि कोई चीज थिर है, ठहरी हुई है। गति बहुत तीव्र हो तो ठहराव मालूम होता है। जैसे चीज ठहर गई है। दीवाल के अणु दौड़ रहे हैं बहुत तेजी से, लेकिन उनकी गति बहुत तेज है। वह तेज है इतनी गति कि हमारी आंखें उस गति को देखने में समर्थ नहीं हैं। इसलिए दीवाल ठोस मालूम होती है।

संसार में सब कुछ गति है और गति से ठोस का भ्रम पैदा होता है। मनुष्य का मन भी गतिवान है, मूवमेंट में है। तेजी से विचार घूम रहे हैं। विचार की इतनी तीव्र गति है, इसलिए यह मालूम होता है कि कोई ठोस चीज है, विचार की तीव्र गति से लगता है कि मैं हूं। अगर विचार शांत हो जाएं, या विचार की गति ठहर जाए या विचार की गति शिथिल हो जाए तो आपको दिखाई पड़ेगा, विचार का संग्रह दिखाई पड़ता था कि मैं हूं। विचार अगर विलीन हो जाएं तो ज्ञात होगा, मैं नहीं हूं। तब कौन है? जब मैं नहीं हूं, तभी परमात्मा हूं। जब मैं नहीं हूं, तब जो अनुभव होता है, विराट का, विस्तार का, वही ब्रह्म है, वही आत्मा है, वही सत्य है।

कैसे यह विचार की गति क्षीण हो जाए, कैसे ये विचार शांत हो जाएं, इस संबंध में भी प्रश्न हैं। कैसे रुक जाए विचार?

विचार के रुक जाने की दो अवस्थाएं हैं।। या तो मूर्च्छा में विचार रुकता है, या पूर्ण चेतना में विचार रुकता है। या तो आदमी मूर्च्छित और बेहोश हो जाए तो विचार रुक जाता है, गहरी सुषुप्ति में, गहरी निंद्रा में रुक जाता है और या फिर मनुष्य परिपूर्ण चेतन हो जाए, पूरी तरह कांशस हो जाए तो विचार रुक जाता है। इसलिए दो उपाय हैं विचार को रोकने के।। एक उपाय है मूर्च्छित हो जाएं, बेहोश हो जाएं। लेकिन बेहोश होने में विचार तो रुक जाता है, लेकिन विचार के रुकने का जिसे अनुभव होता है वह भी बेहोश हो जाता है, इसलिए कोई अनुभव नहीं हो पाता है। हम रोज गहरी नींद में चले जाते हैं लेकिन परमात्मा को अनुभव नहीं कर पाते। हम रोज गहरी नींद में सो जाते हैं, वहां कोई विचार नहीं होता, परमात्मा अनुभव नहीं होता। इसलिए कोई व्यक्ति अगर नशा करके बेहोश हो जाए तो भी विचार रुक जाएंगे। अगर कोई व्यक्ति एकाग्रता या कनसनट्रेशन करे, किसी चीज पर अपने चित्त को ठहराने की कोशिश करे तो ठहराने की कोशिश से भी मन मूर्च्छित हो जाता है और विचार रुक जाते हैं। लेकिन उससे भी सत्य का अनुभव नहीं होता। मूर्च्छा से विचार रुक जाएंगे, लेकिन सत्य का अनुभव नहीं होगा। क्योंकि जिसे अनुभव हो सकता है, वह मूर्च्छित हो जाएगा।

एक और रास्ता है, वह है, अपने भीतर परिपूर्ण चेतना को जगाने का, अपने भीतर पूर्ण होश को जगाने का। पूर्ण होश में भी विचार विलीन हो जाते हैं वैसे ही, जैसे सुबह ओस के कण जमे रहते हैं पत्तों पर, पौधों पर,

पत्थरों पर। सूरज के निकलते ही इव्हेपरेट होने लगते हैं, उड़ने लगते हैं, हवा हो जाते हैं, विलीन हो जाते हैं। जैसे ही व्यक्ति की चेतना पूरी जागती है, विचार विलीन होने लगते हैं, शांत और शून्य होने लगते हैं।

कैसे हमारे भीतर सोए हुए प्राण सजग हो जाएं? लेकिन इसके पहले कि इस संबंध में मैं कुछ कहूं यह जान लेना जरूरी है कि हमारे प्राण करीब-करीब सोए हुए हैं। हम रात में ही नहीं सोते, हम दिन में भी सो रहे हैं। हम रास्ते पर चलते हुए भी सो रहे हैं। हम काम करते हुए भी सो रहे हैं। रात आप सो जाते हैं और एक स्वप्न देखते हैं। देखते हैं स्वप्न में कि इंदौर में नहीं हैं, कहीं और हैं। सुबह उठते हैं और पाते हैं कि इंदौर में हैं अपने मकान में, अपने बिस्तर पर हैं तो आप कहते हैं, रात मैंने सपना देखा। यह आप कैसे पहचाने कि आपने सपना देखा? यह आप इस भांति पहचाने कि आप जहां थे सपने में, आपको वहां न बता कर के कहीं और बताया। जहां आप वस्तुतः थे उससे अन्यथा कहीं और सपने ने आपको दिखाया। आप कहते हैं, झूठा था वह सपना। मैं जहां था, वहां से कहीं और सपने में दिखाई पड़ा, अनुभव किया।

मैं आपसे कहूं, हम हर वक्त सो रहे हैं। इसलिए कि जहां हम हैं, चित्त हमारा वहां नहीं है। यही निद्रा है, यह स्वप्न है। अभी यहां हम बैठे हैं। मैं आपसे बात कर रहा हूं। बहुत कम लोग होंगे जो पूरी तरह मेरी बात सुन रहे होंगे। उनके मन कहीं और होंगे।। कोई घर होगा, कोई दफ्तर में होगा, कोई कहीं और होगा, कोई कहीं और होगा। यहां आप मौजूद हैं, चित्त आपका कहीं और है। चित्त अगर कहीं और है तो यहां आप सोए हुए हैं। अगर चित्त यहीं है तो आप जागे हुए होंगे। चित्त जहां होता है, वहां जागरण होता है। चित्त जहां नहीं होता है वहां निद्रा हो जाती है। तो अगर यहां बैठ कर आप मुझे सुन रहे हैं और आपका चित्त अपने घर चला गया है तो उतनी देर तो यहां आप सो गए हैं, यहां आप नहीं हैं। और हमारा चित्त चौबीस घंटे कहीं और होता है। जब हम भोजन करते हैं तब मन दफ्तर में होता है, जब हम दफ्तर में होते हैं, तब वह भोजन करता होता है। चित्त हमारा कहीं और है। चौबीस घंटे चित्त हमारा कहीं और होता है।

मेरे एक मित्र स्विटजरलैंड से होकर वापस लौटे। मैं उन्हें संगमरमर की चट्टानें और धुआंधार दिखाने ले गया। पूर्णिमा की रात थी। नाव... वह अकेले मेरे साथ थे। बहुत खूबसूरत, बहुत सुंदर रात थी। बड़ा सन्नाटा और मौन था। लेकिन वे स्विटजरलैंड के झीलों की बातें करते रहे और मुझे बताते रहे, स्विटजरलैंड में कैसी झीलें हैं, कैसी नावें हैं, कैसी रातें है, कैसा सौंदर्य है। कोई एक घंटे हम नर्मदा पर थे लेकिन न तो उन्होंने नर्मदा को देखा, न चांद को देखा, न चांदनी को देखा। उनका मन स्विटजरलैंड में था। फिर वे मेरे साथ वापस लौटे। रास्ते में उन्होंने मुझसे कहाः बड़ी अच्छी जगह थी, बड़ी सुंदर रात थी। मैंने उनसे कहाः यह मत कहें। हम गए तो दो थे वहां लेकिन एक ही वहां पहुंच पाया, दूसरा आदमी वहां पहुंचा ही नहीं। मैंने उनसे निवेदन किया, आप बिल्कुल झूठ बोल रहे हैं। आप एक क्षण को भी वहां नहीं थे जहां मैं आपको ले गया था। आप स्विटजरलैंड में रहे होंगे, लेकिन इस नर्मदा पर नहीं। यह रात आप सोए-सोए बिता दिए, ये दो घंटे नींद में गए। और मैंने उनसे कहाः मैं आपको यह भी कह दूं, जब आप स्विटजरलैंड की झीलों पर रहे होंगे तब आप वहां भी न रहे होंगे। तब हो सकता है, आप कश्मीर की झीलों का विचार करते रहे हों, या कुछ और करते रहे हों।

हम करीब-करीब जिंदगी में इस तरह गुजर जाते हैं, जैसे बेहोश और सोए हुए। लेकिन कोई हमसे कहे कि आप सोए हुए हैं, हम मानने को राजी न होंगे।

एक फकीर एक गांव में कुछ दिनों के लिए मेहमान था। वह बोल रहा था एक रात। गांव के लोग इकट्ठे थे उसे सुनने को। सामने ही, गांव का सब से प्रतिष्ठित धनीमानी व्यक्ति बैठा हुआ था। राजस्थान के किसी गांव की घटना है, उस आदमी का नाम था आसो जी। दिन भर का थका मांदा होगा, नींद लग गई, सो गया। सुनता था, सो गया। वह फकीर अजीब रहा होगा। उसने अपना बोलना बंद कर दिया और जोर से कहाः आसो जी, सोते हो? आसो जी ने जल्दी से आंख खोली और कहाः नहीं, कौन कहता है, मैं सोता हूं। मैं तो आंख बंद करके ध्यान

से आपको सुन रहा था। आदमी अपनी रक्षा करता है। कौन इस बात को मानने को राजी होगा कि मैं सोता हूं! और लोग हंसेंगे। खुद ही कहता है, कौन कहता है, मैं सोता हूं? मैं आंख बंद करके ध्यान से आपकी बात सुन रहा था। वह फकीर फिर बोलने लगा। दो-चार-दस मिनट बीते होंगे, सोया हुआ आदमी कितनी देर जग सकता है? आसो जी फिर सो गए हैं। वह फकीर फिर रुक गया और उसने कहा, आसो जी सोए हो? आसो जी अबकी बार और जोर से बोलेः कौन कहता है, सोता हूं? आप बार-बार यह क्या लगाए हुए हैं? आप बोलिए। आप मेरी क्यों फिकर करते हैं? मैं नहीं सोता हूं। मैं पूरी तरह जाग रहा हूं। लेकिन दो-चार-पांच मिनट बीते होंगे, आसोजी फिर सो गए। सोए हुए आदमी के विश्वास का कोई भरोसा है? उसकी बात का कोई भरोसा है? फिर आसो जी सो गए। फकीर बड़ा अजीब रहा होगा। उसने आसोजी का पीछा न छोड़ा। अबकी बार उसने फिर कहा, लेकिन अब की बार उसने थोड़ी सी अलग बात कही। उसी में आसो जी फंस गए और परेशान हो गए। हर बार वह कहता थाः आसोजी सोते हो? इस बार उसने कहाः आसो जी, जीते हो? नींद में आसो जी ने समझा कि फिर वही बात है। उन्होंने कहाः नहीं-नहीं, कौन कहता है? उस फकीर ने कहाः अब बात सच्ची बाहर निकल आई। फकीर ने कहाः अब बात सच्ची बाहर निकल आई।

और यह सच ही है, जो आदमी सोता है वह आदमी जीता भी नहीं है। जो आदमी नींद में है, सोता है, वह जीता भी नहीं है। जीवन का संबंध जागरण से है। लेकिन हममें से कौन जागता है? आंखें खुली होने को कोई जागना न समझ ले। आप रास्ते पर चल कर ठीक-ठीक अपने घर पहुंच जाते हैं इससे आप यह मत समझ लेना कि आप जागते हैं। सिर्फ अभ्यास के कारण अपने घर पहुंच जाते हैं और कुछ भी नहीं है। अंधा आदमी भी अभ्यास रखता है तो बिना आंखों के भी घर पहुंच जाता है। आप अपना काम रोज-रोज ठीक से कर लेते हैं इससे यह मत समझ लेना कि आप जाग रहे हैं। मशीनें भी अपना काम ठीक से कर लेती हैं, आपसे कम भूले करती हैं। जीवन यंत्र की भांति हो जाता है, आप सोए रहते हैं और काम चलता चला जाता है।

हम यहां अगर जमीन पर एक फीट चौड़ी और सौ फीट लंबी लकडी की पट्टी बिछा दे और सारे लोगों से कहें, इस पर चलो और निकल जाओ। बच्चे और बूढ़े, स्त्रियां और पुरुष सभी उस पर से निकल जाएंगे। कोई गिरेगा? कोई भी गिरेगा नहीं। एक फीट चौड़ी और सौ फीट लंबी लकड़ी की पट्टी बिछा दें जमीन पर। कोई गिरेगा? सब उस पर से निकल जाएंगे। उसी लकड़ी की पट्टी को हम दो मकानों की छतों पर रख दें और आपसे कहें, चलो, तो कोई भी न निकल पाएगा। निकल पाने की बात ही दूर, चलने को भी कोई राजी न होगा। दो-चार कदम जाएगा, हाथ-पैर कंपकंपाने लगेंगे। क्यों? पट्टी वही है, चौड़ाई वही है, लंबाई वही है, आप भी वही हैं। फर्क क्या पड़ गया है?

फर्कपड़ गया है एक बहुत बुनियादी। जमीन पर रखी थी तो आप सोए-सोए निकल जाते थे, कोई डर नहीं था। नींद में ही चले जाते थे। लेकिन दो छतों के ऊपर रखी है तो जागकर चलना होगा। और जागने की हमें कोई आदत नहीं है। बेहोशी में नहीं चल सकते हैं फिर। गिरने का खतरा है। होश से चलना होगा, होश से चलने की हमें आदत नहीं है। चित्त को वहीं रखना होगा, कदम-कदम पर चित्त को मौजूद रखना होगा तो चल सकेंगे, नहीं तो गिर जाएंगे। जमीन पर चल गए थे उसी पट्टी पर क्योंकि वहां कोई होश रखने की जरूरत नहीं थी। मन कोई फिल्म देखता रह सकता था, या मन कोई शास्त्र पढ़ता रह सकता था, या मन कहीं भी हो सकता था और आप चल सकते थे, कोई भय नहीं था। इसलिए मन को लगाने की कोई जरूरत नहीं थी। लेकिन दो छतों पर उसी पट्टी के ऊपर चलना खतरनाक है। होश से चलना पड़ेगा। नहीं तो मन कहेगा, मत चलो। नींद में चले तो जगने का डर हो सकता है इसलिए चलने से आप इनकार कर देंगे। चलेंगे भी तो जगने का भय होगा।

हमारा चलना, उठना, सोना सब करीब-करीब नींद में हो रहा है। और यह जो नींद में डूबा हुआ आदमी है, अगर इससे भूलें हो जाती हों तो आश्चर्य क्या है? इसे क्रोध आ जाता हो, अहंकार आ जाता हो, लोभ आ जाता हो, तो आश्चर्य क्या है? और यही आदमी अगर पूजा करे, प्रार्थना करे, तो आप समझते हैं? सोए हुए

आदमी की पूजा और प्रार्थना का कोई अर्थ हो सकता है? कोई भी अर्थ नहीं हो सकता। यह दान करे, सेवा करे, इसके दान और सेवा का कोई अर्थ हो सकता है? कोई अर्थ नहीं हो सकता। बल्कि खतरे हो सकते हैं। सोया हुआ आदमी जो कुछ भी करेगा उससे खतरे होंगे। बेहोश आदमी जो कुछ भी करेगा उससे खतरे होंगे। वह खुद बेहोश है, उसे पता नहीं है वह क्या कर रहा है। जब आप क्रोध करते हैं तब आपको पता होता है कि क्या कर रहे हैं? जब आप किसी के प्रेम में डूब जाते हैं तब आपको पता होता है, आप क्या कर रहे हैं? नहीं आपको कुछ भी पता नहीं होता है। आप करीब-करीब बेहोश कुछ करते हैं। चौबीस घंटे हम बेहोशी की कम ज्यादा मात्रा में जीते हैं। यह बेहोशी इतनी गहरी है कि करीब-करीब जीवन इसमें गुजर जाता है। हमें पता भी नहीं चलता, जीवन कब आया, कब गुजर गया। मौत करीब आती है तभी शायद खयाल आता है कि जीवन गुजर गया।

मैंने तो एक आदमी के संबंध में सुना है कि जब वह मर गया तब उसको पता चला कि मैं जीवित भी था। असल में, जीवन का पता तो चल सकता है चित्त जागरूक हो, अवेयरनेस हो, होश हो, स्मृति हो। लेकिन वह तो हमारे भीतर बिल्कुल भी नहीं है। कभी आपने प्रयोग करके न देखा होगा। कभी इस बात की कोशिश करें कि जो मैं कर रहा हूं, जो काम कर रहा हूं उसी काम को पूरी तरह होश से जागा हुआ करूं तो आप पाएंगे, एक क्षण भी होश नहीं टिकेगा। थोड़ी देर में आप पाएंगे आप किसी और चीज को सोचने लग गए हैं।

गांधी जी के पास एक युवक नया-नया आया था। वह युवक बड़ी गणितज्ञ की बुद्धि का युवक था। उसके पास बड़ी यांत्रिक कुशलता थी। उसने भी गांधी जैसा एक चर्खा बनाया। वह गांधी से बेहतर था चर्खा। उसने पौनी बनाई, वह पौनी गांधी से बेहतर थी। उसके पास गणित और एक यांत्रिक की कुशलता थी, उसने सारी चीजें अच्छी बना लीं। वह जो सूत कातता, वह गांधी से ज्यादा अच्छा था, ज्यादा महीन था, ज्यादा एक सा था। लेकिन एक गड़बड़ हो जाती थी। सूत तो कातता था, लेकिन सूत बार-बार टूट जाता था। उसने गांधी को पूछाः मेरी पौनी तुमसे बेहतर, मेरा चर्खा बेहतर, मेरा सूत बारीक, लेकिन मेरा सूत बार-बार टूट जाता है, इसका कारण क्या हो सकता है? कोई पौनी में खराबी नहीं है, चर्खे में खराबी नहीं है।

गांधी ने कहाः हो सकता है सूत कातते वक्त तुम्हारा मन इधर-उधर जाता हो इसलिए सूत टूट जाता है। सूत पतला और बारीक है। और जैसे ही चित्त कहीं जाता है हाथ हलका झटका लेता है। उसी वक्त सूत टूट जाता है। गांधी ने कहाः मैं तो सूत कातता हूं तो सिर्फ सूत कातता हूं. फिर मेरा चित्त कहीं और भी नहीं होता। सूत कातता हूं तो सिर्फ सूत कातता हूं। सारा चित्त, सारी सजगता सूत के साथ ही चलती है, डोलती है। सूत ऊपर जाता है तो चित्त उसके साथ यात्रा करता है, सूत लपटता है तो चित्त उसके साथ यात्रा करता है। सूत कातने के साथ मेरा बोध यात्रा करता है। मेरे बोध में और सूत के कतने में फासला नहीं होता। वह दोनों साथ हैं, साइमलटेनियस हैं।

शायद इसीलिए गांधी कह सके कि सूत कातना मेरा ध्यान है। तब तो बुहारी लगाना ध्यान हो सकता है। घर में, रोटी बनाना भी ध्यान हो सकता है। कपड़े पहनना और भोजन करना भी ध्यान हो सकता है; और हो जाना चाहिए। क्योंकि जिसका ध्यान आधा घड़ी को एक कोने में बंद करके होता होगा उसका ध्यान झूठा होगा। क्योंकि साढ़े तेईस घंटे जो ध्यान में नहीं हैं वह आधा घंटे ध्यान में हो ही नहीं सकता। साढ़े तेईस घंटे वह सोया हुआ है, वह आधा घंटे जाग नहीं सकता। साढ़े तेईस घंटे चित्त में जो धारा चल रही है वह आधा घंटे को दूर नहीं की जा सकती। आप जो आदमी हैं, जैसे आदमी हैं, वैसे ही आदमी तो आप ध्यान करने भी बैठेंगे, प्रार्थना करने भी बैठेंगे, पूजा करने भी बैठेंगे। दुकान पर जिस भांति आप बैठे हुए थे, भोजन करते वक्त आप जिस भांति बैठे हुए थे, पूजा करते वक्त आप दूसरी तरह से कैसे बैठ जाएंगे? आपके चित्त की जो दैनंदिन व्यवस्था है उसके बाहर आप दो-चार मिनट को नहीं जा सकते। यह नहीं हो सकता है कि आदमी तेईस घंटे कुछ हो और एक घंटे को कुछ हो जाए। तेईस घंटे चोर हो और एक घंटे को साधु हो जाए, यह नहीं हो सकता। यह भी नहीं हो सकता है कि जिंदगी भर बेईमान हो और मरते वक्त ईमानदार हो जाए। यह भी नहीं हो सकता है कि जिंदगी भर

चेतना में कोई धर्म न हो, मरते वक्त गीता सुन ले और धार्मिक हो जाए और स्वर्ग चला जाए। सब एब्सर्ड, व्यर्थ और एकदम नासमझी की बातें हैं।

एक आदमी मर रहा था। उसकी अंतिम घ.ड़ी आ गई थी। उसकी पत्नी उसके पैरों के पास बैठी थी। उसके परिवार के सारे लोग इकट्ठे थे। बीच-बीच में उसे होश आता था, फिर होश खो जाता था। आखिर उसने धीमे से आंख खोली और उसने कहा कि मेरा बड़ा लड़का कहां है? उसकी पत्नी ने सोचा, शायद प्रेम के कारण वह अपने बड़े लड़के को स्मरण कर रहा है। उसने अपने पति को कहाः आप घबड़ाएं नहीं, आप मन में कोई चिंता न लाएं, आपका बड़ा लड़का आपके पास ही बैठा हुआ है। आपके बगल में ही बैठा हुआ है। उसने कहाः मेरा छोटा लड़का कहां है? वह भी आपके पास बैठा हुआ है। पत्नी सोची, कितने प्रेम से उसका पति बच्चों को स्मरण कर रहा है। सब को बुला रहा है। उसकी आंखों में आंसू आ गए। उसने कहाः मेरा तीसरा लड़का कहां है? चौथा, पांचवां, वे सब वहीं मौजूद थे। वह एकदम से उठ कर बैठ गया और उसने कहाः इसका क्या मतलब है, दुकान पर कौन बैठा हुआ है?

वह जो जीवन भर दुकान पर रहा था, मरते वक्त आप सोच सकते हैं कि कहीं और हो सकता है? आपकी पत्नी यही सोचती थी कि वह प्रेम के वश याद कर रहा है। वह तो पता लगा रहा था कि दुकान पर कोई बैठा है या नहीं बैठा है। पंडित उसको गीता सुना रहा था, वह पंडित पागल रहा होगा जो गीता सुना रहा था। और गीता का क्या अर्थ है इसे? इसका चित्त तो दुकान पर था, चौबीस घंटे। जीवन भर जहां रहा है, वहीं रहेगा। यह कोई ऐसी आसान बात नहीं है कि आप थोड़ी देर को उसे अलग कर लेंगे। तो ध्यान किसी कोने में बैठ कर करने की बात नहीं है और न किसी मंदिर में बैठ कर करने की बात है। ध्यान तो पूरे जीवन में जागरण की बात है। कोई खंड हिस्से में ध्यान को उपलब्ध नहीं हो सकता है। ध्यान तो अखंड प्रक्रिया है। जो चौबीस घंटे होश को साधने की कोशिश करेगा उसे उपलब्ध होता है, और किसी को उपलब्ध नहीं होता है।

तो क्या करेंगे? करना होगा। जीवन में चौबीस घंटे क्रियाएं हो रही हैं। उठ रहे हैं, बैठ रहे हैं, खा रहे हैं। सारे जीवन का श्रम है। बोल रहे हैं, सुन रहे हैं। जो भी क्रिया हो रही हो, उस क्रिया के साथ चित्त की पूरी सजगता और मेल और हार्मनी होनी चाहिए। जो भी कर रहे हों उसके साथ चित्त पूरा का पूरा मौजूद होना चाहिए, प्रेजेंस होनी चाहिए। वहां अनुपस्थिति नहीं होनी चाहिए, वहां उपस्थिति होनी चाहिए चित्त की। तो जिस क्रिया में चित्त उपस्थित है, उस क्रिया को मैं धार्मिक क्रिया कहता हूं। जिस क्रिया में चित्त अनुपस्थित है उस क्रिया को मैं अधार्मिक क्रिया कहता हूं। चाहे आप मंदिर में पूजा कर रहे हों, वह क्रिया अधार्मिक होगी। और अगर चित्त उपस्थित है तो चाहे आप घर में बुहारी लगा रहे हों, वह क्रिया धार्मिक हो जाएगी।

क्यों हो जाएगी धार्मिक? वह इसलिए धार्मिक हो जाएगी कि चित्त का जागरण है, परमात्मा तक ले जाने का द्वार, मार्ग और सेतु है; वही ब्रिज है। जितना चित्त जागेगा, उतना ही ज्यादा भीतर प्रवेश होगा। जितना चित्त जागेगा उतना ही विचार विसर्जित हो जाएंगे। कभी कर के देखें, किसी क्रिया के प्रति पूरी तरह जाग कर देखें। जैसे आप जागेंगे, एक क्षण को भी जागरण होगा तो आप पाएंगे, उस वक्त विचार नहीं है। अगर एक आदमी एकदम से आ जाए और आपकी छाती पर छुरा रख दे तो आपको पता है, क्या होगा? आप एक क्षण को पाएंगे, कोई विचार नहीं है। क्यों? अब कोई छाती पर एकदम से छुरा रख दे तो एकदम आपकी नींद टूट जाती है उस भय में। छुरे के प्रति आप एकदम से जाग जाते हैं, सोए हुए नहीं रह जाते। बस जागे कि आपके विचार गए।

जापान में एक राजकुमार को उसके पिता ने एक संन्यासी के पास भेजा, ध्यान सीखने के लिए। उस संन्यासी ने कहाः ध्यान तो मैं नहीं सिखाऊंगा, मैं तलवार चलाना सिखाऊंगा। वह युवक बोलाः लेकिन मेरे पिता ने ध्यान सीखने भेजा हुआ है। उस संन्यासी ने कहाः मैंने तो अब तक जिन्हें भी ध्यान सिखाया है, तलवार

चलाने के द्वारा ही सिखाया है। खैर, वह युवक राजी हुआ कि मैं सीखूंगा। उस संन्यासी ने कहा कि देखो, घर के सारे काम करने पड़ेंगे।। बुहारी लगाने से लेकर रात में बिस्तर लगाने तक। और कभी मुझसे यह मत कहना कि अब सिखाना शुरू करिए; जब मेरी मर्जी होगी, मैं सिखाना शुरू कर दूंगा। वह राजकुमार बेचारा काम में लग गया उस आश्रम में। दो-चार दिन बाद ही उसे परेशानी शुरू हुई। वह साधु या तो पागल या न मालूम क्या था। जब वह युवक बुहारी लगा रहा होता तब वह पीछे से आकर लकड़ी की तलवार से उस पर हमला कर देता। उस युवक ने कहाः यह आप क्या कर रहे हैं? यह कोई सिखाने की तरकीब है? मैं काम कर रहा हूं, आप पीछे से हमला कर देते हैं। उस साधु ने कहाः मेरे रास्ते अपने ही ढंग के हैं। तुम तो काम करने की कह रहे हो, अभी वक्त आएगा, तुम सो रहे होगे और मैं हमला कर दूंगा। सजग रहना, होश से रहना।

रोज यह होने लगा। युवक रोटी बना रहा है और साधु पीछे से हमला कर देता है। चौबीस घंटे में कई दफे अनजाने हमले होने लगे। उस युवक के भीतर कोई चीज चेतन होने लगी सजग रहने लगी। कब हमला हो सकता है, कभी भी हमला हो सकता है। वह चौबीस घंटे होशपूर्वक जीने लगा। बुहारी लगा रहा है, तो भी उसके चित्त में एक होश बना हुआ है कि कहीं हमला न हो जाए। तीन महीने बीतते-बीतते फकीर हमला करता और वह युवक एक दम से सचेत होकर सजग हो जाता, रक्षा कर लेता। पीछे से हमला होता और वह हाथ उठा देता। रात नींद में हमला कर देता तो जैसे ही वह हमला कर देता, एकदम से वह सचेत होकर बैठ जाता। कोई छह महीने बीतते-बीतते फकीर के हमले व्यर्थ होने लगे। पीछे से किए गए हमले को यह युवक हाथ से रोक लेता। साल बीतते-बीतते इतनी सजगता उसके भीतर खड़ी हो गई कि फकीर के पैर की आवाज भी वह पहचान लेता कि फकीर कमरे के भीतर आ गया है। पैर की धीमी आवाज भी। एक दिन उसके मन में हुआ कि यह बूढ़ा मुझे इतना परेशान किए दे रहा है। बूढ़ा बैठ कर सुबह-सुबह एक दिन किताब पढ़ रहा था, उसने सोचा, मैं भी तो एक दिन इस पर हमला करके देखूं। वह युवक दूर बगिया में बैठा हुआ यह सोच रहा था कि मैं भी हमला करके देखूं, वह बूढ़ा किताब पढ़ रहा था। वह बूढ़ा हंसने लगा। उसने कहा कि देख, मैं बूढ़ा आदमी हूं। मुझ पर हमला मत कर देना। वह युवक बहुत घबड़ा गया। उसने कहा कि क्या कहते हैं? मैंने तो सिर्फ सोचा था। उसने कहाः एक दिन वक्त आएगा जब तेरा होश और बड़ा हो जाएगा, तो न केवल तू मेरे पैर की आवाज सुनेगा बल्कि मेरे विचार की आवाज भी सुन लेगा। तेरे होश के गहरे हो जाने की बात है।

जितनी भीतर सजगता होगी उतना ही चित्त शांत हो जाएगा। उतने ही विचार मौन हो जाएंगे। और जितना चित्त शांत हो जाएगा, जीवन की पगध्वनियां सुनाई पड़ने लगेंगी। चारों तरफ जीवन का स्पर्श अनुभव होने लगेगा। सोया हुआ आदमी कैसे अनुभव कर सकता है उसका, जो परमात्मा है? वह चारों तरफ मौजूद है, हम सोए हुए हैं। वह तो वृक्ष की शाखाओं में वही है, पत्तों में भी वही आंदोलित है, हवाओं में भी वही है, आकाश के तारों में भी वही है। आपके घर जो बच्चा पैदा हुआ है, उसकी आखों में भी वही है। आपके द्वार पर जो कुत्ता बैठा है उसके प्राणों में भी वही है। वह तो सब तरफ है, लेकिन हम सोए हुए हैं। उसका कहीं स्पर्श नहीं हो पाता है। भीतर जितनी सजगता होगी उतनी सेंसिटीविटी, उतनी संवेदनशीलता विकसित होगी। उतना ही उसकी पगध्वनियां सुनाई पड़ने लगेंगी। उसके स्वर सुनाई पड़ने लगेंगे। उसका संगीत अनुभव में आने लगेगा, उसका प्रकाश दिखाई पड़ने लगेगा। वह सब तरफ स्पर्श होने लगेगा। कहीं आएगा नहीं कि बांसुरी बजाता हुआ आपके सामने खड़ा हो जाएगा, या धनुष बाण लिए रामचंद्र आपके सामने आ जाएंगे। नहीं, इस रूप में नहीं परमात्मा आ जाएगा। परमात्मा तो सब रूपों में मौजूद है। उसे अनुभव करने के लिए जो रिसेप्टिविटी, जो ग्राहकता चाहिए, वह सजगता हमारे भीतर नहीं है।

ध्यान का अर्थ एकाग्रता नहीं है, ध्यान का अर्थ है सजगता। एकाग्र आदमी तो मूर्च्छित हो जाता है। एकाग्रता का अर्थ होता है सारी चीजों को छोड़ कर एक चीज पर पूरे चित्त को टिका दो, सारी चीजों की तरफ आंखें बंद कर लो, एक चीज पर चित्त को पूरी तरह कनसनट्रेट कर दो। कनसनट्रेशन एकाग्रता, एक तरह का

तनाव, एक तरह का टेंशन है। एक तरह की जबरदस्ती है। और जबरदस्ती जो भी आदमी करेगा, उसके दो परिणाम होंगे। एक तो जबरदस्ती सफल न होगी क्योंकि चित्त से जिस चीज को हम दूर करना चाहेंगे, वही चीज वापस लौट आएगी। चित्त के नियम हैं। जिस चीज को निषेध करिएगा, वही आमंत्रण हो जाएगा। अगर यहां दरवाजे पर हम लिख दें कि भीतर झांकना मना है तो फिर यहां से एक भी इतना समर्थ आदमी नहीं निकल सकता जो बिना भीतर झांके निकल जाए। और अगर कोई निकल भी गए, कोई त्यागी संयमी अगर निकल भी गए तो लौट-लौट कर उन्हें याद आती रहेगी कि झांककर देख क्यों न लिया! रात सपने में वे देखेंगे कि झांक कर देख रहे हैं। निषेध आकर्षण बन जाता है चित्त के लिए। जिन चीजों से हम कहते हैं, हट जाओ, चित्त वहां जाना चाहता है, वह जानना चाहता है, क्यों हटा रहे हैं आप? जिज्ञासा गहरी हो जाती है।

तिब्बत में एक फकीर था, मिलारेपा। एक व्यक्ति ने आकर उससे कहाः मैं कुछ सिद्ध करना चाहता हूं। मुझे कोई मंत्र दे दें। उसने बहुत समझाया कि मेरे पास कोई मंत्र नहीं है। बहुत समझाया कि मंत्र हो भी किसी के पास तो व्यर्थ है। मंत्र कहीं ले जाता नहीं है। नासमझ लेते हैं मंत्र, इसलिए जो बहुत चालाक हैं वे देने लगते हैं। कोई कहीं ले जाता नहीं। जो बहुत कनिंग हमारे मनुष्य के बीच में बहुत चालाक हैं वे मंत्र देने लगते हैं। क्योंकि नासमझ लेने के लिए उत्सुक होते हैं कि शायद कुछ हो जाए। उस फकीर ने कहाः नहीं कुछ होगा मंत्र-वंत्र से। कभी कुछ नहीं हुआ है। सब मंत्र मनुष्यों की ईजाद हैं इसलिए परमात्मा तक ले जाने के लिए मार्ग नहीं बन सकते। लेकिन वह नहीं मानता था।

जब नहीं माना तो उस फकीर ने पिंड छुड़ाने के लिए कागज पर एक मंत्र लिख कर दे दिया। और कहाः इसे ले जाओ और रात में स्नान करके पांच बार पढ़ लेना। तुम जो चाहते हो, वह पूरा हो जाएगा। वह आदमी भागा। धन्यवाद देना भी भूल गया कि फकीर को धन्यवाद भी दे दूं। जिस बात से प्रयोजन था वह पूरा हो गया। धन्यवाद कौन देता है। वह सीढ़ियां उतर भी नहीं पाया था कि फकीर ने कहा कि मित्र, एक बात बताना मैं भूल गया। मंत्र तो पढ़ना लेकिन बंदर का स्मरण न आए। उस आदमी ने कहाः बेफिकर रहिए, जिंदगी बीत गई, आज तक बंदर का स्मरण नहीं आया। अब क्यों आएगा? लेकिन मंदिर की पूरी सीढ़ियां भी न उतर पाया था कि बंदर का स्मरण आना शुरू हो गया। भीतर बंदर सिर हिलाने लगे। आंख बंद करता था तो बंदर दिखाई पड़ने लगे। बहुत घबड़ाया। जैसे-जैसे घर के करीब पहुंचने लगा, बंदरों की भीड़ बढ़ने लगी। आंख बंद करता तो वह कतार बांधकर बंदर हंस रहे थे, उसको चिढ़ा रहे थे। वह तो बहुत घबड़ाया, यह तो बहुत मुसीबत हो गई। और इन बंदरों से मेरा कभी कोई संबंध नहीं रहा। आज यह क्या हो गया? घर जाकर स्मरण करता था, भगवान का नाम लेता था, सिर झुकाता था, आंख बंद करता था, सब उपाय करता था। कोई फर्कनहीं, बंदर बढ़ते चले गए। आधी रात होते-होते उस आदमी के मन में बंदर ही बंदर थे। वहां और कोई भी नहीं था। मंत्र पढ़ना मुश्किल हो गया। सुबह तक तो वह आदमी थक मरा। उसने जाकर मंत्र वापस कर दिया साधु को और कहा कि महाराज, अगर किसी और को दें, तो कृपा करके शर्त मत बनाना। यह कंडीशन मत बताना। मुझे जिंदगी में बंदर याद न आए थे। आज रात भर में परेशान हो गया। और अब इस जन्म में इस मंत्र के सिद्ध होने की कोई संभावना न रही। अब अगले जन्म में देखेंगे। लेकिन एक ही शर्त रखना, अगले जन्म में यह मत बताना कि बंदर का स्मरण करना निषिद्ध है।

जिन चीजों को हम चित्त से जबरदस्ती हटाना चाहते हैं वे आमंत्रित हो जाती हैं। चित्त का सहज नियम है। और जिस चीज पर हम चित्त को जबरदस्ती लगाना चाहते हैं वह चित्त से उतर-उतर जाती है, यह दूसरा नियम है। यह दोनों एक ही नियम के, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जिस चीज पर आप जबरदस्ती लगाना चाहते हैं उस चीज से चित्त भागेगा और जिस चीज पर आप जबरदस्ती हटाना चाहते हैं, उस पर चित्त आएगा। और इस उधेड़बुन में जो पड़ जाता है, इस पागलपन में जो पड़ जाता है वह केवल थक जाता है और नष्ट हो जाता है और कहीं पहुंचता नहीं। इसलिए मैं किसी चीज पर चित्त को लगाने को नहीं कह रहा हूं और न किसी चीज से चित्त को हटाने को कह रहा हूं। मैं तो यह कह रहा हूं, जो भी करें, जिंदगी जो चारों तरफ है जो जिंदगी

बही जा रही चारों तरफ उस पूरी जिंदगी के प्रति होश से जागे हुए रहें। न किसी को हटाएं और न किसी को बुलाएं।

यहां मैं बोल रहा हूं, साथ में चिड़ियां आवाज कर रही हैं, पंखों की आवाज हो रही है। कोई बच्चा रोएगा, सड़क से कोई गाड़ी निकलेगी, आवाज होगी। ये सारी आवाजें हो रही हैं। जागरुक रहें सारी आवाजों के प्रति एक साथ, किसी को चुनें नहीं कि मैं इसी आवाज पर मन को लगाऊंगा और उस आवाज को नहीं सुनूंगा। जो हो रहा है जिंदगी में प्रतिक्षण, मूमेंट टू मूमेंट जो हो रहा है उसके प्रति पूरी तरह होश से भरे रहें। न तो किसी को हटाएं और न किसी को बुलाएं। बाहर के जगत के प्रति भी यही, और मन में भी जो चलता हो, कोई विचार चलते हों, उन विचारों में से भी छांटे न; कि यह अच्छा विचार है इसको मैं रोकूंगा और यह बुरा विचार है इसे मैं हटाऊंगा। जिसने बुरे विचार को हटाया उसकी जिंदगी मुश्किल में पड़ जाएगी। बुरा विचार उसे लौट-लौट कर आने लगेगा।

साधु, संन्यासी और सज्जन इतने परेशान रहते हैं कि जिसका कोई हिसाब नहीं है। बुरे विचारों को जितना हटाते हैं, पाते हैं, बुरे विचार उतने ही चले आ रहे हैं। रोग की तरह बुरे विचार पकड़ लेते हैं हटाने वाले को। और अच्छे विचार को जितना पकड़ता है लगता है कि वह खिसक-खिसक जाता है, हाथ से निकल-निकल जाता है; जैसे कोई पानी पर मुट्ठी बांधता हो। अच्छे और बुरे विचार के बीच कोई चुनाव न करे। बुरे विचार के प्रति भी जागे रहें और अच्छे विचार के प्रति भी जागे रहें। ध्यान रखें जागे हुए होने का, कि मैं होश से भरा रहूं भीतर। मेरे चित्त में कोई भी चीज बेहोशी में न निकलने पाए। कोई भी आए, मैं जाग कर उसे देखूं।। जैसे कोई घर पर अपने पहरेदार बिठा देता है। वह पहरेदार देखता रहता है, कौन गया, कौन आया। ऐसे अपने चित्त को पहरेदार बनाएं, एक वाचमैन बनाएं।

और जैसे-जैसे चित्त इस पहरेदारी में समर्थ होता जाएगा, आप हैरान हो जाएंगे, न तो अच्छे विचार आएंगे और न बुरे विचार आएंगे। दोनों विदा हो जाएंगे क्योंकि बुरे विचार इसलिए आते थे कि आप उनको हटाते थे। अच्छे विचार इसलिए नहीं रुकते थे कि उनको आप रोकते थे। लेकिन जब आपने दोनों बातें छोड़ दीं और मन के प्रति कोई भी भाव न रखा अच्छे और बुरे का, सिर्फ साक्षी रह गए, सिर्फ विटनेस रह गए, तो उनके आने और ठहरने का कोई कारण न रह गया। वे अपने आप विदा हो जाएंगे। और तब जो चित्त की स्थिति बनेगी, वही धार्मिक चित्त है, वही जागा हुआ चित्त है। उस चित्त से जो क्रिया होती है वह पुण्य है। सोया हुआ आदमी कभी पुण्य कर ही नहीं सकता। उस चित्त से जो क्रिया होती है वह सेवा है। सोया हुआ आदमी सेवा कर ही नहीं सकता। अगर करेगा तो दुनिया में इतना उपद्रव पैदा करवा देगा जिसका कोई हिसाब नहीं है। सोया हुआ आदमी सेवा करने जाता है, उलटे जीवन को नुकसान पहुंचाता है।

एक चर्च के पादरी ने एक स्कूल के बच्चों को जाकर समझाया कि रोज कुछ न कुछ सेवा करनी चाहिए। कुछ न कुछ सर्विस करनी चाहिए क्योंकि सेवा के द्वारा ही आदमी परमात्मा तक पहुंचता है। उन बच्चों ने पूछाः कैसी सेवा करनी चाहिए। तो उस पादरी ने कहाः कोई आदमी नदी में डूबता हो तो उसको बचाना चाहिए। कोई आदमी सड़क पर गिर पड़े तो उसको उठाना चाहिए। किसी बूढ़े आदमी को सड़क पार करते न बनती हो तो हाथ का सहारा देकर पार करवा देना चाहिए। ये सब पुण्य कृत्य हैं। और जब मैं दुबारा सात दिन बाद आऊंगा तो तुमसे पूछूंगा कि तुमने कितनी सेवाएं कीं। सात दिन बाद वह वापस लौटा। उसने पूछाः मेरे बेटों, तुममें से कितनों ने सेवाएं कीं? तीन बच्चों ने हाथ उठाए। उसने कहाः कोई हर्जा नहीं, आज तीन बच्चों ने सेवा की है, कल और बच्चे सेवा करेंगे। मैं तो बहुत खुश हूं। मैं तुमसे पूछता हूं।। पहले बच्चे से उसने पूछा, तुमने क्या सेवा की? उस बच्चे ने खड़े होकर कहाः मैंने एक बूढ़ी औरत को सड़क पार करवाई है। उसने कहाः बहुत खुशी की बात है। हमेशा बूढ़े लोगों की सेवा करनी चाहिए। उसने दूसरे से पूछाः तुमने क्या किया? उसने कहाः मैंने भी एक बूढ़ी औरत को सड़क पार करवाई। तब उसे थोड़ा संदेह हुआ। लेकिन उसने कहाः बहुत अच्छा, तुमने भी बहुत अच्छा किया। तीसरे से पूछा, उसने कहाः मैंने भी एक बूढ़ी औरत को सड़क पार करवाई। वह थोड़ा हैरान

हुआ। उसने कहाः तुम तीनों को तीन बूढ़ी औरतें मिलीं सड़क पार करवाने को? किस दिन करवाई? उन्होंने कहाः एक ही दिन। किस समय करवाई? उन्होंने कहाः एक ही समय। उसने कहाः मैं समझा नहीं। उन तीनों ने कहाः असल बात यह है कि बूढ़ी औरत तो एक ही थी, हम तीनों ने साथ मिल कर उसको सड़क पार करवाई। कोई हर्जा नहीं, उसने कहा, यह भी ठीक है। लेकिन क्या बूढ़ी औरत को पार करवाने में तुम तीन लोगों को ताकत लगानी पड़ी है? उन तीनों ने कहाः बड़ी मुश्किल थी, वह औरत पार होना नहीं चाहती थी। बड़ी मुश्किल से हम पार करवा पाए। वह तो इनकार करती थी कि हमको पार होना ही नहीं है। वह तो बड़ी फजीहत हो गई, बड़ी मुश्किल से ताकत लगा कर हमने उसको पार करवाया।

यह सोया हुआ आदमी जो सेवा करेगा, वह ऐसी ही होगी। और दुनिया में सेवकों ने जितनी मिस्चीफ, जितना उपद्रव और परेशानी पैदा करवा दी, उतना किसी और ने पैदा नहीं करवाई। इसलिए दुनिया सेवकों से परेशान है। सोशल वर्कर, समाज सेवक बड़ी खतरनाक कौम है। ये सोए हुए लोग, ये जो भी करेंगे, उससे उपद्रव होगा। दुनिया में कितने रिफार्म चल रहे हैं पांच हजार साल से, रिफॉर्म हुआ कोई? दुनिया में कितने सुधार चल रहे हैं, कोई सुधार हुआ? दुनिया की कितनी सेवा चल रही है, क्या सेवा हो गई है? आदमी कहां है? पांच हजार साल की सेवा, पुण्य, दान सबके बाद हम कहां हैं? हम बदतर से बदतर होते जा रहे हैं। जरूर कोई बात है। सोया हुआ आदमी जो भी करेगा उससे उपद्रव पैदा होगा। और हम सारे लोग सोए हुए हैं। हम अच्छा करें, बुरा करें, सबका परिणाम बुरा होगा। इसलिए सवाल यह नहीं है कि आप क्या करें? सवाल यह है कि आप क्या करें? सवाल यह है कि आप क्या हैं! सवाल यह नहीं है कि आपका एक्शन क्या है; सवाल यह है, आपका बीइंग कैसा है? आपकी सत्ता, आपका अस्तित्व कैसा है? वह जागा हुआ है या सोया हुआ है?

महावीर से किसी ने एक बार पूछा कि आप मुनि किसे कहते हैं, साधु किसे कहते हैं? तो महावीर ने यह नहीं कहा कि जो आदमी कपड़े छोड़ कर नंगा हो जाता है उसको मैं मुनि कहता हूं। महावीर ने यह भी नहीं कहा कि जो आदमी एक ही बार भोजन करता है उसको मैं मुनि कहता हूं। महावीर ने यह भी नहीं कहा कि जो घर छोड़ कर भाग जाता है, उसको मैं मुनि कहता हूं। महावीर ने यह भी नहीं कहा जो तपश्चर्या करता है, धूप में खड़ा रहता हैं, शीर्षासन करता है उसको मैं मुनि कहता हूं। महावीर ने यह भी नहीं कहा कि जो मंदिर में पूजा करता है, शास्त्र पढ़ता है, उसे मैं मुनि कहता हूं। महावीर ने जो कहा, वह बड़ी हैरानी की बात कही। उन्होंने कहाः जो आदमी जागा हुआ है वह मुनि है और जो आदमी सोया हुआ है वह मुनि नहीं है। बहुत अजीब बात कही। जो आदमी जागा हुआ है। उन्होंने कहाः जो आदमी जागा हुआ है।। "असुत्ता मुनि"; जो नहीं सोया हुआ है, वह मुनि है। क्या मतलब है न सोए हुए होने का?

यह जो मैंने आपको कहा।। जीवन को जागे हुए जिएं। जीवन से भागने की जरूरत नहीं है, जीवन को जाग कर जीने की जरूरत है। सोए हुए जीता है एक आदमी, एक आदमी जाग कर जी सकता है। और जितने जागकर आप जीवन को जिएंगे उतना ही जीवन जीवंत होता चला जाएगा। और उसी जीवन की जीवंतता में से उसका अनुभव होगा कि परमात्मा है। परमात्मा जीवन के विरोध में कहीं नहीं बैठा हुआ है। वह जीवन के विरोध में, कहीं आकाश में परमात्मा नहीं बैठा हुआ है। परमात्मा इसी जीवन की गहराई है, इसी जीवन की डेप्थ है। इसी जीवन में जो जितना गहरा उतर जाता है वह उतना परमात्मा को अनुभव करता है। गहरा कौन उतरेगा? जो जागा है, वही गहरा उतर सकता है। और जागने के लिए कोई एकाग्रता करने की जरूरत नहीं है। बल्कि समग्र चीजों के प्रति इकट्ठे रूप से होश से भरने की जरूरत है। जो भी आप करें।। पानी पीएं तो होश से पीएं, उठें तो होश से उठें, रास्ते पर चलें तो एक-एक कदम होश से उठे।

बुद्ध एक दिन लोगों को समझाते थे, सामने ही एक आदमी बैठा था, वह अपने पैर के अंगूठे को हिला रहा था बैठा हुआ। तो बुद्ध ने उससे कहाः मित्र, यह पैर का अंगूठा क्यों हिलता है? जैसे ही बुद्ध ने कहा, पैर का

अंगूठा हिलना बंद हो गया। बुद्ध ने कहाः यह क्यों हिलता है? उस आदमी ने कहाः मुझे कुछ पता नहीं, मुझे खयाल ही नहीं है। जैसे आपने कहा, मुझे होश आया और मैंने बंद नहीं किया। मुझे होश आया और वह बंद हो गया। मैंने बंद किया नहीं। आपने कहा, अंगूठा क्यों हिलता है, मुझे होश आया और मैंने देखा कि वह बंद हो गया है। और जब तक हिलता था, मुझे तो ख्याल ही नहीं था कि अंगूठा हिल रहा है। बुद्ध ने उससे कहाः जिस तरह यह अंगूठा हिल रहा है तुम्हारा, और तुम्हें होश नहीं है इसी भांति तुम्हारा मन भी हिलता है और तुम्हें उसका पता नहीं। इसी तरह सारा तुम्हारा जीवन डावांडोल है और तुम्हें उसका पता नहीं। जैसे ही तुम्हें होश होगा, तुम पाओगे, जैसे यह अंगूठा बंद हो गया, वैसे ही होश आने पर विचार का कंपन भी बंद हो जाएगा। वैसे ही होश आने पर जीवन की सारी कंपन, सारे कंपन बंद हो जाएंगे। और फिर जो निष्कर्ष जीवन की ज्योति जगती है।। जैसे किसी घर में कोई दिया जला दे, जहां हवा के झोंके न आते हों, फिर वैसे जीवन में एक ज्योति जगती है जो निष्कर्ष होती है। उस निष्कर्ष ज्योति का नाम ही ध्यान है। उस निष्कर्ष ज्योति का नाम ही समाधि है। उस निष्कर्ष ज्योति को जो पा लेता है उसके प्रकाश में ही उसे दिखाई पड़ता है जीवन का सत्य। वह जीवन का सत्य मुक्त कर जाता है। जो जागते हैं, वे मुक्त हो जाते हैं। जो सोते हैं, वे बंधन में होते हैं।

लेकिन हम अपने सोने को तोड़ने की कोई फिक्र नहीं करते। हम सोए-सोए ही कर्मों को बदलने की फिक्र करते हैं जो बिल्कुल गलत है। एक आदमी चोरी कर रहा है, झूठ बोल रहा है, बेईमानी कर रहा है, सोया हुआ है उसको हम समझाते हैं कि बेईमानी छोड़ो, चोरी छोड़ो, असत्य बोलना छोड़ो। हो सकता है वह कोशिश करके असत्य बोलना छोड़ दे लेकिन उसकी नींद उससे टूटेगी नहीं। और स्मरण रखिए, जो आदमी असत्य बोलता था, अगर वह सत्य भी बोलेगा तो उसका सत्य बोलना भी बहुत खतरनाक होगा। वह ऐसे मौकों पर सत्य बोलेगा कि किसी की जान न चली जाए। सोया हुआ आदमी है। वह असत्य बोलता था, असत्य खतरनाक था। वह सत्य बोलेगा सत्य खतरनाक होगा। सोया हुआ आदमी बेईमानी छोड़ देगा, ईमानदार हो जाएगा, उसकी ईमानदारी खतरनाक हो जाएगी। वह अपनी ईमानदारी से भी अपने अहंकार की पूर्ति करने लगेगा और ढिंढोरा पीटने लगेगा, मैं ईमानदार हूं और हरेक की जान खाने लगेगा। और वह किताब लिखने लगेगा कि बेईमानों को नरक दिया जाए और नरक में उनको कहाड़ों में तेल के डाला जाएगा और चढ़ाया जाएगा। तो वह करेगा, क्योंकि वह बदला लेगा आपसे किमैं ईमानदार होकर कष्ट झेल रहा हूं तो तुम बेईमानों को मैं नरक में कष्ट दिलवाऊंगा। वह बदला लेगा आपसे। वह छोड़ेगा नहीं आपको। अपने चित्त में कल्पना करेगा कि सबको नरक में डाला हुआ है, सब नरक में सताए जा रहे हैं।

नरक की कल्पना कोई भले लोगों ने की होगी? कोई अच्छा आदमी नरक की कल्पना कर सकता था? कोई ऐसा आदमी जिसके हृदय में करुणा और दया हो, नरक की कल्पना कर सकता था? ये वे ही दुष्ट होंगे जो सोए-सोए ईमानदार बन गए होंगे और सच बोलने लगे होंगे और मंदिर जाने लगे होंगे, ये वे ही दुष्ट होंगे। और आपको पता है, दुनिया की हर कौमें अलग-अलग ढंग से नरक की कल्पना करती हैं। क्यों? क्योंकि जो चीज हिंदुस्तान में कष्ट की है वह तिब्बत में कष्ट की नहीं है। तिब्बत के नरक का आपको पता है? तिब्बत के नरक में एकदम ठंडी बर्फ जमी हुई है। क्योंकि तिब्बत के लोग ठंडी बर्फ से परेशान हैं। तो तिब्बत में जब किसी ने सोचा होगा कि किसी को परेशान करना है तो क्या किया जाए? तो उसने नरक में बर्फ ही बर्फ जमवा दी, जो कभी पिघलती नहीं। तो जब तिब्बती आदमी नरक में जाएगा तो बर्फ में सड़ेगा। लेकिन हिंदुस्तान के नरक में बर्फ बिल्कुल नहीं मिलती। अगर मिल जाए तो मजा ही आ जाए। वहां तो आग ही आग जल रही है क्योंकि हम आग से परेशान हैं। धूप से परेशान हैं, गर्मी से परेशान हैं। तो हमारे यहां के जो दुष्ट प्रकृति के लोग हैं उन्होंने आग का इंतजाम कर दिया है पूरा का पूरा कि वहां आग ही आग जल रही है, वहां सड़ाए जाओगे, जलाए जाओगे, आग में जलाए जाओगे।

और जिन लोगों ने ये बातें लिखी होंगी, उनको बड़ा रस आया होगा, नहीं तो लिखते क्यों? बड़ा आनंद लिया होगा। सड़ाने, गलाने, जलाने में उन्हें सुख आया होगा। ये वे ही लोग हैं जो सोए-सोए नैतिक बन गए हैं, भले बन गए हैं, धार्मिक बन गए हैं। दुनिया में सोए लोगों ने नुकसान पहुंचाया है। और ऐसे सोए लोगों ने और भी नुकसान पहुंचाया है, जो सोए-सोए ही नैतिक और धार्मिक बन जाते हैं। सवाल एक ही है कि भीतर चेतना निद्रा से जागरण में आनी चाहिए। और जाग्रत व्यक्ति जिस धर्म को जन्म देगा वह बहुत दूसरा होगा। वह हिंदू मुसलमान वाला धर्म नहीं हो सकता। यह कोई धर्म है? वह जैन ईसाई वाला धर्म नहीं हो सकता। यह कोई धर्म है? जो आदमी को तोड़ता है वह धर्म नहीं हो सकता। जो आदमी को जोड़ेगा, वही धर्म हो सकता है।

अभी तक जाग्रत मनुष्य का धर्म पैदा नहीं हो सका। अब तक सोए हुए आदमियों के धर्म हैं इसलिए धर्म भी हत्या के अड्डे बन गए हैं। यही तो मैं आपसे कह रहा हूं कि सोया हुआ आदमी जो कुछ करेगा, उपद्रव हो जाएगा। बनाता मंदिर है, बन जाता है हत्या का अड्डा। बनाता है मस्जिद, बन जाता है उपद्रव का केंद्र। बड़ी अजीब बात है। सोया हुआ आदमी है बीच में। वह सोया हुआ आदमी जो भी करता है, उससे उपद्रव हो जाता है। कितने लोग नहीं मारे, कितने लोगों की हत्या नहीं की धार्मिक लोगों ने! और आज उनको उकसा दो तो वे अपनी गीता, कुरान छोड़कर आज आग लेकर निकलने लग जाएंगे कि चलो मंदिर जलाओ। मस्जिद जलाओ, मूर्ति तोड़ो, आदमी की हत्या करो। आज तक धार्मिक लोगों ने जितनी हत्या की है उतनी नास्तिकों ने तो कभी नहीं की। नास्तिकों के ऊपर हत्या का कोई मामला नहीं है पांच हजार साल के इतिहास में। नास्तिकों ने किसी मकान में आग नहीं लगाई, किसी मंदिर को नहीं जलाया, किसी मस्जिद को नहीं जलाया, किसी की हत्या नहीं की। बड़ी हैरानी की बात है। नास्तिकों के ऊपर कोई जुर्म नहीं है और आस्तिकों के ऊपर कितने जुर्म हैं।

सिर्फ अभी हिटलर ने ईसाइयत के नाम पर पंद्रह लाख यहूदी काट डाले जर्मनी में। पांच सौ आदमी रोज काटे। ईसाइयत का नाम है, यहूदियों को काटना है। पांच सौ आदमी नियमित रोज काटे और फिर भी हम कहते हैं... । और चर्च में पादरी प्रार्थना करता है हिटलर को जीतने के लिए। बाईबल रखकर प्रार्थना करता रहा कि हिटलर को जिताओ, क्योंकि हिटलर ईसाइयत को बचाएगा। कितना बड़ा काम कर रहा है ईसाइयत को बचाने के लिए, पांच सौ यहूदियों को रोज खत्म कर रहा है! ऐसा अच्छा धार्मिक आदमी, इसको जिताओ भगवान! वह पादरी प्रार्थना कर रहा है मंदिर में।

कितने लोग काटे धार्मिक लोगों ने! ये सोए हुए आदमी हैं। ये बड़े खतरनाक हैं अगर ये मंदिर बनाएंगे तो मंदिर बिल्कुल न बनेगा, वहां भी उपद्रव का अड्डा बन जाएगा। अगर चेतना जागेगी तो आप पाएंगे, न हम ईसाई हैं, न जैन हैं। आप पाएंगे आप मात्र मनुष्य हैं। और चेतना थोड़ी जागेगी तो मनुष्य भी नहीं हैं, आप मात्र प्राणी हैं। और चेतना थोड़ी जागे तो आप पाएंगे, आप प्राणी भी नहीं हैं, मात्र अस्तित्व हैं। और जब चेतना इतनी जाग जाती है और ऐसा प्रतीत होता है कि मैं अस्तित्व हूं तो वहीं परमात्मा का अनुभव शुरू होता है; उसके पहले नहीं।

जगाने की दिशा में जिसको भी यात्रा करनी हो ईश्वर की, उसे जगाने की दिशा की यात्रा करनी होगी। उसे खुद को निरंतर जागरूक करना पड़ेगा। कोई मंत्र-वंत्र पढ़ने से नहीं होगा। इतना सस्ता नुस्खा नहीं है। कोई मदारीगिरी नहीं है धर्म की आप बैठे हैं और कुछ मंत्र वगैरह पढ़ रहे हों और सोच रहे हैं कि कुछ हो जाएगा। जिंदगी को जानना, जिंदगी को जीतना और परमात्मा को अनुभव करना ऐसा बच्चों का खेल नहीं है कि आप बैठे हैं किताब लिए और रट रहे हैं और सोच रहे हैं कि परीक्षा पास हो जाएंगे। धर्म कोई परीक्षा नहीं है किताब की। और न ही धर्म कोई ऐसी चीज है कि आप माला वगैरह फेरें और पार हो जाएं। कभी सोचते भी नहीं, कितनी चाइल्डिश, कितनी बचकानी बातें हैं कि आप एक चार आने की माला ले आए और फेरने लगे और सोचने लगे कि धार्मिक हो जाएंगे। धार्मिक होना इतनी सस्ती बात नहीं है। जीवन में जो श्रेष्ठतम है, जीवन में जो महानतम है, जीवन में जो गहरी से गहरी बात है वही धर्म है। उस गहरी से गहरी बात के लिए उतना ही जीवन में श्रम,

साधना, उतना ही जीवन को जगाने का प्रयास, जीवन को जगाने का संकल्प जरूरी है। लेकिन एक बात निश्चित है कि जो लोग श्रम करते हैं, संकल्प करते हैं, साधना करते हैं वे परमात्मा से कभी वंचित नहीं रहते हैं। जो यात्रा करते हैं, वे जरूर पहुंच जाते हैं। लेकिन जो बैठे माला फेरते रहें, उनके पहुंचने की कोई संभावना नहीं है। वे अपने को भुला रहे हैं, वे अपने को भरमा रहे हैं, वे किसी भांति अपने को इनटाक्स्किंट कर रहे हैं। किसी भांति भूलकर जिंदगी को बिता रहे हैं।

जीवन है जागरण में, प्रभु भी है जागरण में। जो जागरण की यात्रा करता है वह परमात्मा की यात्रा करता है।

और बहुत से प्रश्न रह गए। प्रश्न तो रह ही जाएंगे। जैसे वृक्षों में पत्ते लगते हैं, ऐसे मनुष्य के चित्त में।। अशांत चित्त में प्रश्न लगते हैं। वे तो रह ही जाएंगे। वे कोई समाप्त होनेवाले नहीं है।

बहुत से प्रश्न मेरे पास रह गए, बहुत से आपके पास रह गए होंगे जो आपने पूछे नहीं। लेकिन आप कितने ही प्रश्न पूछते जाएं।। अंतिम बात आपसे कहूंगा और चर्चा पूरी करूंगा... आप कितने ही प्रश्न पूछते जाएं, आपके प्रश्नों का अंत नहीं होगा। बल्कि जो भी उत्तर दिया जाएगा उससे और नये दस प्रश्न खड़े हो जाएंगे। प्रश्न पूछते जाने में उत्तर नहीं है। चित्त की एक ऐसी अवस्था पाने में उत्तर मिलता है जहां सब प्रश्न अपने आप गिर जाते हैं। मैं आपको उत्तर कैसे दे सकता हूं? कोई आपको उत्तर कैसे दे सकता है? और किसी का उत्तर आपके काम भी कैसे आ सकता है? प्रश्न आपका है तो उत्तर आपको अपना खोजना होगा। लेकिन सोया हुआ आदमी उत्तर कैसे खोजेगा? इसलिए वह दूसरों से पूछता फिरता है, सत्संग करता है, गुरु की तलाश करता है। ऐसे लोग भी हैं जो तीन-चार रुपए फीस लेकर गुरु भी हो जाते हैं। किन्हीं-किन्हीं की फीस ज्यादा भी होती होगी, लेकिन गुरु भी मिल जाते हैं। और सस्ता ज्ञान भी मिल जाता है। आप पूछते फिरते हैं और कोई मिल जाता है। वह कहता है, मैं आपको बताऊंगा। और आप सोचते हैं, चलो झंझट मिटी और हमें कोई जगने की जरूरत नहीं है। यह आदमी बेचारा हमें बता देगा। हम इसकी पूंछ पकड़ लें और गंगा पार हो जाएं। लेकिन कोई किसी को पकड़कर कभी पार नहीं होता है। और जो लोग यह समझाते हैं कि हमें पकड़ो और पार हो जाओ, वे जमीन पर खतरनाक से खतरनाक आदमी हैं। धर्म के जीवन में कोई गुरु नहीं होता है।

धर्म के जीवन में शिष्य तो होते हैं, लेकिन गुरु कोई नहीं होता। धर्म के जीवन में सीखने वाले लोग तो होते हैं लेकिन सिखाने वाला कोई भी नहीं होता। पूरा जीवन सिखाने वाला है। आंख खोलें और देखें तो सारा जीवन सिखा रहा है परमात्मा का। सारा जीवन खबर दे रहा है परमात्मा की, चारों तरफ से उसकी खबर आ रही है। चारों तरफ वह मौजूद है, उसका संदेश आ रहा है। लेकिन हम उसकी कोई फिकर नहीं करते। हम कहते हैं, हम फलां गुरु के पास जा रहे हैं, उससे पूछने जा रहे हैं, वहां वह बता देगा। कोई किसी को बता नहीं सकता।

मैं भी आपके प्रश्नों के उत्तर नहीं दे सकता हूं। और जो उत्तर मैंने दिए हैं, अंत में निवेदन करूंगा, तीन दिनों की इस चर्चा के बाद मेरे उत्तरों को आप अपने उत्तर मत समझ लेना। मैंने जो कहा है उस पर विश्वास मत कर लेना कि वह सत्य है। जो उसका विश्वास कर लेगा, उसकी अपनी खोज बंद हो जाएगी। मैंने जो कहा है, उस पर विचार करना, उस पर चिंतन करना, उस पर तर्क करना, उस पर विवाद करना, उस पर सोचना और समझना, पूरी कोशिश करना उसको परखने की। और अगर इस सारी परख, खोज, चिंतन और विचार के बाद कोई चीज उसमें से मिल जाए जो आपको लगे कि सत्य है तो इतनी खोज और विचार के बाद वह आपकी हो जाएगी, वह मेरी नहीं रह जाएगी। और जो सत्य अपना हो जाता है वह जरूर जीवन को मुक्त करता है।

तीन दिन तक मेरी बातों को अत्यंत शांति और प्रेम से सुना।। ऐसी बातों को भी, जिनने आपके मन को अशांत किया होगा; ऐसी बातों को भी जिनसे आपके मन की कई प्रतिमाएं टूटी होंगी, धक्का लगा होगा; ऐसी बातों को जिनको आप हमेशा से ठीक समझते रहे थे, उनको चोट लगी होगी तो आपको पीड़ा हुई होगी, आपको बेचैनी हुई होगी। लेकिन मैं उस सब बेचैनी और पीड़ा के लिए क्षमा नहीं मांगूंगा। मैं तो चाहता हूं कि आपको

बेचैनी हो जाए, आपका चित्त अशांत हो जाए, आप परेशान हो जाएं। क्योंकि यह कौम कोई हजारों साल से सो गई है और परेशान होना ही बंद कर दिया है। और जो कौम परेशान होना ही बंद हो जाती है जिसके चित्त पर किसी चीज की पीड़ा ही पैदा नहीं होती वह जड़ हो जाती है और मृत हो जाती है।

इस देश का मस्तिष्क हजारों साल से करीब-करीब डैड, मरा हुआ है। जरूरत है कुछ लोगों की जो इसके मस्तिष्क को चोट पहुंचाएं, हिलाएं, धक्के दें। शायद इन धक्कों में, चोटों में नींद टूट जाए। शायद इन चोटों में आपके भीतर चिंतन पैदा हो जाए। परमात्मा करे, आप थोड़े से परेशान हो जाएं। आप इतने परेशानी से मुक्त हो गए हैं, इस कौम का पूरा भाग्य इतना मुक्त मालूम पड़ता है परेशानी से, चिंतन से। परेशानी छोड़ दी है, दूसरों पर।। तीर्थंकरों, अवतारों पर कि तुम सोचो और किताब लिख दो और हम पढ़ेंगे और मजे से रहेंगे। हमको सोचना नहीं, हमको जीना नहीं। हम तो केवल अनुगमन करेंगे, तुम्हारे पीछे चलेंगे। इस वृत्ति ने, इस देश की प्रतिभा को एकदम नष्ट कर दिया है। इस देश का मौलिक चिंतन एकदम समाप्त हो गया है।

इसलिए मैं चाहता हूं कि चोट पहुंचे। तो जिन लोगों पर चोट पहुंची होगी वे बहुत भले लोग हैं। और जिनकी रात की नींद खराब हो जाए मेरी बातों को सुनकर वे बड़े अच्छे आदमी हैं, उनसे कुछ हो सकता है। वे कुछ सोचेंगे तो कुछ परिणाम हो सकते हैं। परमात्मा करे, आपकी नींद टूटे, यही प्रार्थना करता हूं।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

इंदौर, लायंस क्लब, दिनांक 8 मई, 1967, प्रातःकाल